"जैनमित्र" हीरकजयन्ति अंक—विषय सूची

जैनमित्र

हीरक जयन्ति अंक

वीर सं० २४८६ चैत्र सुदी २ ता० २-४-६०

सम्पादकीय वक्तव्य

हीरक जयंति अंक-निवेदन

दिगम्बर जैन प्रांतिक सभा बम्बईका मुखपत्र यह 'जैनमित्र' जो प्रथम बम्बईसे फिर ४४ वर्षोसे सूरतसे साप्ताहिक रूपमें नियमित प्रकट होता है, उसको प्रकट होते होते ६० वर्ष पूर्ण होनेपर हमने इनका 'हीरक जयंति अङ्क' प्रकट करनेकी तथा वह तैयार करके बम्बईमें होनेवाले इस सभाके हीरक जयन्ती उत्सवके समय उसका उद्घाटन करानेकी जो योजना प्रकट की थी उसका समय आ पहुंचा है और वह ऐतिहासिक अङ्क तैयार होकर 'जैनमित्र' के पाठकोंके समक्ष उपस्थित हो रहा है।

इस हीरक जयन्ति अङ्कके लिए हमने ६० लेख ६० कविताएं व ६० विज्ञापन लेनेकी सूचना प्रकट की थी, जिस परसे लेख, कविता तो बहुत आये तथा विज्ञापन भी ठीकर आये जो प्रकट कर रहे हैं।

यद्यपि हमने प्रथम १६० पृष्ठोंका पुस्तकाकार विशेष अङ्क निकालनेका विचार किया था जो बदल कर २०० पृष्ठोंका आयोजन करना पड़ा और अंतमें कुल २२२ पृष्ठका यह अङ्क हो गया है तौ भी कई लेख व कवितायें छपनेसे रह गये हैं और श्रद्धाञ्जलियां करीब १००-१२५ आने पर वे सब स्थानाभावसे प्रकट न कर कुछ प्रकट करके शेष नाम ही प्रकट कर रहे हैं इसका हमें दुःख हो रहा है।

इस अङ्कमें लेख व कविताएं कुल करीब १४८ हैं व श्रद्धाञ्जलियां अलग हैं तथा विज्ञापन ३३ पेईज हैं। एक लेख लिखनेमें तथा एक कविता तैयार करनेमें लेखक या कविको कितना परिश्रम करना पड़ता है यह हम जानते हैं अतः जिनर लेखकों व कवियोंने अपना समय देकर अपनीर रचनाएं इस हीरक जयंति अङ्कके लिये सेवाभावसे भेजनेकी कृपा की है व 'जैनमित्र' के प्रति जो अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि प्रकट की है उन सबका हम हार्दिक उपकार मानते हैं। तथा कुछ लेख व कविताएँ छपनेसे रह गये हैं वे अब तो 'जैनमित्र' के आगामी अङ्कोंमें प्रकट करेंगे।

'जैनमित्र' ने ६० वर्षोंमें अपने पाठकोंको क्या२ दिया यह तो समाजके सामने है और सब लेखकोंने व कवियोंने तथा श्रद्धाञ्जलि भेजनेवाले महानुभावोंने 'मित्र' की सेवाके सम्बन्धमें भूतपूर्व सम्पादक द्वय और हमारे सम्बन्धसे बहुत कुछ लिखा है उन सबके हम ऋणी है।

हम इस विषयमें विस्तृत न लिखकर इतना ही लिखते हैं कि 'जैनमित्र' की ग्राहक संख्या अच्छी न होती तो हम 'मित्र' की इतनी सेवा नहीं कर सकते अतः 'मित्र' के सुज्ञ ग्राहकोंका भी हम आभार मानते हैं।

इस विशेषांकके मुखपृष्ठ पर जो चित्र है वह एक ज्ञानेच्छु व्यक्ति 'मित्र' द्वारा ज्ञानका पान कर रहा है उसकी चारों ओर ६० वर्षके ६० चरणोंका दृश्य रखा गया है तथा भीतर पृष्ठ १०५ पर 'जैनमित्र'ने अपने ६० वर्षोंमें जो करीब ६० छोटे बड़े ग्रन्थ जो करीब (१५०) के होंगे उनका एक दृश्य रखा है उसको देखकर पाठकोंको मालूम होगा कि 'मित्र' का एक ग्राहक अपने यहां 'मित्र' के कारण

ग्रन्थोंको एक बास्केटमें रखता जाता था तो वह बास्केट भी भर गई व इधर उधर ग्रन्थ पड़ गये तथा अंतिम उपहार ग्रन्थ-"श्रीपाल चरित्र" अपने हाथमें है ऐसा दीख रहा है।

यदि 'जैनमित्र' के ६० वर्षोंकी ६० फाईलें तथा ६० उपहार ग्रन्थ इकट्ठे रखे जांय तो एक दो अलमारी भर जांय इतना साहित्य 'मित्र' ने दिया है। 'मित्र' के ऐसे ग्राहक भी हैं जो 'मित्र' की फाईल बराबर रखते हैं। यह इससे मालूम होता है कि हमारे यहां कभी २ पत्र आते हैं कि हमारी फाईलमें अमुक अङ्क कम हैं अतः भेजनेकी कृपा कीजिये जो हम हो तो भेज देते हैं।

अन्तमें हम पुनः सभी लेखक कविगण तथा ग्राहकोंका आभार मान यह निवेदन पूर्ण करते हैं। और ऐसी भावना भाते हैं कि 'मित्र' १०० वर्षका हो जावें व इसका शताब्दि उत्सव भी हों।

× × ×

श्री० बाबू छोटेलालजी जैन सरावगी रईस, कलकत्ता

दिगम्बर जैन प्रां० सभा बम्बईके हीरक जयन्ती उत्सव तथा 'जैनमित्र'के हीरक जयन्ति अंकका उद्घाटन जिन महान् उद्योगी महानुभावके शुभ हस्तसे हो रहा है उनका संक्षिप्त परिचय इसप्रकार है—

श्री० बाबू छोटेलालजी जैन सरावगी कलकत्ता निवासी हैं। व कलकत्ताके बड़े व्यापारी व खण्डेलवाल दि० जैन अगुओंमें मुख्य अगुए है। अग्रवाल

आपको २ मई १९५४ को मदरासमें थिरुथकका देवर कुम्बिया मन्दरम्के सदस्योंकी ओरसे अंग्रेजीमें तथा ता० ११-१०-५८ को कलकत्तेके गनी ट्रेड्स ऐसोशियेशनकी ओरसे जो अभिनन्दन-पत्र दिये गये थे उनको पढ़नेसे मालूम होता है कि आप प्राचीन जैन साहित्य व पुरातत्वके महान् खोजकर्ता, बड़े दानी व समाज-सेवक भी हैं।

वीर शासन संघ कलकत्ता, स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस, जैन बालाविश्राम आरा, वीरसेवा मन्दिर देहली आदिमें आपकी सेवा व दान अपूर्व है।

कलकत्तामें ऑल इन्डिया जैन पोलीटिकल कोन्फरंस तथा वीर शासन जयन्ती उत्सवके आप अग्रगण्य नेता थे। बंगालमें नौवाखालीमें जो सेवाका कार्य महात्मा गांधीजीके साथ आपने किया था वह आज भी याद आता है।

दक्षिण भारतमें तामिल जैनी बहुत बसते हैं वे बहुत गरीब हैं उनके विद्यार्थियोंको शिक्षादान करनेको आपने उत्तर भारतमें एक ट्रस्ट स्थापित करके तामिलके जैन विद्यार्थियोंको सहायता पहुंचाई। जिससे आशा होती है कि तामिल प्रांत जहांसे आचार्य समन्तभद्र, आचार्य कुन्दकुन्द, आ० अकलंक व थिरथकका देवर जैसे महापुरुष हो गये हैं वैसे अब भी तैयार हों।

बाबू छोटेलालजी साहबने बहुत भ्रमण करके जैन पुरातत्वकी बहुत खोज की है जिनके फोटो व फिल्म आपके पास हैं व जो आप बड़ी दिलचस्पीसे जगहर बताते हैं।

बाबूजी 'जैनमित्र'के महान् प्रेमी, महान् प्रशंसक व महान् सेवी हैं।

'जैनमित्र'के आपके एक लेखपर आपको दो तीनवार बेलगाम व अथनी जाना पड़ा था लेकिन उसमें आप हमारे साथर सफल हुये थे। सारांश कि आप दि० जैन समाजके महान सेवक हैं व ऐसे महान व्यक्ति हमें 'जैनमित्र' हीरक जयन्ति अङ्कके उद्घाटनार्थ प्राप्त हुये हैं।

शोक— सिवनीमें ता० २५ मार्चको श्री० सिं० कुंवरसेनजी परवार-दिवाकरका ८७ वर्षकी आयुमें शांतिसे स्वर्गवास हो गया है।

—: आग्रहपूर्वक निवेदन :—

"जैनमित्र" के पाठकोंसे हमारा आग्रहपूर्वक निवेदन है कि वे समय निकालकर यह हीरक अँक अक्षरशः पढ़कर हमारे व लेखकोंके परिश्रमको सफल करें। —सम्पादक।

‘जैनमित्र’ तुम धन्य !

[रच०—कल्याणकुमार जैन ‘शशि’, रामपुर]

‘जैनमित्र’ तुम धन्य, रखा तुमने समाजका मान !
नई प्रगतिसे कर समाजमें, नव जीवन संचार !
खड़े रहे कर्मठ प्रहरीसे, तुम समाजके द्वार !
बढ़नेवाले दुष्ट दर्गोको, दी सदैव ललकार !
जैन जातिके शुभ सुपनोंका, किया सदा साकार ॥
सङ्कट क्षणमें बढ़े सदा तुम, उन्नत छाती तान !
जैनमित्र तुम धन्य रखा, तुमने समाजका मान !
जो समाजके हेतु किया तुमने अविश्रान्त प्रयास !
साठ वर्ष तकका अति उज्वल, है उसका इतिहास ॥
अगणित नित्य नये संकटमें, हुये कभी न निराश !
भरा निरन्तर ही समाजमें, नया आत्म विश्वास !
सन्मुख रक्खी सदा तुमने, कर्तव्योंकी पहिचान !
जैनमित्र तुम धन्य, रखा तुमने समाजका मान !

जैनमित्र जनमात्रमें, मैत्री-मंत्र-जनित्र !

(र०-‘सुधेश’ जैन-नागोद)

(प्रस्तुत रचनामें ‘जैनमित्र’ शब्दमें प्रयुक्त ‘ज’ ‘न’ ‘म’ तथा ‘त्र’ केवल इन चार वर्णोंका ही प्रयोग किया गया है)

‘जैनमित्र’ जन मात्रमें, मैत्री-मन्त्र जनित्र ।
निज निज मनमें जैन जन, माने निज निज मित्र ॥
‘जैनमित्र’ में मज्जना, जमुना मज्जन जान ।
जैन नैन मज्जें, मजा मजमूनोंमें मान ॥
‘जैनमित्र’ जनमा, जमा जैन-जनोंमें नाम ।
निजी मित्रजनु जान निज, जैनी माने माम ॥
‘जैनमित्र’ मजमूनमें, जमें जैन-जन जैन ।
जमे मननमें मन, मजा-जाने नेमी जैन ॥
जैन जमानेमें जमे, ‘मित्र’ मांजेमा मान ।
जैनी मानें जान मन, नमें न निज निमान ॥

★ जैनमित्रका सन्देश ★

[र०-पं० गुणभद्र जैन कविरत्न अगास]

पा अलभ्य मानव भव जगमें,
कभी न कीजे बैर-विरोध;
मीठे वचन बोलिये मुखसे,
मिटे अन्यका जिससे क्रोध;
राग द्वेषकी कीचड़में पड़,
नहीं भूलिये निज कर्तव्य;
उचित समय पर पर हितार्थ भी,
सतत कीजिये व्यय निज द्रव्य ॥१॥
आत्म तुल्य गण जीव मात्रको,
निःसंशय कीजे उपकार;
निराधार, आश्रय विहीनके,
लिये खोलिये अपना द्वार;
संकुचिताको छोड़ चित्तसे,
जीवनमें तुम बनो उदार;
इस लम्बी चौडी पृथ्वीको,
मानों तुम अपना परिवार ॥२॥
छिपा न रखो कभी सत्यको,
उसको लिये बनों नित वीर;
द्रवित हृदय हो करके सत्वर,
दूर कीजिये सबकी पीर;
वृद्धि कीजिये मित्र भावकी,
रखिये सब पर करुणा भाव;
तजिये नहीं कभी समताको,
दूर कीजिये मोह प्रभाव ॥३॥
रूढ़िवादमें कभी न हित है,
सदा समझिये आप स्वधर्म;
उतर धर्मके अन्त-स्तलमें,
पकड़ लीजिये सुखमय मर्म;
पक्षपातका मुख न देखिये,
जीवन हो निर्भयता पूर्ण;
यथा शक्ति ऐसा प्रयत्न हो,
जिससे हो कटमलता चूर्ण ॥४॥

प्रतिदिन कीजे आतम तत्त्वका,
अपने मनमें सूक्ष्म विचार;
और सोचिये कैसे होगा,
सुखमय यह सारा संसार;
बढ़े चलो तुम उन्नति पथमें,
जीवनकी भी ममता छोड़
तुम मनुष्यताको ही समझो,
वित्त अपरिमित लाख करोड़ ॥५॥

—०- ०—

जैनमित्र है मित्र पुराना

जैन जातिको सदा जगाया,
नित नूतन संदेश सुनाकर।
आपसमें दृढ़ प्रेम बढ़ाया,
द्वेष भावना सदा हटाकर॥
आत्मोन्नतिके मार्ग दिखाये,
व्यवहारिक उपदेश सुनाये।
पक्षपातके पचड़ेमे भी, कापड़ियाजी—
कभी न आये॥
वृद्ध हुवा है 'जैनमित्र',
इकसठ बरसोंका मित्र पुराना।
फिर भी नौजवान है अब भी,
गाता रहता मधुर तराना॥
सोते हुवे जैन जगको यह,
अब भी सदा जगाता रहता।
वीर प्रभूके सन्देशोंकी,
निशदिन सदा लगाता रहता॥
मूक भावसे अविचल सेवा—
—करना इसका कार्य पुराना।
कभी न हिम्मत हारी इसने,
कभी न इसने रुकना जाना॥
आवो मिलकर सभी "मित्र" को,
मंजुल हीरक हार चढ़ायें।
चिरजीवी हो पत्र हमारा,
यह मंगल संदेश सुनायें॥

—धन्नीराम जैन 'चंद्र', शिवपुरी।

जैनमित्रके प्रति········

(रचयिता-पं० भुवनेन्द्रकुमार शास्त्री-खुरई)

हे जैनमित्र! तुम सर्व समाजके हो—
सर्वत्र और सतत प्रिय पात्र भारी।
है हेतु मात्र इसमें हितकी शुभेच्छा॥
जैनत्वके प्रति बनी रहती तुम्हारी॥ १॥
मैं मानता यह कि जो तुम कार्य आज।
प्रत्येक वर्ष करके दिखला रहे हो—
कर्त्तव्य तत्परतया वह है प्रसिद्ध।
सन्मार्गका पथ प्रशस्त बना रहे हो॥ २॥
उत्साह भाव भरते निज बन्धुओंमें।
शिक्षा प्रचार करने तुम सर्वदा ही।
विस्तारपूर्वक समक्ष दिखा दिया है—
आदर्श आज अपने ऋषिवर्गका भी॥ ३॥
सन्देश वीर-जिनका शुभ था अहिंसा।
मैत्री परस्पर रही जगके जनोंमे॥
नारा बुलंद उसका तुमने किया है।
सर्वत्र भारत धरा पर सज्जनोंमे॥ ४॥
अज्ञान पीड़ित सभी जनमें निराशा—
का भाव था भर रहा दिलमें समाया।
नानाप्रथा-विविध रंग यहां दिखातीं—
सद्-ज्ञान दीपक दिखा उनको भगाया॥ ५॥
संस्कार भी जम रहे घरमें बुरे थे।
औ' फूट भी कर रही सबको अनेक॥
हे जैनमित्र! तुमने करके प्रयत्न—
प्रेमी परस्पर किए सब शीघ्र एक॥ ६॥
इत्यादि एक नहिं कार्य किए अनेक।
प्यारे अहिंसक सुधर्म हितार्थ मित्र॥
मेरी सदैव शुभ हार्दिक कामना है—
"दीर्घायु होकर करो सबको पवित्र॥ ७॥
आवे अनेक शुभ मंगलदायिनी ही।
ऐसी सुकीर्त्तियुत हीरक सज्जयन्ती॥
तेरे बड़प्पन भरे हम गीत गावें—
ऊँची रहे फहरती तव वैजयन्ती॥ ८॥

अन्तर ज्ञाननी आवश्यकता

(रचनार:-कर्नल डॉ० दीनशाह पेस्तनजी घड़ियाली, मलागा, न्यूजर्सी युनाईटेड स्टेट्स अमेरिका)

सृष्टिना विशाल विस्तारमां,
पृथ्वीनी गोलाईना आकारमां;
जगतनी सर्व उत्पत्ती अन्दर,
छे कोण सर्वोत्तम बाला मन्दर?
छे कोई हस्तिमां एवो एक नर,
पामे हर भेदी वात विद्या वगर;
जाणे जे रुझाववा जीगरना घाव?
मानव तुं नजरने आगळ दोडाव—१.
× × ×
विंटेली जाणे कोण आफतनी वात,
गुजरेली समजे कोण जफानी घात;
माने कोण फेलायली हृदयनी आग,
बुजे कोण अक्कलथी आदम बेराग?
सफरमां याद आवे हरदम कोण,
नफरमां रहो छे सूजायो कोण?
मस्तकना तंतुने ताणी चलाव,
मानव तुं नजरने आगळ दोडाव—२.
× × ×
समाई कुदरत छे दरेक छेद,
मकदुर शुं मनुष्य पामे ते भेद;
भेदोने समजवा घटीन सचाई,
अवश्य छोड़वी छे माया ने भाई;
नेकीने खातर छे थवुं बरबाद,
जरुर ते करवाथी थाने आबाद;
थाय छे, माटे तुं कदम उठाव,
मानव तुं नजरने आगळ दोडाव—३.

नोट आ कविताना लेखक ८६ वर्षना अतीव वयोवृद्ध अने अमारा ५५ वर्षना जूना जाणीता अने महान् शोधक परमी मित्र छे. आजे आप अमेरिकामां हयात छे अने कर्नलनी पदवी धरावे छे. ईलेक्ट्रिक पद्धतिथी रंगनां किरणों द्वारा दरेक रोग सारा करवानुं मोटुं ट्रस्ट त्यां चलावी रह्या छे. आप जन्मथीज शाकाहारी छे अने तन्दुरस्त जीवन जीवी रह्या छे. बीजी अमेरिकन पत्नी अने ८ संतानो होवा छतां पोते मक्कम विचारना होवाथी अनेक कष्टो वेठी एकाकी जीवन हाल व्यतीत करी रह्या छे. संतानोने आपे वगर शिक्षके पोतेज भणाव्या हता, जेओ सुखी जीवन गाळी रह्यां छे. आप सूरतमां अमुक वर्षों हतां त्यारे ५३ वर्ष उपर आपेज अमने 'दिगम्बर जैन' मासिक पत्र सूरतथी चालू करवा उत्तेजित कर्या हतां (त्यारे सूरतमां आपनुं अपक्षपात प्रेस अने पत्र चालतुं हतुं) तेनुंज परिणाम ए आव्युं के कापडनो व्यापार मूकी दई 'दिगम्बर जैन' माटे अमे प्रेस काढयुं अने आ 'जैनमित्र' पाक्षिकने सूरत लावी साप्ताहिक बनावी यथाशक्ति तेनी सेवा ४४ वर्षथी अमे करी रह्या छीये अने ते 'जैनमित्र' आजे हीरक जयन्ती उजवे छे तेनुं श्रेय तो अमारा परम मित्र डॉ० घडीयालीनेज छे.

मूलचन्द किसनदास कापडिया—सम्पादक।

जैनमित्राष्टकम्

(रचयिता : पं० महेन्द्रकुमार 'आजाद'
साहित्याचार्य, किशनगढ़ ।)

१–अनुष्टुपवृत्तम

षष्ठि वर्षे समाप्ते ही, स्वागतार्थमुपस्थितः ।
कल्याणं सर्वतः भूयात्, प्रोत्थानमपि वाल्भेः ॥

२–आर्यावृत्तमम्

घोरान्धकारे खलु, जैन समाजो हि वर्तते यस्मिन् ।
तस्मिन्काले मित्र !, ज्ञान प्रकाशोदयं कृतम् ॥

३–वंसस्थवृत्तम्

सुरालये सामग देव वंशजाः ।
मनुष्यलोके मनुवर्ग पूजिताः ॥
खगालये क्रीडन-कार्य-तत्पराः,
प्ररूपयन्ति तव शुभ्रकीर्तिकम् ॥

४–उपजातिवृत्तम्

राष्ट्रस्य देशस्य समाजकार्यं, सम्पादने लोकहितार्थकार्येम् ।
सदैवतः सर्वत जात जातं, प्ररूढरूपेण सदा हि वर्तते ॥

५–मालिनीवृत्तम्

नहि नरकपदं हि विद्यतेत्वत्समीपे,
नहि कुपथ-कुजातं कार्यजातं चकास्ते ।
कथितुमुपगतामः भारते खण्ड खण्डे ।
चिर-समय सुमार्गं दीयतां मित्र ! मित्र ॥

६–वसंततिलकावृत्तम्

आवर्धी जैन जगतां नवशक्ति दाताः,
पूर्णं विधानकरणे नवलेखकानाम् ।
सेवा न सन्तु यदि सन्तु हि विप्रवासे,
कार्याणि वर्णन पथे किमु वर्ण योग्यम् ॥

७–आर्यावृत्तम्

अवबोधन्येयमवस्था, हृदि हृदि प्रफुल्लन्ति किमाश्चर्यम् ।
लोके-शास्त्रे-राष्ट्रे, महत्महत्कार्याणि कृतानि ॥

८–इन्द्रवज्रावृत्तम्

सर्वेजनाः भारत मध्य काले,
आशीषवः ते वितरन्ति पूर्णाः ।
यावद् हि सूर्यः कमलाकरोवा,
भूयात् हि लोके तव सुप्रभातम् ॥

जैनमित्रके प्रति

"जैनमित्र" सा मित्र न देखा,
धनी रंकका किया न लेखा;
पतितोद्धारक सदा रहा है ।
दस्सा विस्सा भेद हरा है ॥१॥

सदा समय पर चलनेवाला,
प्रेम भाव दरशानेवाला;
सबका हिय हरषानेवाला ।
जैन मात्रका जो उजियाला ॥२॥

आलोक सदा देता आया,
चूर रूढियां करता आया;
निर्भीक सदा चलता आया ।
युगानुकूल सुपथ सुझाया ॥३॥

लेखक-सत्कवि सदा बनाये,
उसके गुणको कहको पाये ?
पंथ भेद ना जिसे सुहाये ।
समता सुधा सदा सरसाये ॥४॥

चमके जब तक रवि शशि तारा,
जगमग तब तक "मित्र" हमारा;
इससे फैले धर्म उजारा ।
मिले शांति सुख कीर्ति अपारा ॥५॥

हुकमचन्द जैन शास्त्री,
जू० हा० स्कूल, देरी, M. P.

— महान उद्योगपति —

श्री सेठ गुलाबचन्द हीराचन्द दोशी बंबई

सभापति दिगम्बर जैन प्रांतिकसभा बम्बई,
हीरक जयन्ति उत्सव।

संक्षिप्त परिचय दशाहुमड दि० जैन जातिमां आपनो जन्म स० १८९६ मां सोलापुर मुकामे थयो हतो. शिक्षण प्राप्ति स्थान सोलपुर, पुना अने मुम्बई हतुं, प्रीमीअर कन्स्ट्रकशन कु० ली०, वालचन्दनगर ईन्डस्ट्रीझ ली०, रावलगाव सुगर फार्म ली०, वालचन्द एन्ड कु० प्राईवेट ली०ना आप प्रमुख छे, तेमज ईन्डीअन सुगर मील्स एसोसीएशन, १९५३–५४, डक्कन सुगर फेकटरीझ एसोसीएशन, १९४२–४३ १९४७–४८; अने १९५१–५२; डक्कन सुगर टेकनोलोजीस्ट्स एसोसीएशन, १९५१–५२ ना प्रमुख हता. ते उपरांत बोम्बे स्टेट सुगरकेईन कमिटी; ईन्डीअन सेन्ट्रल सुगरकेईन कमिटि; डेवलपमेन्ट काउन्सील फोर

दिगम्बर जैन प्रां० सभा बम्बईके तथा उसकी हीरक जयंति (ता० ३-४-६०) के स्वागत प्रमुख–
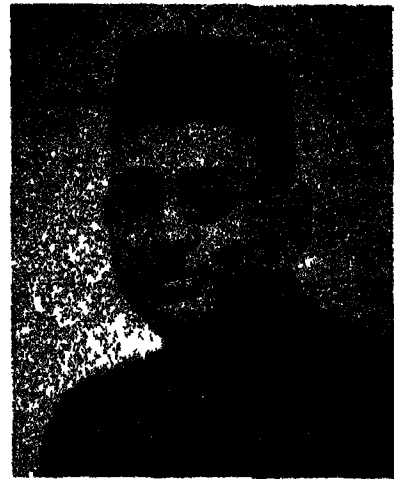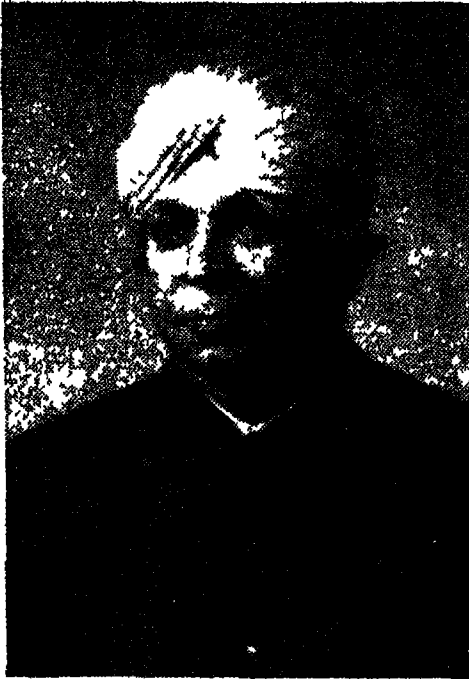
श्री० साहु श्रेयांसप्रसादजी जैन–बम्बई
(महान् उद्योगपति)

आपका जन्म नजीबाबादके सुप्रसिद्ध जमीनदार

सुगर ईन्डस्ट्री, सेन्ट्रल कमिटि फोर सुगर स्टान्डर्ड्स (स्टेन्डींग एडवाईझरी कमिटि ओन सुगर स्टान्डर्ड, मीनीमम वेजीस, सेन्ट्रल एडवाईझरी बोर्ड, बोम्बे स्टेट वेज बोर्ड फोर धी सुगर ईन्डस्ट्री अने सेन्ट्रल वेज बोर्ड फोर धी सुगर इन्डस्ट्रीना सभासद छे. एमणे इग्लेंड एमेरीका अने युरोपना देशोनी ई० स० १९३९, १९५१, १९५४ अने १९५८ मां मुलाकात लीधी छे. ई० स० १९३२ मां राजकीय चळवळ प्रसंगे एमना पर मुकवामां आवेल प्रतिबन्धनो भंग करवा बदल एमने अढार मासनी सख्त केदनी सजा तेमज रु० २००००)नो दंड करवामां आव्यो हतो.

आवा महान उद्योगपति अने देश सेवक सभानी हीरकजयन्तीना प्रमुख तरीके मल्या छे. आपनुं ठेकाणुं:– कन्स्ट्रकशन हाउस, बेलार्ड एस्टेट, मुम्बई नं० १,

कुटुम्बमें सन् १९०८ में हुआ था। पिताका नाम था श्री साहू जुगमन्दिरदासजी, प्रपिता थे श्री० साहू सलेखचन्दजी जैन रईस। आप इन्टर तक पढ़े बाद पिताजीकी जमीनदारीमें सहायता करते थे। व साथ ही राजकीय व सामाजिक कार्योंमें हाथ बटाते रहे अतः नजीबाबाद स्कूल बोर्ड तथा शिक्षाबोर्ड बिजनौरके सभापति हुए थे। फिर भारत इन्स्युरंस कम्पनी (लाहौर) के वाईस चेरमेन हुए। बाद सन् १९४२ में क्विट इन्डिया राजकीय हलचलों आप दो माह नजरकैद रहे थे। इसके बाद आप बम्बई पधारे। डालमिया ग्रुपके अग्रेसर हुए। यहां बीमा कम्पनीके, ईलेक्ट्रिक कम्पनीके, बेंकके व टेक्सटाईल मिल, टाईम्स ऑफ इन्डिया अंग्रेजी पत्र और धांगध्रा केमिकल कम्पनीके डिरेक्टर है। सिमेंट मारकेटिंग कं०, डालमिया जैन ग्रुप, सीमेंट कंपनीकी बोर्डमें आप सदस्य हैं।

भारत बेंकके बाद पंजाब नेशनल बेंकके भी १९५१ से चेरमेन हैं। सौराष्ट्र फिनेन्स को० के डिरेक्टर भी हैं। तथा धांगध्रा केमिकल्स देशमें एक सोडाके महान् उत्पादक हैं।

आपके भ्राता श्री साहू शांतिप्रसादजी जैन (क्रोडपति) के प्रत्येक कार्यमें आप सहायक हैं। सबसे बड़ी सोडा फेक्टरीके आप उत्पादक हैं। बहुतसी टेक्सटाईल, रबर फेक्टरी, लेम्प बर्क्स, बेनेट कोलमेन कं० व टाईम्स ऑफ इन्डियाके डिरेक्टर हैं। भारतीय उद्योगके आप, महान कार्यकर्ता हैं। साथ ही ई० मर्चेन्टस चेम्बर, मिल ऑनर्स एसो० तथा और भी कई कम्पनियोंके आप कर्णधार हैं। टेलीफोन बोर्डमें भी आप सदस्य हैं। पार्लामेंटकी राजसभामें भी आप ५१ से ५४ तक सदस्य रह चुके हैं। सारांश कि आप महान उद्योगपति, देशसेवक व समाजसेवक भी हैं।

'जैनमित्र'-हीरक जयन्ति शुभेच्छा

(रच०: रामचन्द्र माधवराव मोरे–सूरत।)

जै-नत्व जीवन श्रेष्ठ मन्त्र, मानवीनी मुक्तिनो;
न-हीं मोह ममत्व स्वार्थ, द्वेष, सौना जीवन सुखी बनो.
मि-त्रतथी विश्व कुटुंब, सौ छे प्रवासी जगतना;
त्र-ण लोकना हे! नाथ, सौने अर्पजो सद् भावना.
ना-श तेनो नाश अंते, पाप पुण्य साथ छे;
हि-तार्थे अर्पण जींदगी, जनता जनार्दन तत्व छे.
र-त्न अमूल्य देह मानव, श्रेष्ठ साधन मनुष्यता;
क-रजो भलुं सौना भलामां, जींदगीनी सफलता.
ज-न्मी जगे शुभ कर्म करो, सत्य नीति मोक्षता;
य-त्नो सदा तन मन धने, करता प्रभु यश प्रसरता.
न्ती शरीर आ छे आपणुं, मोह-माया कुंपद छे वृथा;
ति-मिर मां टळशे जीवन, विचारी सत्ये वर्तता.
अं-जाम अंते जीवननो, लाखो करोडो पामता;
क-रशो भलुं थशे भलुं, सौ ज्यांनुं त्यां जाणे वृथा.
ना-विक बनी तरी तारजो, सौ विध प्राणी मात्रने;
से-वा करे ते मानवी, धिक्कार स्वार्थी श्वानने.
वा-डी बंगला मान धन, मेळव्युं कपट मोहांधमां;
भा-व भक्ति धर्म नीति, हाथे साथे अंतमां.
वि-श्व कुटुम्ब नहि म्हारुं-त्हारुं, जीव जीवने आशरे;
सं-सारी साचा संत पूज्य, वंद्य मानव ते खरे.
पा-मे अमर कीर्ति जगे, मानव जीवन ते सफळ छे;
द-र्पण ए उज्वल जींदगी, दुन्या मुसाफर-खानुं छे.
क-ल्याण स्हेनुं सर्वदा. तन-मन धने परमार्थता;
श्री-मान् ने धीमन्त ते, जीवी जगे जीवाडता.
का-म शुं ? पशु जीवन, शुभ धर्म-कर्म ना कर्युं;
प-त्थर पडया भूभार, पापे पेट दानव थई भर्युं.
डि-पावजो मानव जीवन, सत्याचरण दानाईथी;
या-द मर्णांते अमर जावुं छे खाली हाथथी.
जी-वी अने जीववा दो, तजी मोह-ममत समभावथी;
प्र-भु आपजो सद्बुद्धि ए, जैनत्वना सिद्धांतथी.

आपत्तिकालमें भी "जैनमित्र" जैसाका तैसा

[लेखक सम्पादक]

'जैनमित्र' बम्बईसे मासिकमें पाक्षिक प्रकट होता था। इसके १७ वें वर्षमें हमने सूरतमें 'जैनविजय' प्रेस निकाला था तब हमारा विचार हुआ कि 'जैनमित्र' पाक्षिकसे साप्ताहिक हो जाय तो क्या ही अच्छा हो अतः हमने दि० जैन प्रांतिक सभा बम्बईके गजपन्था अधिवेशनमें जाकर सबजेक्ट कमेटीमें प्रस्ताव रखा जो बहुमतसे पास हुआ। लेकिन खुली सभामें तो यह सर्वानुमतसे पास हुआ कि जैनमित्र साप्ताहिक किया जावे व सूरतसे प्रकट हो।

फिर 'जैनमित्र' १८ वे वर्षसे सूरतसे साप्ताहिक रूपमें हमारे प्रकाशत्वमें नियमित प्रकट होने लगा जिसको आज ४३ वर्ष हो चुके हैं लेकिन इतने वर्षोंमें 'जैनमित्र' पर कैसे २ विघ्न आपत्ति या उपसर्ग आये थे तो भी 'मित्र'ने उनपर विजय प्राप्त कर अपने पाठकोंकी आजतक बराबर नियमित सेवा की है यह इतिहास जानने योग्य होनेसे इस हीरक जयन्ती अङ्कमें प्रकट किया जाता है –

प्रथम आपत्ति—जब हमने जैन विजय प्रेस प्रारम्भ किया तब सरकारी कायदानुसार ५००) डिपोझीट रखने पड़े थे। कुछ समय बाद हमारे प्रेसमें 'भारतनी दुर्दशा' नामक दो पैसेकी गुजराती पुस्तक छपी थी जिसको बम्बई गवर्नरने राजद्रोही बताकर ५००) जप्त कर प्रेस बन्द करनेकी नोटीस दी तब हमने १५००) दूसरे डिपोझीट रख नया डेकलेरेशन किया तो प्रेस चालू रहा और "जैनमित्र"का एक अंक भी बन्द नहीं हुआ था (यद्यपि डिपोझीटके १५००) पीछेसे वापिस मिले थे)

दूसरी आपत्ति—इसके दो तीन वर्ष बाद जब हमको 'दिगम्बर जैन", जैनमित्र व दानवीर माणिकचन्द पुस्तककी तैयारीके कारण या किसी तरह मानसिक बीमारी आयी तब प्रेसमें सभी कार्य पं० जुगमन्दिरदास जेवरिया (बाराबंकी निवासी) करते थे उस समयमें हमारी अनुपस्थितिमें प्रेस कार्य शिथिल हो जानेसे पर भी 'जैनमित्र'का एक भी अँक पंडितजीने बन्द नहीं रखा था (चाहे दूसरे कार्य नहीं जैसे होते थे)

तीसरी आपत्ति—मानसिक बीमारी दरम्यान हमें ऐसी कौटुम्बिक भर्त्सना हुई थी कि अब तो अच्छे होनेपर कुटुम्बकी सांजेदारीसे स्वतंत्र होनेपर ही प्रेसमें पांव रखेंगे अतः इस बीमारीसे बिलकुल अच्छे होनेपर हम चन्दावाड़ीमें रहने लगे [illegible]

प्रसादजीके साथ भा० दि० जैन महासभाके कोटा अधिवेशनमें गये थे वहां श्री पं, दीपचन्दजी जैन परवार (वर्णीजी) जो प्रथम बम्बई प्रांतिक सभाके उपदेशक वर्षों तक रहे थे वे मिले तब हमने उनसे कहा कि इस बीमारीसे यदि मैं अच्छा हो गया तो श्री *गोमटस्वामी (श्रवण बेल्गोला)*की यात्रा करूंगा (जो मैंने नहीं की थी) इस पर पंडितजीने कहा कि मैंने भी यह यात्रा नहीं की है। आप चले तो मैं भी आपके साथ चलूंगा। हमने इस पर स्वीकारता दी और हम दोनों कोटासे ही रतलाम हो सीधे श्री गोमटस्वामी यात्राको गये थे और गोमटस्वामीकी यात्रा कर फिर ३॥ माह तक हम दोनोंने दक्षिणकी सब यात्रा की थीं व खास२ स्थानोंका भ्रमण भी किया था। इसके बाद हम बम्बई आकर हमारे बहनोई सेठ चुनीलाल हेमचन्द जरीवालेके यहां ठहरे थे, इतनेमें श्री ब्र० सीतलप्रसादजी बम्बई आये और तारदेव बोर्डिंगमें मिले तब आपने कहा कि राष्ट्रीय महासभा (कोंग्रेस) का अधिवेशन अमृतसरमें जहां जलियानवाला बागका हत्याकांड हुआ था वहां पं० मोतीलालजी नेहरूके सभापतित्वमें होनेवाला है वहां जाना है यदि आप आवें भी तो साथ ही चलें।

हमने यह बात स्वीकार की और ब्रह्मचारीजीके साथ अमृतसर कौंग्रेस गये वहां तिलक, गांधीजी, बीसेंट, मालवियां आदिके व्याख्यान सुन लाहौर आदि होते हुए बम्बई आये व बहनोईजीके यहां ठहरे हुए थे कि सूरतसे भाई ईश्वरभाई (हमारे लघु भ्राता) जो उस समय प्रेस कार्य करते थे उनका तार आया कि पं० जुगमन्दिरदास चन्दावाडीमें मेलेरियासे सख्त बीमार हैं तुर्त आवें, अतः यह तार मिलते ही हम सूरत रात्रिको ९ बजे चन्दावाडी आये तब देखते क्या हैं कि पंडितजीके प्राणपखेरू उड गये थे। उनको देखते ही हमारे दुःखका पारावार नहीं रहा। फिर उनकी अंत्यकार किया की व उनका भाई ... मेलेरियासे बिमार था (जो प्रेसमें कम्पोज काम करता था) उनकी दवाई की तो वह अच्छा हो गया और उनके पिताको तार कर बुलाकर उनको सौंप दिया था।

अब योग्य होनहार पंडितजी चले गये तब "जैनमित्र" चालू कैसे रहे इसका विचार करके हमने कौटुम्बिक झगड़ेका निवटेरा हो स्वतन्त्र न होवें तब तक चंदावाडीमें ही रहकर 'जैनमित्र' का काम सम्हाल लिया अर्थात् सब पत्रव्यवहार, लेख, व प्रूफ आदि हमारे ईश्वरभाई चन्दावाडी भेजते थे और हमने 'जैनमित्र' का एक अंक भी बन्द नहीं रहने दिया था (उन दिनों हम बड़े भाई जीवनलाल-जीके घर भोजन करते थे।)

इन दिनोंमें प्रेसमें कार्य शिथिल हो जानेसे या दूसरे कारणोंसे "दिगम्बर जैन" मासिक तो ६ माससे बन्द कर दिया था, लेकिन 'जैनमित्र'को कोई आंच नहीं आने दी थी। इतनेमें कुछ माह बाद भाई ईश्वरभाई कापडियाकी चिट्ठी आई कि आप प्रेसमें आकर काम करेंगे तो ही 'जैनमित्र' चालू रहेगा अन्यथा १ अप्रेलको 'जैनमित्र' बंद कर देंगे। ऐसी सूचना आने पर हमने विचार किया कि क्या करें? तो प्रेस व जैनमित्र कार्यालय (चन्दावाडी) में दफतरका कार्य करनेवाले मास्टर ईश्वरलाल कल्याणदास महेता थे जो ४३ वर्ष हुए आज भी प्रेसमें हैं उन्होंने हमको कहा कि आपको अब प्रेसमें जाना चाहिए अन्यथा 'मित्र' बन्द हो जायगा। कौटुम्बिक झगडा आपसमें निबट कर आप स्वतन्त्र हो ही जायेंगे इसकी चिंता न करके प्रेसमें पुनः पांव रख देंगे तो आप सब कुछ कर सकेंगे (अंगूली पकडने पर पहोंचा हाथमें आ जाता है) इन सूचनाको स्वीकार करके हमने १ अप्रेलको प्रेसमें आकर सब कार्य सम्हाल लिया अतः जैनमित्र बराबर चालू रहा और दिगम्बर जैन मासिक बन्द था उसको भी चालू कर दिया। (हमारे प्रेसमें आनेसे भ्राता ईश्वरभाई प्रेसमें आये ही नहीं थे।)

बादमें १ वर्ष बाद हमारे भानजे सेठ अमरचन्द चुन्नीलाल जरीवालोंके बीचमें पड़नेसे कपड़ेकी दूकान व प्रेसका हिसाब हो हम पिताजी व दो भ्राताओंसे अलग हो कपड़ेकी दूकान छोड़कर प्रेसके स्वतन्त्र मालिक हो गये।

यह सब हाल लिखनेका यह मतलब है कि "जैनमित्र" को हमने कैसी भी दुखद परिस्थितिमें जरा भी आंच नहीं आने दी।

चौथी आपत्ति हमारी प्रतिज्ञा थी कि ४० वर्ष तकमें हो जायगी और संस्कारी कन्या मिलेगी तो दूसरी शादी करेंगे (क्योंकि प्रथम पत्नी प्रथम बीमारीके प्रथम ५ वर्ष रहकर चल बसी थी) और दो तीन सालमें ऐसा मौका आगया और सेठ गुलाबचंद लालचंद पटवाकी पुत्री सवितावाईके साथ चंदावाडीमें ही हमारा विवाह सेठ ताराचंदजी व उनका माताजी परसनवाई (मासीजी) के तत्वावधानमें हो गया तब धार्मिक उत्सव भी किया और विवाहके उपलक्षमें सभा करके पाठशाला व कन्याशालाके लड़के लड़कियोंका कार्यक्रम भी रखा गया था।

विवाहके करीब दो वर्ष बाद हम गोमटस्वामी मस्तकाभिषेक पर सकुटुम्ब गये थे वहांसे वापिस आनेके कुछ माह बाद हम पुनः बीमार हुए, जांघपर बड़ा पाठा निकल आया व कुछ मानसिक बिमारी मालूम हुई तब चंदावाडीमें रहकर उसका बड़ा ऑपरेशन डॉ० विया द्वारा कराया गया तब दो तीन माहमें हम ठीक हुए थे व हमने पर्युषण पर्वके अंतिम पांच उपवास कर उसका उद्यापन भी कराया था। इन दिनों हमारे प्रेसमें व जैनमित्र कार्यालयमें पं० दामोदरदासजी विशारद बुढ़वार (ललितपुर) नि० कार्य करते थे, जिनको हम १७ वर्षकी आयुमें ही ललितपुरसे, पं० सिद्धामलजीकी सूचनासे लाये थे जो बड़े योग्य व बड़े परिश्रमी थे, उन्होंने हमारी बीमारीमें न देखी रात न देखा दिन और १५-१७ घण्टे तक कार्य करके जैनमित्र, व दिगम्बर जैन पुस्तकालय व प्रेस कार्यमें आंच नहीं आने दी थी अन्यथा 'जैनमित्र' की स्थिति क्या जाने क्या होती ?

पांचवीं आपत्ति—विवाहके ७ वर्ष बाद सौ० सविताका स्वर्गवास २२ वर्षकी आयुमें ही पीलियासे हो गया तब चि० बाबू ४ वर्षका व चि० दमयन्ती डेढ़ वर्षकी थी। यह वियोग होने पर भी हम न गभराये व संसारकी स्थिति जानकर उनके स्मरणार्थ ३०००) का दान किया था व "जैनमित्र" के प्रकाशनमें एक दिनका भी फर्क नहीं आने दिया था।

छट्ठी आपत्ति यह आपत्ति यह आई कि कुडची (बेलगाम)में जैनों और मुसलमानोंमें कुछ वैमनस्य हो गया था, उस पर बड़ा संकट आया और मुसलमानोंने दि० जैन मंदिरकी पार्श्वनाथ (खड्गासन)की प्राचीन मूर्तिके खण्डर कर दिये थे तथा मारपीट भी बहुत हुई थी और "प्रगति आणि जिन विजय" मराठी पत्र बेलगाममें छपा था कि इस कांडमें मुसलमानोंने जैनोंको वृक्षके साथ बांधकर मारा था आदि तो हमने यह समाचार जैनमित्रमें उद्धृत किये थे तो १-२ माह बाद हमारे पर बम्बई गवर्नरका नोटिश सूरतके कलेक्टर मारफत आया कि तुमने जो मित्रमें यह समाचार छापा है वह हिंदू मुसलमानोंमें वैमनस्य फैलनेवाला है अतः आप पर राजद्रोहका केस क्यों न कराया जाय ? तो हमने व मास्टर ईश्वरलाल महेसाने दूरदर्शितासे इस मामलेको सूरतके कलेक्टर द्वारा कुछ खुलासा प्रकट करके यह मामला निबटा दिया अन्यथा "जैनमित्र" पर बड़ी आफत आ जाती यद्यपि, 'प्रगति पत्र' जिनमें प्रथम छपा था उसपर कुछ नहीं हुआ था। यह बात वीर सं० २४३७ सं० १९८७ की है। उस समय इस पार्श्वनाथ खण्डित मूर्तिके ९-१० टुकड़े जोड़कर उसका फोटो भी आया था जो दि० जैन व जैनमित्रमें भी हमने प्रकट किया था।

सातवीं आपत्ति—चि० बाबूभाई सूरतमें व चि०

दमयंती बम्बईमें बड़ी हो रही थी इतनेमें इकलौता चि० बाबू युवावस्थामें १६ वर्षकी आयुमें डबल टाईफोईडकी बिमारीसे चल बसा तब हम सुबह ५ से ९ बजे तक 'मित्र' का काम करते व उनके पास ही थे व बाबू अंत तक सचेत था व उसकी स्मृतिमें ५०००) निकाले थे जो बादमें १५०००) करके उसके नामका दि० जैन बोर्डिङ्ग निकाला है जो १५-२० वर्षसे चालू है। उस संकटके समय भी जैनमित्र' एक दिन भी बंद नहीं रखा था। इस समय हमारे यहां पं० परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थ ललितपुर कार्य करते थे जो १५ वर्ष सूरत रहे थे व आपने 'जैनमित्र' की महान सेवा शास्त्रोक्त लेख लिखकर की थी।

आठवीं आपत्ति- दि० जैन प्रांतिक सभा बंबईका २१ वां अधिवेशन नांदगांवमें ब्र० जीवराज गौतमचन्द दोशीके सभापतित्वमें हुआ उस समय हम, सेठ ताराचन्दजी, सेठ हीराचन्द नेमचन्द, ब्रह्मचारीजी, सेठ चुन्नीलाल हेमचन्द आदि कोई उपस्थित नहीं थे और वहां नये चुनावमें बड़ा विरोध होनेपर भी जैनमित्रके सम्पादक ब्र० शीतलप्रसादजीको न रखकर पं० बंशीधरजी शास्त्री सोलापुरको 'जैनमित्र'के सम्पादक नियुक्त किये उस समय बाबू माणिकचन्दजी बैनाड़ा महामंत्री थे। इस अधिवेशनके समाचार आये व मित्रमें छपे व इसपर स्थायी सभापति सेठ हीराचन्द नेमचन्द, सेठ ताराचन्दजी कोषाध्यक्ष व हमने विचार विनीमय व जांच पडताल की तो मालूम हुआ कि यह अधिवेशन ही नियम विरुद्ध है अतः उसके प्रस्ताव भी नहीं माने जा सकते न नई कमेटीको हम मान्य कर सकते हैं।

इसके बाद कई पत्र व सोलीसीटर नोटिश हमें बा० माणिकचन्दजी बैनाडा द्वारा मिले कि मित्रके सं० पं० बंशीधरजीको मान्य करें व चार्ज दे दें आदि इस पर हमने भी बराबर उत्तर दिया कि संपादक बदलनेका व प्रकाशकका चुनाव न करनेका प्रस्ताव ही हमें स्वीकृत नहीं है। आप चाहें जो कर लें।

इसके बाद समजौतेके लिये नयी पुरानी कमेटीकी मीटिंग भी सेठ हीराचन्द नेमचन्दने हीराबागमें बुलाई थी लेकिन कोई समजौता नहीं हुआ, न जैनमित्र एक भी दिन बंद रहा। आज पं० बंशीधरजी सोलापुर इस संसारमें नहीं हैं अतः हम इनके विषयमें कुछ नहीं लिख सकते तौ भी कहते हैं कि यदि जैनमित्र सोलापुर चला गया होता तो क्या जाने 'मित्र'की क्या दशा होती। (क्योंकि इनके द्वारा दो पत्र निकलकर बन्द हो गये थे)

नौवीं आपत्ति- श्री ब्र० सीतलप्रसादजी जैनमित्रकी सम्पादकीमें चार चाँद लगा दिये थे, आपके विरुद्धमें एक पण्डित पार्टी व 'जैनगजट' हो गया था कि आप तो धर्म विरुद्ध प्रचार करते हैं लेकिन श्री ब्रह्मचारीजीने एक भी लेख धर्म विरुद्ध जैनमित्रमें नहीं लिखा था तोभी महासभाने 'जैनमित्र' का बहिष्कार करनेका प्रस्ताव कर दिया था इससे 'जैनमित्र' को विशेष बल मिला और ग्राहक भी बढ़ गये थे। इसके बाद एक दिन बहुत करके खण्डवासे ब्रह्मचारीजीका पत्र आया कि मैं थक गया हूं अतः जैनमित्रके तथा स्याद्वाद महाविद्यालयके अधिष्ठाता पदसे स्तीफा देता हूं, अतः मित्रकी सम्पादकी सम्हालें, हाँ मैं 'जैनमित्र' के लिए लेख तो भेजता रहूंगा ही।

ऐसा कहकर श्री ब्र० सीतलप्रसादजी मित्र संपादकीसे अलग हो गये व वर्धामें चातुर्मास किया था वहांके एक समाचार किसी पत्रमें छपे हमारे देखनेमें आये कि वर्धामें जमनालाल बजाजके बंगलेमें आपने एक विधवा विवाह कराया और आशीर्वाद दिया। यह पढ़कर हम ताजुब हो गये और पत्रसे हां, ना पूछाया तो ब्रह्मचारीजीका पत्र आया कि हां, ठीक बात है, मैंने तो सनातन जैन सभा स्थापित की है उससे 'सनातन जैन' मासिक निकलेगा व अकोलामें विधवाश्रम भी खुलेगा व कस्तूरचंद काम करेगा आदि। इस पर १५ दिन तक हमारा ब्रह्म-

चारीजीसे पत्रव्यवहार हुआ तो अंतमें आपने लिखा कि, कापडियाजी ! मैंने तो समुद्रमें डुबकी लगाई है, मैं उसमें डूब जाऊँगा या तर जाऊँगा अत: आप इस विषयमें अब कुछ न लिखिये।

इसके बाद हम चुप रह गये लेकिन मित्रमें विधवा विवाह विषयक न कोई लेख आपने भेजा न हमने छापा और लखनऊमें अंतिम सास तक आप 'जैनमित्र' की मुख्य लेखक रूपमें सेवा कर रहे थे। यदि हमने जैनमित्रको ऐसी परिस्थितिमें नहीं सम्हाला होता 'मित्र' की दशा क्या जाने क्या होती?

दशवीं आपत्ति: बेलगाममें जिस समय म० गांधीजीके सभापतित्वमें कांग्रेस हुई थी तब शेडबाल (बेलगाम) में हमारी भारत० दि० जैन महासभाका अधिवेशन था। आचार्य शांतिसागरजी भी वहां संघ सहित थे। हम, ताराचंद सेठ, प्रेमीजी आदि भी गये थे वहां नये पुराने विचारवालोंमें बड़ा झगडा व मारपीट हुई थी। बाद पं० मक्खनलालजी शास्त्रीने तो अपने 'जैन गजट' में लिख डाला कि शेडबालमें मंडपमें विरोधियोंने आग लगा दी थी, आदि, बाद इस पर आपपर केस हुआ था उसमें आपको ५००) जुर्माना हुआ था। ऐसे मौके पर 'जैनमित्र' के १ अंकमें श्री० बा० छोटेलालजी जैन सरावगी कलकत्ताका एक लेख छपा था कि भारत० दि० जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था कलकत्ता जिसके सर्वेसर्वा पं० श्रीलालजी काव्यतीर्थ हैं वे ठीक२ हिसाब आदि प्रकट नहीं करते आदि इस पर लेखकके रूपमें बाबूजी पर तथा संपादक, प्रकाशक व मुद्रकके रूपमें हम पर पं० श्रीलालजीने मानहानिका फोजदारी केस अथनी तालुका (जि० बेलगाम) में मांडा था—इसलिये मांडा था कि हम दोनोंको अथनी जाना पड़े, हैरान होना पड़े और हमें दंडित करावें (कायदा ऐसा है कि जहां पत्रके दो ग्राहक भी हों वहां डेफेमेशन केस चल सकता है) इस केसके सम्बन्धमें सेठ ताराचन्द-जीकी सूचनानुसार हम दोनोंको दो तीन बार बेलगाम व अथनी जाना पड़ा था और वहां श्री चौगले जैन वकील द्वारा अथनीसे यह केस बेलगाममें ही ट्रान्सफर करा दिया तो पं० श्रीलालजी उस तारीख पर बेलगाम आये ही नहीं और केस निकाल दिया गया। इस समय हम दोनों चाहते तो पं० श्रीलालजी पर हर्जानेका बड़ा केस मांड सकते थे लेकिन हम दोनोंने कुछ नहीं किया था। यह थी जैनमित्र पर दशवीं आपत्ति!

ग्यारहवीं आपत्ति—फिर हम तीसरीवार बीमार पड़गये व मानसिक बीमारीने भी घेर लिया तब पं० परमेष्ठीदासजी हमारे सब कार्यालयोंमें दिलचस्पीसे कार्य करते थे लेकिन आप स्वतन्त्रतासे रहना चाहते थे अत: उस समय हमारी चि० दमयन्ती तथा भानजे श्री जयन्तीलाल जो प्रेसमें देखरेख रखते थे उनसे आपकी अनबन हो गई व १-२ दिन प्रेसमें ही नहीं आये और इन्दौर, देहली तारपत्र खटखटाये तब समयसूचकतासे जयन्तीलालजीने आपको समझाकर प्रेसमें बुलाया तब 'मित्र' बराबर चालू रहा था, बाद हम अच्छे हुए व पं० परमेष्ठीदासजीने स्तीफा दे दिया जो स्वीकार किया व आप देहली परिषद ऑफिसमें चले गये थे।

इधर हमने पंडितके लिये आवश्यकता निकाली तो २० अर्जी आई थीं उनमेंसे दो पास कीं तो प्रथम पं० रतनचन्द शास्त्री दूसरी नौकरी मिल जानेसे सूरत नहीं आये और दूसरे पं० स्वतन्त्रजी (सिरोंज वाले) जो सनावद हाईस्कूलमें धर्मशिक्षक थे व जैनमित्रके बड़े प्रेमी थे व सेवा भावनावाले थे वे हमारे यहां आये, जो आज १५ वर्षोंसे हमारे यहां हैं सारांश कि 'जैनमित्र' इस बीमारीके समय भी बराबर चालू रहा था।

बारहवीं आपत्ति—पं० स्वतंत्रजीके आनेके कुछ समय बाद हम फिर बीमार हुये थे तब तो मरोलीमें कस्तूरबा औषधालयमें डॉ० ईश्वरलाल राणासे ६ इंजेक्शन लेनेपर हम बिल्कुल आरोग्य हो गये थे

लेकिन १-१॥ मास प्रेस कार्य नहीं कर सके थे तो भी पं० स्वतन्त्रजीने नये होनेपर भी 'मित्र' कार्य सम्हाला था अतः मित्र एक भी दिन बन्द नहीं रहा था।

१५ वर्षोंसे पं० ज्ञानचन्द्रजी स्वतंत्र उत्तरोत्तर बहुत योग्य हो गये हैं व आपने भारतके दि० जैनोंमें अपने लेख व कहानियोंसे अच्छी ख्याति प्राप्त करली है।

हमने १४ वर्ष पर ईडर नि० चि० डाह्याभाईको दत्तक लिये फिर चि० दमयंतीका विवाह किया व १५०००) उनके लिये अलग निकाले, जिसका एक मकान भी अभी ले लिया है।) बाद चि० डाह्याभाईका विवाह किया और आज दो पुत्र व एक पुत्री उन्हें हैं। चि० दमयंतिको भी तीन पुत्र हैं। चि० डाह्याभाई यहां आनेके बाद प्रेसमें ही सब कार्य दिलचस्पीसे कर रहे हैं अतः अब हम सुखी जैसे हैं व दिनरात समाजसेवामें संलग्न हैं।

जैनमित्रको ६० वर्ष पूर्ण होकर ६१ वें वर्षमें यह हीरक जयन्ति प्रकट कर रहे हैं तथा उसका उद्घाटन बम्बईमें ता० २ अप्रैल ६० को प्रांतिक सभा बम्बईके हीरक जयन्ति उत्सवके साथ हो रहा है ऐसे प्रसंगपर ही हमने यह 'जैनमित्र'के आपत्तिकालका उपरोक्त इतिहास हमारे पाठकोंके सामने रखा है।

हमारे प्रेस व मित्र कार्यालयमें आजतक पं० रामलालजी, मामंबलदेव, पं० सतीशचंद्रजी, पं० जुगमंदरदास केवरिया (सहूगढ़), पं० दामोदरदासजी, पं० परमानन्दजी व्या०, पं० जुगमन्दरदासजी हिंमतपुर, पं० परमेष्ठीदासजी कार्य कर गये हैं और आज पं० ज्ञानचन्दजी बड़ी दिलचस्पीसे कार्य कर रहे हैं व सकुटुम्ब सुखी हैं। — सम्पादक]

कृतज्ञता-ज्ञापन

[पं० परमेष्ठीदास जैन, जैनेन्द्र प्रेस, ललितपुर]

'जैनमित्र'की हीरक जयन्ति पर मैं अपनी कृतज्ञता प्रकाशित कर रहा हूं क्योंकि उसके ६० वर्षीय जीवनकालमेंसे ¼ काल (१५ वर्ष) मैंने उसके साथ व्यतीत किया है। सूरतमें सन् २९ से ४४ तक मुझे 'जैनमित्र'के द्वारा यत् किंचित सेवा करनेका अवसर मिला था, और उसे छोड़े हुये इतने ही (१५) वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, तथापि मुझे पूर्ववत् ही उसके प्रति अनुराग है।

'जैनमित्र'ने अपने ६० वर्षीय जीवनकालमें जैन समाजमें एक सफल शिक्षक या उपदेष्टाका काम किया है। इसका प्रारंभिक जीवन सरल और शांत था, तो मध्यम जीवनमें यह अपने प्रकारका विशिष्ट क्रांतिकारी सुधारक पत्र रहा है, और अब यह अपनी आयुके अनुसार तदनुरूप कार्य कर रहा है।

जैन समाजमें जो भी यत् किंचित सुधार प्रगति या क्रांतिके दर्शन हो रहे हैं, उसमें 'जैनमित्र'का बहुत बड़ा हाथ है। आजका नवयुवक वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, बाल विवाह, मरणभोज, अंतर्जातीय विवाह, दस्सापूजाधिकार, एवं गोबरपंथ समीक्षादिको जहां आश्चर्यचकितसा होकर सुनता है, और मन ही मन हंसता है कि यह भी कोई आंदोलनके विषय हो सकते हैं, वहां यही समस्यायें कभी जटिल रूप धारण किये हुये थीं, जिनके निवारण हेतु जैनमित्रको अपने जीवनका बहु भाग आन्दोलनमें व्यतीत करना पड़ा है।

जैनमित्रकी एक बहुत बड़ी सेवा यह भी रही है कि उसने उन नवोदित लेखकों और कवियोंको अपनाया जिनकी प्रारंभिक रचनायें संभवत अन्यत्र

नहीं छप पाती, और वे सदाके लिये मुरझा जाते। किन्तु जैनमित्रका सहयोग पाकर अनेक युवक अब लेखक और कविके रूपमें अपना अच्छा स्थान बना चुके हैं।

यही बात विविध आन्दोलनोंके सम्बन्धमें भी है, अनेक सामाजिक कुरीतियें और धर्मांधताओंके विरोधमें जहां अन्य जैन पत्र कुछ भी छापनेको तैयार नहीं थे वहां जैनमित्रने उन वांछनीय विरोधोंको आंदोलनोंका रूप दिया, और समाजमें जागृति लाकर उन कुरीतियोंको सदाके लिये दूर कर दिया। इसमें स्व० ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीका बहुत बड़ा साहसपूर्ण हाथ रहा है। यही कारण है कि बहुतेरे आन्दोलन उन्हींके कार्य कालमें चले और उनमें सफलता प्राप्त की।

आज भी जैन समाजमें अनेक कुरीतियाँ एवं अवांछनीय कार्य चल रहे हैं, जिनसे जैन समाजकी प्रतिष्ठाको धक्का पहुंच रहा है। उनके निवारणार्थ जैनमित्रसे उसी साहस, धैर्य एवं विवेककी अपेक्षा की जा रही है।

जैनमित्रके हीरक जयन्ती महोत्सव पर मैं पुनः अपनी कृतज्ञता प्रगट कर रहा हूं।

जैनमित्रकी निष्पक्ष सेवा

जैन समाजके प्रसिद्ध साप्ताहिक 'जैनमित्र'को समाज सेवा करते हुए ६० वर्ष पूर्ण होकर वीर सं० २४८६ से ६१ वें वर्षके प्रारंभमें हीरकजयंती विशेषांक प्रकट करनेके हेतु हार्दिक मंगल कामना भेजते हुए मुझे अत्यंत प्रमोद हो रहा है।

मैं लगभग ३५ वर्षसे 'जैनमित्र'को पढ़ता आरहा हूं। इसकी अनेक विशेषताओंमें ठीक समय पर नियमसे प्रकाशित होना, उदार और निष्पक्ष दृष्टिसे समाजहितके उद्देश्यका निर्वाह करना तथा समाजमें सर्वाधिक प्रचलित होना, ये उल्लेखनिय हैं।

श्री कापड़ियाजी सदृश सतत सेवा-परायण और अत्यन्त लगन एवं परिश्रमके साथ कार्य करनेवाले महानुभाव इस पत्रके संपादक एवं प्रकाशक हैं, जिन्होंने इसकी सेवामें अपना जीवन समर्पित कर दिया है।

समाजमें पुरानी और अहितकर रूढ़ियोंका विरोध कर धीरे२ अपने सहधर्मी बंधुओंको युगानुकूल विचारवाला बनानेका 'जैनमित्र'को प्रथम श्रेय प्राप्त है। पत्रकारकी जो जवाबदारी होना चाहिए उसका पूरा२ निर्वाह वर्तमान संपादक श्री कापड़ियाजी और उनके सहयोगी भाई 'स्वतंत्र'जी कर रहे हैं।

वर्तमान जैन समाजमें जो तेरहपंथ, बीसपंथ आदिका विष फैला हुआ है उससे हो रहे विषाक्त वातावरणमें 'जैनमित्र' मध्यस्थ रहा है। श्री कापड़ियाजीकी महान उदारता और विशाल हृदयका हमें अनेकबार परिचय मिला है उन्होंने अपनी वैयक्तिक मान्यताका 'जैनमित्र'में उपयोग न कर सदा समाजहितको ही लक्ष्यमें रखा है।

श्री कानजीस्वामी द्वारा की जा रही जैन शासनकी अपूर्व प्रभावना और उनकी आध्यत्मिक रहस्यताका 'जैनमित्र' सदसे सम्मान करता आरहा है।

मेरी हार्दिक शुभ कामना है कि 'जैनमित्र' अपने ६१ वें वर्षमें पदार्पण करते हुए इसी भांति उन्नति करता हुआ लोकप्रिय बना रहे और उसके संपादक स्वस्थ एवं दीर्घायु हों।

नाथूलाल शास्त्री,
संहितासूरि, साहित्यरत्न प्रतिष्ठाचार्य, इन्दौर।

श्रद्धांजलियां

१—श्रीयुत धर्मपरायण मूलचन्द किसनदासजी कापडिया–योग्य दर्शनविशुद्धि।

अपरंच आपके द्वारा सतत अविरत जैनमित्रकी अनुपम अद्वितीय सेवा हो रही है तथा जैनमित्रकी निष्पक्ष नीतिने जैन धर्मकी महती प्रभावना की है। हमारा भी ५० वर्षसे अधिक समयसे जैनमित्रके साथ सम्बन्ध है। अतः हमारी यही शुभ भावना है कि अपनी धर्मनीति पर दृढ़ रहता हुवा पत्र सदा अपनी उन्नति करता रहे। तथा आपका जीवन भी समुज्ज्वल हो। आ० शु० चिं०

गणेश वर्णी, ईसरी आश्रम।

२ जैनमित्र साप्ताहिक अपने दीर्घ जीवनके ६० वर्ष पूर्ण कर ६१ वें वर्षमें प्रवेश कर रहा है यह प्रसन्नताका विषय है। इसकी हीरक जयन्तीके आयोजनके उपलक्षमें हम पत्रके अभ्युदयकी कामना प्रकट करते है।

किसी भी पत्रका इतने लम्बे काल तक अविरल गतिसे चलते रहना ही पत्रकी लोकप्रियताका प्रतीक है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि समाचारोंका अधिकसे अधिक संकलन करके समाजको नियमित रूपसे पत्र द्वारा प्रसारित करनेके कार्यमें पत्रको आशातीत सफलता मिली है।

हम पत्रकी उन्नतिकी कामना करते हुए यह आशा करते हैं कि यह पत्र समाजके लिए उपयोगी सिद्ध होगा। रा० ब० सरसेठ भागचन्दजी सोनी-अजमेर।

३—जैनमित्रने निस्वार्थ, लगन एवं निर्भीकताके साथ गत साठ वर्षोंसे देश, समाज व धर्मकी सेवा की है वो अत्यन्त सराहनीय है। दिगम्बर जैन समाजका यही एक मात्र ऐसा पत्र रहा जिसने नियमित रूपसे प्रकाशन जारी रखा और अनेकों सामाजिक उलझने और कठिनाईयोंके होते हुए भी हिमालय समान अटल समाज सेवामें संलग्न रहा। मुझे पूर्ण आशा है कि अपनी परम्पराके अनुसार बम्बई प्रांतीय दिगम्बर जैन सभा देश, समाज व धर्मकी सेवा करती रहेगी। मैं इसके उज्ज्वल भविष्यकी कामना करता हूं।

(श्रीमंत सेठ) राजकुमारसिंह, इन्दौर।

४ बम्बई प्रांतिक सभाके लिये आपकी सेवायें प्रशंसनीय हैं। जैनमित्रने विविध स्तरों पर जैन समाजके लिये बहुत काम किया है। आपने सुलेखक, नवलेखक, अलेखक एवं सुकवि, अकवि, कुकविकी कृतियोंका साम्यभावसे प्रकाशन करके लोकप्रियता प्राप्त की है यह भी पत्र जगतीमें गणनीय है।

मैं जैनमित्रकी हृदयसे उन्नतिशील प्रगतिका इच्छुक हूं। अजितकुमार, सं०-जैन गजट, देहली।

५ मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि 'जैनमित्र' की हीरकजयन्ती मनायी जा रही है और उसके उपलक्षमें पत्रका विशेषांक निकाला जानेको है। जैनमित्रने समाजकी निःसन्देह बहुत सेवा की है और उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि वह बराबर समय पर पाठकोंकी सेवामें पहुंचता रहा है। पत्रका भविष्य उज्ज्वल बनें और वह अगले वर्षोंमें पिछले वर्षोंसे भी अधिक समाज सेवा करनेमें समर्थ होवे यही मेरी उसके लिये शुभ कामना और सद्भावना है।

भवदीय जुगलकिशोर मुख्तार,
संस्थापक, वीरसेवा मन्दिर, दिल्ली।

६—"मित्र" ने केवल जैन समाज ही नहीं अपितु जैनेतर समाजका भी सदैव वास्तविक मार्गदर्शन करते हुए अपने नामकी सार्थकता सिद्ध करके बताई है। स्पष्टवादिता और निर्भीकता 'मित्र' के अपने गुण हैं। 'मित्र' की एक विशेषता यह भी है कि वह नियमित प्रकाशित होकर निश्चित समय पर पाठकोंके हाथमें आ जाता है।

आजके युगमें अधिकांश पत्र-पत्रिकाओंकी जीवन-कली विकास काल तक पहुंचनेके पूर्व ही मुरझाकर शुष्क हो जाती है किन्तु 'मित्र' ने समयके प्रत्येक पार्श्वपरिवर्तनके साथ संघर्ष किया है और अपने जीवनको आगे बढ़ाया है। हमारी हार्दिक कामना है कि भविष्यमें भी अनन्तकाल तक 'मित्र' समाजका हित, चिन्तन करता हुआ उसे आदर्शोन्मुख करता रहे।

गुलाबचन्द टौंग्या, इन्दौर।

७--जैनमित्रके जन्मदाता पं० गोपालदासजी बरैया जो दि० जैन समाजके चमकते चन्द्रमा थे, जिनकी किरने सूर्यके समान प्रकाश थीं, जैनमित्र भी आज दिन तक बराबर प्रकाश दे रहा है।

दि० जैन समाजमें कई पत्र साप्ताहिक और भी प्रकाशित हो रहे हैं। परन्तु सबसे अधिक ग्राहक संख्या इस पत्रकी है। व दि० जैन समाजकी गति-विधियोंकी जानकारी सबसे अधिक इस पत्र द्वारा ही मिलती है। यह पत्र सुधारक विचार रखते हुये भी अपने पत्रमें हर विचारके लेखकोंको स्थान देता है। यह इसकी उदारता है।

इस पत्रको बराबर प्रकाशित करते हुये हीरक जयन्तीके शुभ दिवस तक लानेका सारा श्रेय माननीय मूलचन्द किसनदास कापडियाजीको है। उनको "स्वतंत्र"जीका जो सहयोग प्राप्त है, उसके कारण कापड़ियाजीको बड़ा बल मिल रहा है। मै इस शुभ अवसर पर अपनी तथा अपने अन्य साथियोंकी ओरसे कापडियाजीको बधाई भेजता हूं।

भगतराम जैन, मन्त्री,
अ० भा० दि० जैन परिषद्-देहली।

८—मुझे हर्ष है कि 'जैनमित्र'की हीरक जयन्ती मनायी जा रही है।

'जैनमित्र' सचमुच जैनियोंका मित्र ही है। मेरे लिए तो वह खास मित्र बन गया है। इक-ताळीस सालसे मैं जैनमित्र नियमित रूपसे पढ़ रहा हूं। उसी परसे मेरा हिन्दीका अध्ययन शुरू हुआ। जैन समाजका परिचय मुझे जो मिला है वह 'जैनमित्र' से ही है। जैनमित्रकी नीति मेरे स्वभावके लिये बहुत अनुकूल है, किसी बातका विकार वश आग्रह लेकर जैनमित्रने समाजमें कभी भी द्वेष फैलाया नहीं है। जैनमित्रकी वृत्ति सदैव राष्ट्रीय रही है और खास करके समन्वय रूपकी। जैन-मित्रने जैनधर्मकी, जैनसमाजकी अच्छी सेवा की है।

मैं आशा करता हूं कि आप शतायु होवे, और जैनमित्र एक स्थायी संस्था बनकर समाज और धर्मकी सेवा करें यही मेरी शुभेच्छा है।

डॉ० आ० ने० उपाध्याय, राजाराम कालेज-कोल्हापुर।

९ बम्बईमें जो बम्बई दि०जैनप्रांतिक सभा तथा जैनमित्रकी हीरक जयन्ती मनाई जा रही है उसके लिये हम अपना हर्ष प्रकट करते हुए उन दोनोंकी सफलता चाहते है। पहले समयमें बंबई प्रांतिक सभाने बहुत अच्छा काम किया है उसमें स्वर्गीय पं० गोपालदासजी बरैया, पं० धन्नालालजी तथा सेठ मानिकचन्दजी जौहरीका बहुत अच्छा सुयोग था। उसी सभाकी सफलतासे आपके द्वारा जैनमित्र आज-तक प्रगति रूपसे काम कर रहा है। इसके लिये उन दोनोंके कार्यकर्ता अत्यंत धन्यवादके पात्र हैं।

अन्तमें हम आशा करते हैं कि प्रांतिक सभा पहलेके समान सदा प्रगतिरूप कार्य करती रहें।

पं० ललाराम शास्त्री, पं० मक्खनलाल शास्त्री, मोरेना।

१०. जैनमित्रको मैं बचपनसे, जबसे होश संभाला, अपने परिवारमें बराबर देखता आ रहा हूं। श्रद्धेय ब्रह्मचारीजीका इससे घनिष्ट सम्बन्ध था, समाजमें कितने ही पत्र निकले और कितने ही बंद हुए। परन्तु जैनमित्र अपना बराबर वही रूप लिए निकल रहा है। समयानुसार उसकी साइज और छपाईमें भी सुधार हो। तथा वह दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करे, यही मेरी कामना है।

धर्मचन्द्र सरावगी, कलकत्ता।

११ - यह समाचार जानकर बडी प्रसन्नता हुयी कि इस वर्ष जैनमित्रने अपने जीवनके ६० वर्ष पूर्ण कर लिये हैं।

यह समाचार निश्चय ही सम्पूर्ण जैन समाजके लिए एक अतीव हर्षका विषय है। जैनमित्रने जहाँ समाजके अनेक लेखकोंका पथप्रदर्शन कर उन्हें प्रोत्साहित किया है, वहां समाजके लाखों धनिकोंको जैन समाजके सभी प्रकारके समाचारोंसे परिचित करता रहा है। यह बात दूसरी है कि जैनमित्रने निःस्वार्थ भावसे अब तक समाजकी जो सेवा की है वह किसी भी पत्रके लिए ईर्ष्याका विषय हो सकता है।

आज समाजका यह प्राचीन तम सन्देशवाहक हीरक जयंती मना रहा है, इस अवसर पर मेरी शुभ कामनाएं स्वीकार करें, मेरी बडी इच्छा थी कि इस अवसर मैं अपनी रचना भेजता, पर यहां लन्दनके व्यस्त जीवनमें रहनेवाला व्यक्ति परिस्थितियोंका इतना दास हो जाता है कि उसे आकस्मिक अवसरोंके लिए समय निकालना कठिन हो जाता है।

आशा है आप अन्यथा न समझेंगे, वैसे मैं जैनमित्रको सदा अपना समझता हूं और समझता रहूंगा। आपका विनम्र—

महेन्द्रराजा जैन एम. ए.

सेन्ट्रल लायब्रेरी, हाईस्ट्रीट, लन्दन।

१२—मुझे 'जैनमित्र' की हीरक जयन्ती अवसर पर अत्यंत प्रसन्नता है। जैन समाजका यही एक पत्र है जो जन्मकालसे, अविरलरूपसे यथा समय प्रकाशित होता रहा है। इसके संपादकोंमें स्वर्गीय पं० गोपालदासजी जैसे प्रकाण्ड विद्वान रहे हैं। जैन समाजमें 'स्याद्वाद केशरी', 'जैन हितोपदेशक' आदि अनेक जैन पत्रोंने जन्म लिया किन्तु ये सब कालकी विकराल डाढोंमें समा गए। जो चल रहे हैं उनकी आर्थिक स्थिति भी सङ्कटसे खाली नहीं है। जैनमित्रको जीवित रखने और सुचारुरूपसे चलानेका श्रेय उसके योग्य संपादक श्री मूलचंद किसनदासजी कापडियाको है जो ७८ वर्षकी वृद्धावस्थामें अपने अन्य कार्योंको गौण करके 'जैनमित्र'-को ही जीवन अर्पण किए हुए हैं।

कई वर्षोंसे पं० ज्ञानचन्दजी स्वतंत्र, श्री कापडियाजीको अच्छा योग दे रहे हैं। मेरी भावना है कि 'जैनमित्र' दिनदूनी और रात चौगुनी तरक्की करें।
लाला राजकृष्ण जैन, भूतपूर्व म्युनि०चेअरमेन देहली।

13—I am immensly happy to see 'Jainamitra' celebrating its Diamond Jubilee. 'Jainmitra' has rendered yeoman's services to the Jain community all over India during the long period of sixty years and has really become a friend of Jains all over the country It has done a very valuable work in the cause of education, religion, social uplift by writeng revolting articles on Mithyatva, child marriages etc. and defending the cause of Nirgrantha Munis, inter cast marriages, uplift of the fallen & downtrodden, spread of the principles of Jainism, publishing books on Jainism etc. I wish a very long life and ever brilliant and prosperous career to Jainamitra and I hope it will continue to render all-sided services to the cause of Jainism & Jain community in particuler and to the nation in general. Long live Jainamitra.:

J. T. Jabade.
Civil Judge, **Sangli.**

इनके अतिरिक्त हमें निम्नलिखित श्रीमानों विद्वानोंकी श्रद्धांजलियां एवं शुभ कामनायें प्राप्त हुयी हैं जिनके स्थानाभावसे हम केवल नाम ही दे रहे हैं, प्रेषक महानुभाव क्षमा प्रदान करें।

पं० छोटेलालजी बरैया — उज्जैन
पं० महेन्द्रकुमारजी — किशनगढ
पं० दाडमचन्दजी — ऋषभदेव
भालचन्द्रजी पाटनी — लाडनूं
पं० हुकमचन्दजी शांत — तखेड
„ रतनचन्दजी शास्त्री — चामोरका

श्री घनश्यामदास गोईल — इन्दौर
,, भैयालाल शास्त्री कोठल — मुहारी
श्री चन्दनमलजी नागौरी — छोटीसादड़ी
,, सौभाग्यमलजी जैन पाटनी — अलीगढ
भलैया पन्नालालजी — खैराना
श्री बी० टी० चवरे — खण्डवा
स्वेत खेमचंदजी — सहजपुर
बसन्तलालजी — इलाहाबाद
एस० एन० ठवली — देवलगांवराजा
गुलाबचंदजी सौगानी
पं० शांतिदेवीजी — मुहारी
सेठ कुन्दनलाल मीरचंदजी — सहजपुर
श्री गट्टूलालजी — कोटा
छबीलदास श्रीकृष्ण मुलुटकर — रावेर
लालचंद जैनचंदजी — सेरिया
जयनारायण मणिलालजी — फर्रुखनगर
हुकमचंद फुन्दीलालजी — डबरामण्डी
पं० मिश्रीलालजी शाह शास्त्री — कुचामनसिटी
लाला आदिश्वरप्रसादजी जैन मंत्री
जैन मित्रमण्डल, धर्मपुरा — दिल्ली
गणेशीलालजी जैन शास्त्री एम० ए० — आगरा
पं० सिद्धसेनजी जैन गोयलीय — सलाल
श्री कपिल कोटडियाजी वकील — हिम्मतनगर
पं० भैयालालजी सहोदर — मौ
शाह अमरचंदजी श्रोफ — ऋषभदेव
पं० लक्ष्मणप्रसादजी आयुर्वेदाचार्य — मड़ावरा
,, राजधरजी स्याद्वादी — साढूमल
श्री लक्ष्मीप्रसादजी — सवाईमाधोपुर
,, नेमिचन्दजी एम० ए० साहित्याचार्य — ललितपुर
वैद्य अनंतराजजी न्यायतीर्थ — उज्जैन
श्री विजयसिंहजी — ननौरा
पं० नन्हेंलालजी सि० शास्त्री — राजाखेड़ा
श्री लक्ष्मीचन्द्रजी रसिक — विदिशा
पं० गुलजारीलालजी चौधरी — उदयपुर
श्री हीराचन्दजी बोहरा बी. ए. एल, एल. बी. — अजमेर
श्रीमान सेठ शांतिलालजी सरपंच — उज्जैन
श्री सेठ चिरञ्जीलालजी बड़जाते — वर्धा
श्री सेठ जगन्नाथजी पांड्या — झूमरीतलैया
श्री सेठ मटरूमलजी बैनाड़ा अध्यक्ष आगरा दि० समाज
लाला परसादीलालजी पाटनी — दिल्ली
पं० छोटेलालजी वर्णी — अहमदाबाद
ब्र० कल्याणदासजी — सीहौंदरा
त्यागी धर्मसागरजी
ब्र० प्रेमसागरजी
ब्र० श्रीलालजी — श्रीमहावीरजी
ब्र० देवेन्द्रकीर्तिजी — नागौर
पं० इंद्रलालजी शास्त्री — जयपुर
श्री नेमिचन्द्रजी प्र० स० वीर भारत — अलेसर
पं० वर्धमान पार्श्वनाथजी शास्त्री — सोलापुर
श्री उग्रसेनजी जैन मंत्री परिषद् परीक्षा बोर्ड काशीपुर
कु० इंदूबेन एम० दरबार — अमदाबाद
पं० अमोलखचन्दजी जैन उड़ेसरीय — इंदौर

'मित्र'की सेवाएँ

ले०—बाबूलाल चुनीलाल गांधी,
बी. ए. (ओनर्स) एस. टी., एम. जे. पी. एच.
विनीत, ईडर।

'जैनमित्र'की सेवाएँ विविध प्रकारसे हैं। भारत त्योहारोंका देश है। उसके अनेकविध धर्मोंमें जैन धर्मका स्थान सबसे अनोखा और चिरस्मरणीय रहा है। इस धर्मके बड़ेर पर्व हर-साल धूमधामसे मनाये जाते हैं। पर्यूषण, रक्षाबन्धन आदि पर्वोंकी विशेषताका ज्ञान हमें 'जैनमित्र' से ही मिलता है। पर्वोंकी महानता, इनके लाभ आदि बतलाकर 'मित्र' सारे जैन समाजकी सेवा कर रहा है।

'मित्र' हरसाल पर्यूषणपर्व विशेषांक निकालता ही है। पर्वोंके बारेमें अमूल्य जानने योग्य सामग्री देकर वास्तवमें 'मित्र, सच्चे मित्रका कार्य करता है।

साहित्यि क्षेत्रमें 'मित्र'ने काफी प्रगति की है। 'मित्र'में पं० स्वतंत्रजीकी कहानियाँ पढ़ने और मनन करने योग्य होती हैं। इन्हें पढ़नेसे जीवनमें नई दृष्टि मिलती है। वे कमीर मनुष्यकी नीचताको बतलाकर इसकी ओर तिरस्कार पैदा करते हैं और बादमें हमें मनुष्यत्वकी ओर खींचते हैं। इनकी भाषा सरल एवं भावपूर्ण होती है। इनके अलवा पौराणिक कथाएँ भी रोचक ढंगसे इनसे लिखी जाती हैं। 'मित्र'में अन्य विद्वान लेखकोंकी मनोरम्य कहानियाँ भी प्रसंगोपात प्रसिद्ध होती हैं।

'मित्र'में बोधपूर्ण कविताएँ भी आती हैं। वे पर्वोंके बारेमें एवं कमीर श्रद्धांजलिके रूपमें हरएक सप्ताहमें अवश्य प्रगट होती हैं। इनके प्रगट होनेसे समाजके लोगोंको ज्ञान मिलता है और छोटे बड़े कवियोंको भी प्रोत्साहन मिलता है।

समाज एवं राष्ट्रमें हररोज नयेर प्रश्न उठते हैं, जिनकी चर्चा विद्वत्तापूर्ण रीतिसे 'मित्र'में होती है। सरकारके नीतिपूर्ण कार्योंकी प्रशंसाके साथर उसकी भूलें बतानेमें भी मित्र कभी भी पीछे नहीं रहा।

मित्रमें बड़ेर महान पुरुषों एवं आचार्योंकी तस्वीरें भी छपी ही रहती हैं। इनके होनेसे मित्र अतीव रोचक बनता है। 'मित्र' तीर्थक्षेत्रोंकी भी तस्वीरें देकर इनकी प्रभावना बढ़ा रहा है।

'मित्र'में देश-विदेशके समाचार भी छपते हैं। इन समाचारोंसे देश-विदेशमें व्याप्त आंदोलनोंका ख्याल भी आता है।

'मित्र'में कई कई ग्रन्थोंकी टीका भी होती है।

भारतकी राष्ट्रभाषा हिन्दी है। 'मित्र' हिन्दी भाषामें ही प्रगट होता है। इसे पढ़नेसे कई गुजराती, मराठी भाई राष्ट्रभाषाको बड़ी आसानीसे पढ़ने और समझने लगे हैं। 'मित्र'की राष्ट्र-विषयक यह सेवा कभी नहीं भूली जा सकती है।

'मित्र'के सम्पादकोंमें श्री मूलचन्दकाकाजीका स्थान महत्वका है। वे बूढ़े हो गये हैं, लेकिन इनका हृदय, इनके विचार तो नये ही नये हैं। वे वास्तवमें नवयुवक हैं। इनके परिश्रम और धीरजके बलपर 'मित्र'की प्रगति दिन प्रतिदिन होती जा रही है। 'मित्र'के यशस्वी सम्पादक श्री काकाजी दीर्घ आयुष्य-वाले बनें - ऐसी प्रभु प्रार्थना।

'मित्र'का एक नया आकर्षण है— उपहार ग्रन्थोंकी भेंट। 'मित्र'के ग्राहकोंको उपहार ग्रन्थ बिना मूल्य भेंटमें हरसाल दिये जाते हैं। इन ग्रन्थोंकी एक छोटीसी लायब्रेरी ग्राहकके घरमें थोड़े ही वर्षोंमें बन जाती है। उपहार ग्रन्थ भेंटमें देनेका मुख्य उद्देश्य जैन-धर्मका प्रचार है। 'मित्र' ग्राहकोंको 'जैन तिथि-दर्पण' भी भेंटमें देता है।

'मित्र'के सचित्र विशेषांक भी प्रगट हुए हैं, इसमें कोई शक नहीं है।

इस तरह मित्र'ने समाज, धर्म एवं राष्ट्रकी अनेकविध सेवाएं की हैं।

'मित्र'के जीवनमें कई बाधाएं भी अवश्य आयी हुई हैं, लेकिन वह अपने पथपर हमेशा अडिग रहा है।

मेरा सबसे अच्छा मित्र "जैनमित्र"

[लेखकः—पं० ज्ञानचन्द्र जैन "स्वतंत्र"-सूरत]

मुझे अपने जीवनमें अनेक मित्र मिले हैं, जिनमें कई मित्र तो ऐसे हैं जोकि शरीरसे तो भिन्न हैं, पर आत्मा उन सबकी और मेरी एक है। पर जैनमित्र जैसा मेरा सबसे अच्छा मित्र मेरे जीवनमें पुनः आये ऐसा मुझे विश्वास नहीं है। मित्रता सभी मित्रोंसे होती है, पर उस मित्रतामें भी न्यूनाधिकता होना असंगत नहीं माना जा सकता। पर जैनमित्र मेरा ऐसा अच्छा मित्र है कि इस मित्रकी मित्रता मैं जीवनभर नहीं भूल सकता। मित्रने मित्रताके नाते जो मेरे ऊपर उपकार किये हैं उन उपकारोंके बोझसे मैं हमेशा दबा हुआसा रहूंगा।

जैनमित्र पढ़नेका शौक मुझे बचपनसे ही था और इसलिये था कि इसमें म. जिकचन्द परीक्षालय बम्बईका परीक्षाफल प्रतिवर्ष प्रकाशित होता है तभीसे मैंने जैनमित्रके साथ अप्रत्यक्ष रूपमें बुद्धिपूर्वक मित्रता कर ली थी। यह मेरे बचपनके विचार है और सन् १९२५ के विचार हैं। तब मैंने यह नहीं सोचा था कि जैनमित्र मेरे जीवनमें एक परोपकारी गुरुकी तरह आयेगा और उसके द्वारा मैं समाजमें प्रसिद्ध हो जाऊंगा। होली और बसन्त अपनी गतिसे भागते रहे, और ता० १७ दिस० १९५४ का वह दिन भी आगया कि मुझे आदरणीय श्री कापड़ियाजीकी सूचना और स्वीकृति अनुसार सूरतकी सूरत देखना पड़ी।

इसी रातको २ बजे मैं सूरत स्टेशनके मुसाफिरमें बिस्तर लगाकर लेट गया, पर मुझे नींद नहीं आयी, और विचार आते रहे कि कापड़ियाजी कैसे होंगे उनके साथ मेरी बनेगी या नहीं, यदि नहीं बनी तो? यह प्रश्न झकझोर रहा था, अतः तांगा करके श्री कापड़ियाजीके यहां आ गया, और कापड़ियाजीके वात्सल्य वाणीसे मुझे बड़ा संतोष मिला और हर्ष भी हुआ तब मेरे उपरोक्त विचार न जाने कहां गायब हो गये?

पिछले १५ वर्षसे मैं यहां श्री कापड़ियाजीके सभी कार्यक्षेत्रोंमें कार्य कर रहा हूं और प्रतिदिन मेरा उनका साथ ६-७ घण्टे रहता है। और श्री कापड़ियाजी मेरे इतने निकट हैं कि उनके सम्बन्धमें मैं क्या लिखूं क्या ना लिखूं यह मुझे सूझ नहीं पड़ता। श्री कापड़ियाजी जैन समाजके प्रख्यात व्यक्ति हैं।

जैनमित्रके द्वारा वे जो अपनी सेवायें दे रहे हैं वह भी किसीसे छिपी नहीं हैं। श्री. कापड़ियाजीके शब्दोंमें "ब्र० सीतलप्रसादजी मुझे जैसा सिखला गये

मैं वैसा ही करता हूं। सेठ माणिकचन्दजी मेरे धर्मपिता थे उनने ही मुझे सेवाके क्षेत्रमें उतारा है, अतः मैं अपनी अन्तिम दम तक समाजकी सेवा करूंगा" ये शब्द हमारे सम्माननीय वयोवृद्ध (७८ वर्ष) श्री कापड़ियाजीके हैं जो अपना अन्तिम सांस समाजकी सेवा करते हुवे ही छोड़ना चाहते हैं।

श्री कापड़ियाजीके जीवनमें अनेक संघर्ष आये, अनेक आपत्तियां आयीं, (पत्नी वियोग पुत्र बाबूभाईकी मृत्यु) वे भयंकर मानसिक बीमारीसे ग्रसित भी रहे, फिर भी सभी मुसीबतोंके सहनेको पार करते हुवे आज भी वे सामाजिक सेवामें पूर्ववत् दत्तचित्त हैं। पत्नी और पुत्रके स्वर्गवाससे कापड़ियाजीके सुनहरी बगीचेने असमयमें ही पतझड़का रूप धारण कर लिया था, फिर भी कापड़ियाजी अस्साहसी एवं भीरु नहीं हुवे और संकटोंसे लड़ते झगड़ते आगे बढ़ते ही रहे।

सन् १९४६ अक्टूबर मासमें आपने चि० डाह्याभाईको दत्तकपुत्र स्वीकार किया, अपने डाह्याभाईको सभी प्रकार योग्य बनाया और आज कापड़ियाजीका सुनहरा बगीचा पुनः हराभरा हो गया और उस बगीचेमें बसन्त जैसा यौवन आ गया है। आज कापड़ियाजीके पुत्र, पुत्रवधू, पौत्र-पौत्री आदि सभी कुछ हैं और वे प्रसन्न हैं, सुखी हैं, खुशी हैं।

कापड़ियाजी यह चाहते रहे कि मेरे मरनेके बाद मेरे सभी कामकाज एवं कार्यालय पूर्ववत् ही चलते रहें, इसी ध्येयको लेकर आपने चि० डाह्याभाईको दत्तक पुत्र लिया था। श्री कापड़ियाजीकी जो भावना थी वह उनके जीते जी सफल हो गयी इससे कापड़ियाजीको ही नहीं अपितु सभीके लिये हर्ष और आनन्दकी बात है। चि० डाह्याभाई सभी प्रकार सुयोग्य एवं होनहार युवक हैं वे सभी कार्य लगन एवं तन्मयताके साथ करते हैं।

श्री कापड़ियाजीके जीवनमें मैंने खासकर एक ही चीज देखी है और वह यह है कि खूब काम करना और काम करके भी नहीं थकना। कापड़ियाजी प्रेसमें ठीक ९ बजे आजाते हैं और शामको ६ बज जाते हैं, वे ८-९ घण्टे खूब ही श्रमपूर्वक कार्य करते हैं और थकान क्या वस्तु है ऐसा उनके मुँहसे कभी नहीं सुना। वे मुझसे कहते हैं पंडितजी! काम करनेमें ही मजा है काम करनेसे तन्दुरस्ती अच्छी रहती है, खूब काम करना चाहिये। कमीर तो मैंने देखा है कि श्री कापड़ियाजी श्रमपूर्वक गुरुतर कार्य भी सहजमें कर लेते हैं। जैनमित्र कापड़ियाजीके एक२ रोममें रमा है, बसा है। जैनमित्र और कापड़ियाजी, कापड़ियाजी और जैनमित्र इन दोनोंमें अब कोई अन्तर नहीं। जिनने जैनमित्र न देखा हो वे कापड़ियाजीको देख ले, जिनने कापड़ियाजीको न देखा हो वे जैनमित्र देखलें, बात एक ही है।

पाठकगण! उपरोक्त कथनसे समझ सकते हैं कि श्री कापड़ियाजी और जैनमित्र इन दोनोंका एक प्रकारसे अविनाभावी सम्बन्ध है, और यह सत्य है कि श्री कापड़ियाजी अपनी अन्तिम दम जैनमित्रकी सेवामें ही तोड़ेंगे। श्री कापड़ियाजीकी एक आत्मजा दमयन्ती है (जो कि स्व० बाबूभाईसे लगभग २॥ वर्ष छोटी है) जिसकी शादी कापड़ियाजीने २०-१-४८ को की थी, वह [illegible] एवं खुशहाल है व भरी पूरी।

समझदार लोग ठीक ही कहते हैं कि नींवके जिस पत्थर पर मकान खड़ा किया जाता है वह दुनियाकी नजरोंसे ओझल रहता है। पर मकानके निर्माणमें जो काम नींवके पत्थरने किया है वैसा काम अन्य पत्थर नहीं कर सकते और नींवका पत्थर इतना गंभीर एवं सहनशील है कि वह कभी भी जनताके समक्ष नहीं आना चाहता है। यही हिसाब मेरे विकास, प्रचार और प्रकाशमें श्री कापड़ियाजीका हाथ नींवके पत्थरकी तरह है।

श्री कापड़ियाजी मेरे लिये हमेशा ही उदार रहे हैं, उनके सहयोग और सहकारसे ही मैं आगे बढ़ा हूं। इस जगह श्री कापड़ियाजी और उनके पुत्रवधू

जैनमित्रका जितना उपकार माना जावे उतना थोडा है। पुत्रवत् शब्द मैं जानबूझ कर प्रयोग कर रहा हूं, कारण कि कापडियाजीने जैनमित्रका पुत्रकी तरह ही लालन पालन पोषण एवं संवर्धन किया है।

जैनमित्रके द्वारा समाज सेवा करनेका जो मुझे सुअवसर प्राप्त हुआ है उसका श्रेय केवल कापडिया-जीके हिस्सेमें ही आता है। क्योंकि जैन मित्र और श्री कापडियाजी एक ही हैं।

जैनमित्र जैसे परमोपकारी मित्रको पाकर मैं जो अपने आपको भाग्यशाली मानता हूं वह दिन शीघ्र आये कि हम सब हर्ष प्रकाशके वातावरणमें जैन मित्रका एक शताब्दि महोत्सव मनाये श्री कापडियाजी और उनके परिवारको निःश्रेयसकी प्राप्ति हो तो इन मंगल कामनाओंके साथ मैं विराम लेता हूं।

卐

मित्र सूर्यकी तरह सदा समय पर निकलना चला आ रहा है, और मित्र सूर्य ही की तरह ६० वर्ष हो चुके पर तनीक भी अव्यवस्थिता नहीं हुआ। मेरी दृष्टिमें इस समय 'जैनमित्र' और 'जैन सन्देश' ये दो साप्ताहिक पत्र जैन समाजमें बहुत अधिक प्रचलित हैं। दोनों ही अपने अपने ढंगमें अद्वितीय हैं। 'मित्र' ६० वर्षोंसे लगातर जैन समाजकी सेवा करता चल रहा है। इसके लिए मेरी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि है। 'मित्र'के सम्पादक श्री कापडियाजी और व्यवस्था सम्पादक श्री ज्ञानचन्द्रजी स्वतन्त्र बधाईके पात्र हैं; जिनके कारण पत्र उचित रीतिसे प्रगति कर रहा है।

—पं० अमृतलाल साहित्याचार्य जैन दर्शनाचार्य, काशी।

शुभ सन्देश-हीरक जयन्ती

समाचार पत्र समाजका दर्पण कहा जाता है, यह उक्ति अन्य पत्रोंपर चरितार्थ हो या न हो किन्तु जैनमित्र पर अवश्य चरितार्थ होती है। मित्र जैन समाजका सही मायनेमें दर्पण रहा है, और है। दि० जैन प्रांतिक सभा बम्बईका मुखपत्र होते हुवे भी मित्र सारे जैन समाजका ही प्रतिनिधित्व करता रहा है। ऐसे प्रमुख पत्रके ६० वर्ष सफलता पूर्वक समाप्त होनेके उपलक्षमें हीरकजयंती मनाया जाना समाज ही गौरवका विषय एवं आदर्श प्रस्तुत करने-वाला है।

सेठ मूलचन्दजी किसनदासजी कापड़ियाके ही सद् प्रयत्नोंका फल है जो मित्रको यह शुभ दिन देखनेको मिला। वास्तवमें मित्रका इतिहास कापड़िया-जीका इतिहास है जो नाना प्रकारकी परिस्थिति-योंमें भी इसका संपादन एवं संचालन भली प्रकार करते रहे हैं। इस अवसर पर उनका भी सम्मान किया जाना अति आवश्यक है। इस अवसर पर जैनधर्मभूषण श्री० ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी याद आये बिना नहीं रहते। जिनके सहयोगने सोनेमें सुहागेका कार्य किया। वे चाहे कहीं भी रहे किन्तु मित्रके लिये संपादकीय लेख भेजनेमें हमेशा व्यवस्थित रहें।

उनके लेख सिद्धांत मर्मसे परिपूर्ण रहते थे, उन्होंने जहां सिद्धांतका मर्म समाजके सामने रखा वहां पुरातत्त्वके अनुसंधानके स्वरूप एवं फल भी समाजको बताये।

समाज एवं धर्मके विभिन्न आंदोलनोंमें 'मित्र'ने सफलता पूर्ण नेतृत्व एवं पथ प्रदर्शन किया है। ऐसे पत्रसे समाजको भविष्यमें भी बहुत बड़ी आशा है।

मेरी मंगलकामना है कि पत्र भविष्यमें भी अपने समाजका भलीप्रकार पथप्रदर्शन करता रहे, और जैनधर्मकी प्रभावनाका महत्त्वपूर्ण साधन बने एवं समाजकी एकताके लक्ष्यका प्रमुख साधक बने।

—बा. छोटेलाल जैन रईस-कलकत्ता।

माणिकचन्द दिगम्बर जैन परीक्षालय बम्बई

उत्तरोत्तर उन्नति पथपर

लेखक- विद्यावाचस्पति न्या० के० धर्मालंकार पं० वर्धमान पा० शास्त्री
मन्त्री मा० परीक्षालय, बम्बई-सोलापुर।

बम्बई प्रांतिक दि० जैन समाका हीरक महोत्सव मनाया जा रहा है, किसी भी व्यक्तिको जिस प्रकार दीर्घ जीवनको पाने पर जो आनंद होता है, उसी प्रकार संस्थाको भी दीर्घ जीवन पाने पर आनंद होना साहजिक है।

आज बम्बई प्रांतिक सभाके जीवन्त कार्य दो विद्यमान हैं। एक 'जैनमित्र' दूसरा माणिकचन्द हीराचन्द दि० जैन परीक्षालय। इन दोनों कार्योंसे लोक-शिक्षणका ध्येय साध्य किया जा रहा है, और दूसरे विभागोंमें बन्द होनेपर भी श्री बम्बई प्रांतीय सभाकी महत्ता ज्योंकी त्यों कायम है यह निःसंदेह कहना होगा।

जैनमित्रके द्वारा समाजमें साठ वर्षोंसे जनजागृतिका कार्य चल रहा है, यही कारण है कि आज वह अपनी नियमित व्यवस्थाके साथ समाज सेवा कर रहा है, आज उसका भी हीरक महोत्सव अंक प्रकाशित हो रहा है। इसका श्रेय जैन-मित्रके लिए अनवरत श्रम करनेवाले वृद्ध समाज-सेवक श्री कापडियाजीको है। समाज उनकी सेवाओंके लिए कृतज्ञ रहेगा, उनको दीर्घ जीवन प्राप्त हो ऐसी हम भावना करें तो अप्रासंगिक नहीं होगा।

प्रांतिक सभाका दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है "माणिक-चन्द बम्बई परिक्षालय" है इसने समाजके बच्चेंको धार्मिक शिक्षणसे शिक्षित करनेका प्रशस्त कार्य किया था।

बम्बई परीक्षालयका जन्म समाजमें ऐसे समयमें हुआ, जब कि उसकी परम आवश्यकता थी, समाजमें संस्कृत और धार्मिक शिक्षणका बिलकुल अभाव था, संस्कृतके विद्वान नास्तिकोंमें ही थे। सर्वार्थ-सिद्धि तक पढ़ा हुआ विद्वान् कोई एकाध निकलता तो उसका सन्मान यथेष्ट होता था।

ऐसी स्थितिमें स्व० दानवीर सेठ माणिकचन्द-जीको चिंता हुई कि अगर यही हालत रही तो समाज धर्मज्ञानसे विमुख होगा क्योंकि हमारे सभी धर्मशास्त्र संस्कृत प्राकृत भाषामें हैं, इनको पढ़नेवाले नहीं होंगे तो इनका क्या होगा।

अतः आपने जगह२ जैन पाठशालायें खुलवाई और उनकी परीक्षाके प्रबन्धके लिए "श्री माणिक-चन्द हीराचंद दि.जैन परीक्षालयके नामसे इस संस्थाकी स्थापना की, इसमें उनके सहयोगी स्व० सेठ हीरा-चन्द नेमचन्द दोशीका सहयोग तो था ही, साथमें

स्व० धर्मवीर सेठ रावजी सखाराम दोशीने प्रारंभकालसे ही मंत्रित्वके भारको सम्हालकर इसकी उन्नति की। आज समाजमें जितने भी शास्त्रीय विद्वान नजर आ रहे हैं, उनके द्वारा जो धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक और संशोधनात्मक कार्य हो रहे हैं, उनका श्रेय इसी संस्थाको मिलना समुचित होगा, उन सबकी संख्या कई सौसे गिनाई जा सकती है।

स्व० सेठ माणिकचन्दजीने इस परीक्षालयका प्रबन्ध कुछ समय बाद बम्बई प्रान्तिक सभाके जुम्मे किया और उसके प्रबन्धके लिए सेठजीने अपने धर्मादाय ट्रस्टसे ७ टकेका व्याज मिलता रहे ऐसा प्रबन्ध हुआ। तबसे यह परीक्षालय बम्बई प्रांतिक सभाकी ओरसे चल रहा है।

प्रारम्भमें १०-२० छात्रोंकी उपस्थितिसे कार्यका श्रीगणेश हुआ, कुछ समय तक तो सेठ रावजी सखाराम दोशी स्वयं अपने हाथसे ही इस कार्यको करते थे। परन्तु दिनपर दिन संख्या बढ़ने लगी। समाजमें जैन पाठशालायें, संस्कृत विद्यालय, ब्रह्मचर्याश्रम आदिकी वृद्धि होने लगी, अतः संस्थाका भी कार्य बढ़ने लगा, सभी परीक्षक विद्वान् निःशुल्क परीक्षालयके कार्यमें योग देते थे और उत्तीर्ण होनेवाले परीक्षार्थियोंको पारितोषिक भी दिया जाता था।

हमारा सम्बन्ध इस परीक्षालयसे १९३२में आया, धर्मवीर स्व० रावजी सखाराम दोशीने अपने जैन बोधकका संपादन और खासकर परीक्षालयके सुप्रबंधके लिये हमें यहां बुलाया। घण्टे घण्टे स्वयं धर्मवीरजी और स्व० ब्र० जीवराजजी दोशी हमसे राजवार्तिक गोम्मटसारादि ग्रन्थोंका अध्ययन भी करते थे।

सन् १९३२में करीब १६०० छात्र इस परीक्षालयका लाभ ले रहे थे। इस कार्यमें नियमबद्धता आवे और अधिक संख्यामें परीक्षार्थी लाभ लेवें, परीक्षा समय पर हो; प्रश्न पत्र रोल नं० आदि संस्थाओंको समय पर मिले एवं परीक्षाफल भी समय पर प्रकाशित हो, इसके लिये हर तरहसे प्रयत्न किया गया। ऐसे तो यह कार्य पराधीन है तथापि विविध मार्गोंसे संस्था संचालक, परीक्षार्थी परीक्षक आदिका उत्साह वर्धन करते हुए संस्था आगे बढ़ी।

छात्रोंको पारितोषिक आदि संस्थाने देनेकी योजना की, परीक्षाफल व प्रश्नपत्र समयपर आवे इनके लिए परीक्षक विद्वानोंको अत्यन्त प्रमाणमें सेटिंग और जंचाई चार्ज देनेकी व्यवस्था की। अतः संस्थाका व्यय भी बढ़ने लगा तो संस्थाओंने अत्यल्प प्रमाणमें शुल्क भी देना प्रारम्भ किया। अतः संस्थाके प्रति आत्मीयताकी वृद्धि हुई।

सन् १९३३-३४ से संस्थाके कार्यमें परामर्श देनेके लिए विद्वानोंकी एक उपसमिति भी बनाई गई। इस कमेटीमें धर्मवीर सेठ रावजी सखाराम दोशी मंत्री परीक्षालयके अलावा पं० वंशीधरजी सोलापुर, पं० बंशीधरजी इन्दौर, पं० जिनदासजी, पं० वर्द्धमानजी शास्त्री सोलापुर, पं० मक्खनलालजी शास्त्री मोरेना, पं० खूबचन्दजी इन्दौर इसप्रकार ६ सदस्य थे।

सन् १९३५ से जब हमने मंत्रित्व कार्य सम्हाला तबसे यह उपसमिति परीक्षा बोर्डके रूपमें ही हुई, जिसके अध्यक्ष श्री सेठ गोविंदजी रावजी दोशी नियत हुए। स्व० सेठ ठाकोरभाई भगवानदास जौहरीकी बलवती इच्छा थी कि परीक्षालयकी उन्नति और संरक्षणमें धर्मवीर स्व० रावजी सखाराम दोशी वर्षों इस कार्यमें खपे हैं, अतः बोर्डका अध्यक्ष उन्हीका सुपुत्र हो, और हमें मंत्रित्व स्वीकार करने आग्रह किया तो हमने भी शिक्षणक्षेत्रकी सेवामें हमारी दिलचस्पी होनेसे स्वीकारता दी। तबसे अबतक हम यथाशक्ति परीक्षालय द्वारा इस परीक्षालयकी सेवा करते आ रहे हैं। संस्थाकी प्रगति सर्वसाधारण किन प्रकार हुई है, यह समाजको विदित है। हमारे पास सन् १९२० से क्रमबद्ध रेकार्ड है, उसके आधार पर परीक्षालयकी प्रगतितालिका निम्न रूपसे बन सकती है—

सन्	विद्यार्थी संख्या	सन्	विद्यार्थी संख्या
१९२०	६०५	१९२१	८००
१९२२	९७५	१९२३	१०००
१९२४	१०००	१९२५	१०२५
१९२६	१३५०	१९२७	१४६०
१९२८	१४००	१९२९	१५२५
१९३०	१५२५	१९३१	१२६०
१९३२	१६९०	१९३३	२२००
१९३४	३७३०	१९३५	३५०१
१९३६	३७५०	१९३७	--
१९३८	३९७५	१९३९	४१००
१९४०	४३३५	१९४१	४७६०
१९४२	५३००	१९४३	६२५०
१९४४	६७९५	१९४५	६९३८
१९४६	७१४६	१९४७	८६१९
१९४८	८६००	१९४९	७२००
१९५०	७५०२	१९५१	९१९७
१९५२	९६८२	१९५३	९६६०
१९५४	९४८९	१९५५	१०३१२
१९५६	१०३७४	१९५७	८६७२
१९५८	८५०२	१९५९	९२७०
१९६०	१०३००		

इस प्रकार १९२० में ६०५ तो १९६० में १०३०० विद्यार्थी धर्म परीक्षामें बैठे थे।

जैन समाजके करीब ३८० संस्थायें इस संस्थासे लाभ ले रही हैं, परन्तु सन् १९५७से समाजमें कुछ एक अन्य संस्थायें भी परीक्षा लेती हैं, अतः परीक्षार्थीकी संख्यामें कुछ न्यूनाधिकता प्रतीत होती है, तथापि आपकी संस्थाके प्रति सामाजिक संस्थाओंके हृदयमें श्रद्धा और आस्था है। यही कारण है कि परीक्षामें उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, विहार, बंगाल, आसाम, आंध्र, केरल, पंजाब, बम्बई; कर्नाटक, महाराष्ट्र, मद्रास आदि सर्व प्रांतके छात्र उपस्थित होते हैं।

संस्थाने छात्रोंके लिए शील्ड व विशेष पुरस्कारोंकी योजना की है, परीक्षकों विद्वान भी बहुत अस्मीयताके साथ प्रश्नपत्र व परीक्षाफल समय पर भेजनेमें सहयोग देते रहते हैं, परीक्षा बोर्डके विद्वान सदस्य, बम्बई प्रांतिक सभाके मन्त्री श्री जयंतीलालभाई, उपप्रमुख सेठ ठाकोरभाइ पानाचन्द जोहरी आदि समयर पर सत्परामर्श देते रहते हैं। श्री कापडियाजी परीक्षाफल मित्रमें प्रकाशनमें योग देते हैं।

अतः परीक्षालयके कार्योंमें जो गुण व उत्कर्ष प्रतीत होता हो तो उसका श्रेय उपर्युक्त सभी महानुभावोंको देना चाहिए, तथापि हम एक बात बहुत अभिमानके साथ कह सकते हैं कि परीक्षालयका कार्य हम बहुत श्रद्धापूर्वक निष्पक्षता से एवं एक पवित्र सेवा समझकर करते हैं, इसमें सामाजिक किसी भी मतभेदोंको हम पास भी आने नहीं देते। और यही एक मात्र कारण है कि परीक्षालयकी प्रतिष्ठा यथापूर्व कायम है।

श्रद्धांजलि !

जैनमित्र अपने ६० वर्ष पूर्ण करके ६१ वें वर्षमें पदार्पण कर रहा है व हीरक जयन्ती अङ्क निकाल रहे हैं यह प्रसन्नताका विषय है। हम मित्रके हितेच्छु व पाठक होनेके नाते मित्रकी सफलता हृदयसे चाहते हैं, अपनी श्रद्धांजलि भेज रहे हैं।

सेठ नथमलजी सरावगी, सहडोल।
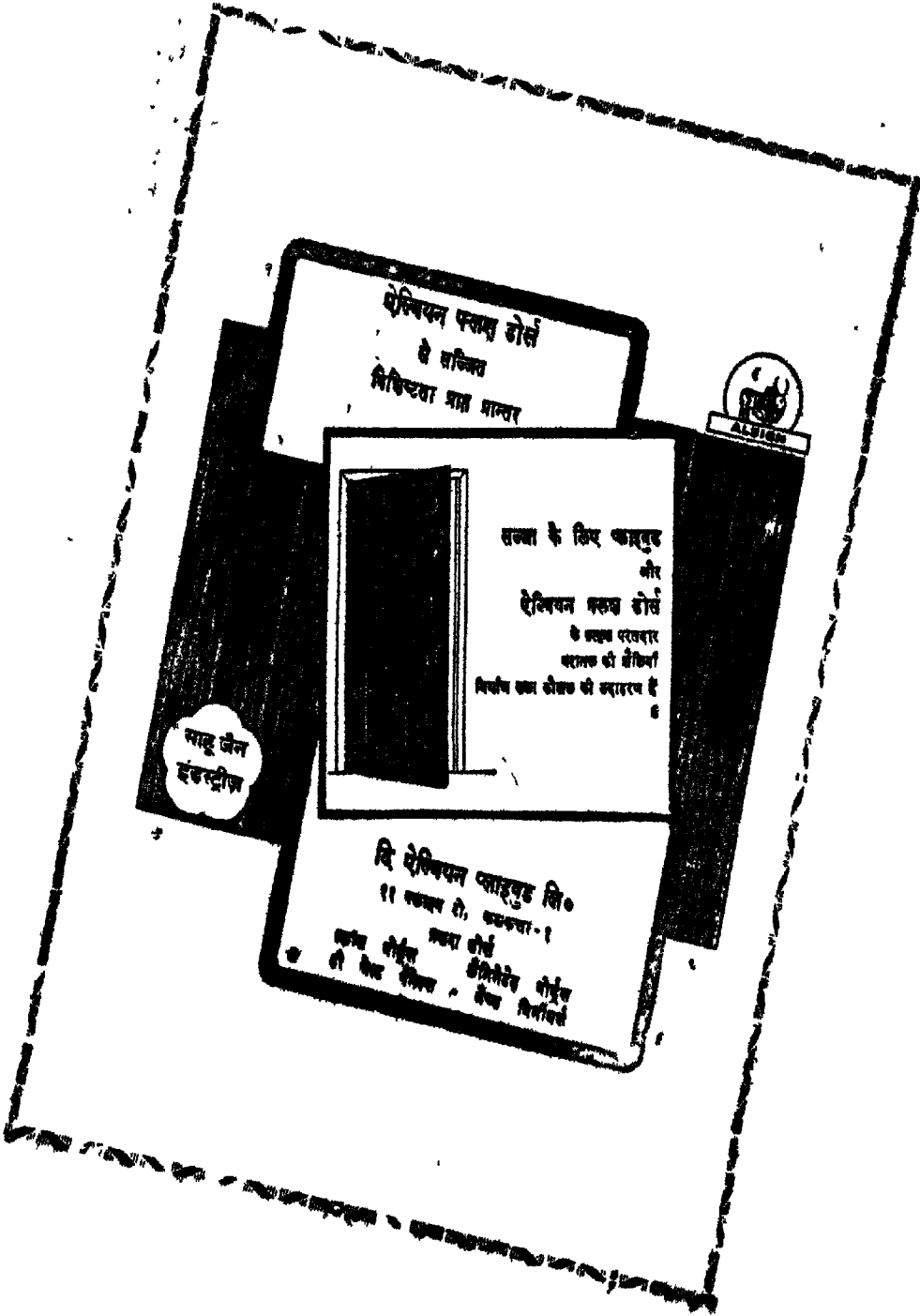
ऐल्बियन फ्लश डोर्स
से सज्जित
सज्जा के लिए प्लाइवुड
और
ऐल्बियन फ्लश डोर्स
साहू जैन
इंडस्ट्रीज
ALBION
दि ऐल्बियन प्लाइवुड लि०

दि० जैन समाजके महा विद्वान्-स्याद्वाद-वारिधि वादिगज-केशरी--

पं० गोपालदासजी बरैया, मोरेना

आप दि० जैन प्रांतिक सभा-बम्बईके एक स्थापक, प्रथम मन्त्री व जैनमित्रके प्रथम सुयोग्य सम्पादक थे। आपने मित्रकी सम्पादकी ९ वर्ष तक अतीव सफलता व उत्तरोत्तर उन्नति पूर्वक बम्बईमें की थी। आप तो प्रां०सभा व जैनमित्रके एक स्तंभरूप थे।

प्राचीन घोघा (सौराष्ट्र) बंदरमें गुजराती दि० जैन मंदिरमें विराजित धातुका श्री १००८ सहस्रकूट चैत्यालय।

४० इंच ऊँची १८ इंच चौड़ी चारों ओर व भट्टारक १०८ श्री विद्यानन्दी (सूरत गद्दी) द्वारा सं० १५११ में घोघा केन्द्र दि० जैन संघ द्वारा प्रतिष्ठित। यह पूरी १००८ धातुकी प्रतिमाओंका व उत्तम बनावटका सहस्रकूट चैत्यालय है। भारतमें संगमर्मरके तो ऐसे कई चैत्यालय हैं लेकिन धातुका यह चैत्यालय एक ही होनेका हमारा अनुमान है। इसका निर्माण घोघामें ही हुआ था तब घोघा बन्दर कैसा समृद्ध नगर होगा? आज तो यहाँ एक ही गृह दि० जैनका है, मन्दिर तीन व प्रतिमाएं ३५० करीब हैं
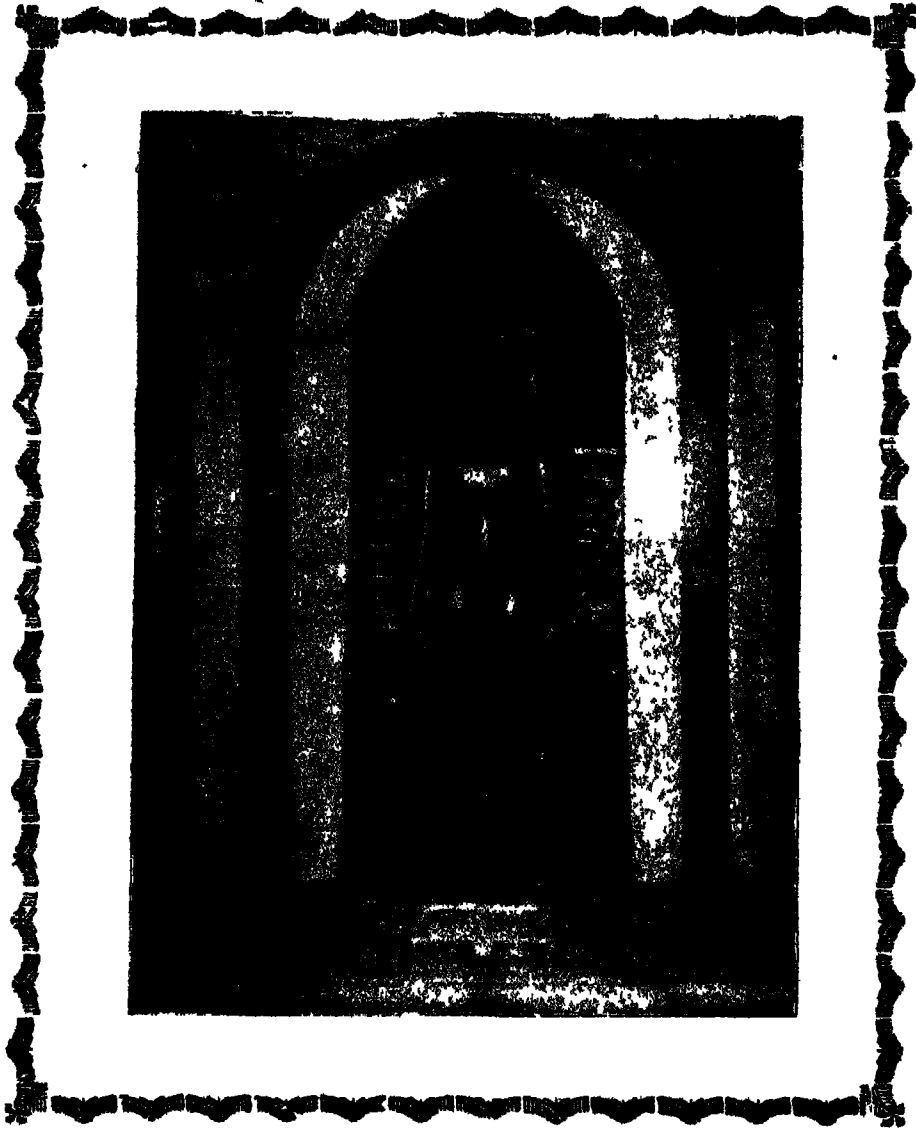
भावनगर (सौराष्ट्र) में प्राचीन प्रतिमा

श्री १००८ श्री चन्द्रप्रभु, ऊंचाई इञ्च ४९ काले संगमर्मरकी व सं० १७१९ में प्रतिष्ठित
ऊपर कानडीमें लेख है। आजू बाजू यक्ष यक्षिणी दीख रहे हैं।
अतीव मनमोहक यह प्रतिमा है।
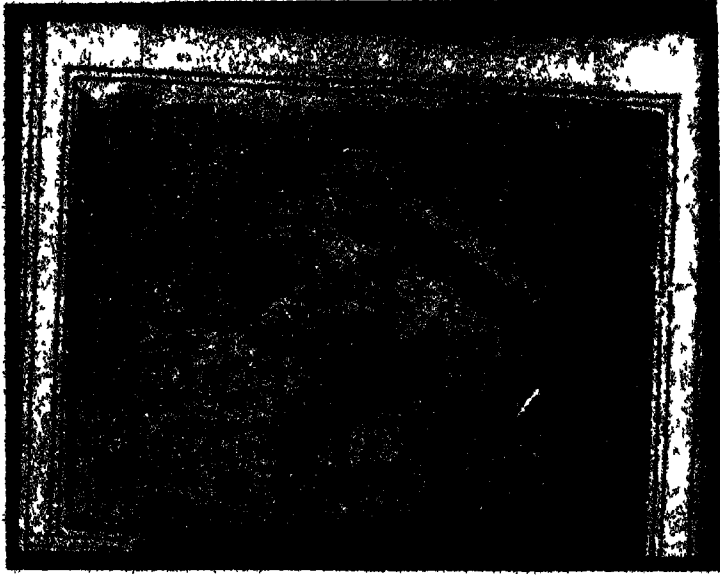
श्री १०८ भट्टारक श्री विद्यानन्दस्वामीजी

श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वय–बलात्कारगण देहली 'गद्दीके सूरत' शाखाके भट्टारकका यह चित्र सं० १५२६ में हस्तलिखित सुनहरी यशोधर-चरित्रसे लिया है। आप सं० १४९९ से १५२७ तक ये हो गये है।

काष्ठासङ्घ नन्दीतटगच्छके भट्टारक श्री १०८ श्री सुरेन्द्रकीर्तिजी गोपीपुरा, सूरत गद्दी सं० १७४४ से ७२ तक आप हो गये थे, अंकलेश्वरके एक हस्तलिखित पुस्तकसे हस्तलिखित चित्र।

परम पूज्य

सिद्धक्षेत्र श्री तारंगाजी

वरदत्त रायरु इन्द्र मुनींद्र, सायरदत्त आदि गुणवृंद ।
नगर तारवर मुनि उठ कोड, वंदूं भावसहित कर जोड ॥

* * *

'तारंगागिरि क्षेत्रको, वन्दौं मन वच काय ।
धन्य धन्य शिवपुर गय, उठ कोटि मुनिराय ॥

आठ करोड मुनिओनुं मुक्तिस्थान श्री तारंगाजी सिद्धक्षेत्र महेसाणाथी तारंगाहिल स्टेशन थई जवाय छे. अत्रे मूलनायक श्री संभवनाथजीनुं मूल मंदिर छे तथा आजू बाजू बे नानां नानां पहाडो ऊपर सिद्धगत मुनिओनां चरणो छे.

अत्रे श्वेतांबर जैनोनुं घणाज ऊंचा शिखरवाळुं श्री संभवनाथ मंदिर पण छे. पावागढ गिरनार पालीतानानी यात्रा जतां आ तारंगाजी सिद्धक्षेत्रनी यात्राये अवश्य जवुं जोईये.

क्षेत्रनी कमीटीना प्रमुख—तीर्थभक्त शिरोमणि जैन जातिभूषण जैन दीपक सेठ जीवणलाल गोपाळदास बखारीया कलोलवाळा छे.

मंत्री—शेठ मूळचंदभाई जेचंदभाई दोशी सुदासणावाळा छे.

आ क्षेत्र संबंधी पत्र व्यवहार नीचे प्रमाणे करवो:—

मुनीम, श्री तारंगाजी दिगंबर जैन कोठी,
मु० तारंगाजी पो० टींम्बा (जिल्ला महेसाणा, गुजरात)

पं० नाथूरामजी प्रेमीके संस्मरण

[ले०—बाबू कृष्णलाल वर्मा, माटूंगा-बम्बई]

यह पुण्यात्मा सं० १९३६ में धराधामपर आया और सं० २०१६ ३० जनवरीको ८० वर्षकी उम्र बिता, दुनियाके अनेक कडुवे मीठे अनुभव प्राप्त कर चला गया।

गरीब घरमें पैदा हुआ था; अपने अध्यवसायसे उसी घरको धन-धान्यसे परिपूर्ण कर, लखपतियोंकी श्रेणीमें नाम लिखा, अपने पौत्रों-पौत्रवधुओं और पुत्रवधूके लिए लाखोंकी सम्पत्ति छोडकर वह उद्योगी आत्मा परलोकको चला गया है।

धार्मिक, सामाजिक और व्यावहारिक कार्मोंमें जो अविवेकपूर्ण प्रवृत्तियाँ थीं उनमेंसे अनेकोंको मिटा वह विवेकी आत्मा चल बसा।

साहित्य-सेवक, समाज-सुधारक, कुरीति विघातक, मानवता-पूजक, प्रेम प्रचारक और श्रमकी महत्ताका संस्थापक यह महात्मा स्वर्गका अतिथि हो गया।

जिसने गरीबीमें किसीके सामने अनुचित रूपसे सर न झुकाया और धन पाकर कभी घमंडका प्रदर्शन न किया वह आत्मा नाथूराम प्रेमीके नामसे परिचित अपने पौद्गलिक शरीरको यहीं डालकर अन्यत्र चला गया।

× × ×

दिल्लीमें जब कोरोनेशन दरबार हुआ था तबकी बात है। उस समय सारे हिंदुस्तानसे कई जैन लोग भी जमा हुए थे। मैं भी स्व० अर्जुनलालजी सेठीके साथ गया था। पहाड़ीधीरज पर स्व० जग्गीमलजीके यहां एक दिन अनेक लोग जमा हुए थे। उनमें 'प्रेमी'जी भी थे। इनका नाम तो हमारे 'वर्द्धमान जैन विद्यालय' जयपुरमें अक्सर जैन विद्वानोंकी चर्चा होती थी, तब लिया जाता था; परन्तु उस दिन उनकी सौम्य मूर्तिके दर्शन कर प्रसन्नता हुई। सेठीजीने उपस्थित लोगोंसे उनका परिचय कराया और उनकी विद्वत्ताकी प्रशंसा की।

× × ×

सेठीजीके लड़के प्रकाशचन्द्रके जन्मोत्सव पर जयपुरमें उनके घर पर ही एक कवि सम्मेलन हुआ

था, उसमें यह समस्या दी गई थी 'आरजभूमें आरज राजा'। उस समय पञ्चम जोर्ज राजा थे। सभी लोगोंकी कविताएं और वक्तृताएं हुईं। मैंने सारा हाल लिख भेजा, प्रेमीजीने संक्षेपमें वह जैन हितैषीमें छापा और मुझे सूचना दी 'संक्षेपमें अपनी बात कहनेकी आदत डालना चाहिए।

मैं सेठीजीके लड़के प्रकाशचन्द्रको शांतिनिकेतन बोलपुरमें दाखिल कराने गया था तबकी बात है। मैं गेस्ट हाउसमें सो रहा था। उस समय बाहर 'राइट टर्न लेफ्टटर्न' की आवाज सुनाई दी। मैं कम्बल ओढ़कर बाहर निकला तो देखता हूं कि पचास-साठ लड़के पानीके भरे मटके लिए दौड़े जा रहे हैं। मालूम हुआ कि पासके गांवमें आग लग गई थी उसे बुझानेके लिए वे लड़के गये थे। उनका त्याग देखकर मैंने उनको मन ही मन प्रणाम किया।

मैंने उस रातका सारा हाल लिखकर प्रेमीजीके पास भेज दिया। उन्होंने वह हाल छापा और मुझे ऐसे हाल लिखनेको उत्साहित किया।

सन् १९१५ में मैंने प्रेमीजीको लिखा कि मैं बम्बई आना चाहता हूं। उन्होंने मुझे बम्बई बुला लिया और बड़े स्नेहके साथ अपने कार्यालयमें रख लिया। कई दिनों तक तो उन्होंने भोजन भी अपने साथ ही कराया। फिर अलग रहना चाहा तो उन्होंने ताड़देव पर जुबिली बागमें एक रूम दिला दिया।

मैंने 'जैन संसार' नामका मासिक पत्र आरम्भ किया। प्रेमीजीने मुझे सलाह और लेखोंसे सहायता की।

मैंने सट्टा करना आरंभ किया। प्रेमीजीने कहा, "यह काम पढ़े लिखे लोगोंका नहीं है। अन्योंको सट्टेमें पैसा कमाते देखा इसलिए मैंने प्रेमीजीकी बात नहीं मानी। कुछ हजार इसके द्वारा कमाये इससे हौंसला बढ़ा; मगर फिर ऐसी हानि हुई कि-"कमाई तो सारी गई ही; साथ ही मैं कई हजारका कर्जदार हो गया। सलाह मिली कि किसीको एक पैसा भी मत दो। यहांसे चले जाओ। तो प्रेमीजीने कहा, "भाग जाना कायरता है; बेईमानी है। इससे जीवन नष्ट हो जायगा। तुम खुद अपनी निगाहमें गिर जाओगे। जिस तरह तुमने हँसतेर नफा जेबमें रखा था, इसी तरह हँसतेर नुकसानकी भरपाई करो। और निर्णय करो कि भविष्यमें सट्टा नहीं करोगे।"

मैं खुद भी भागना नहीं चाहता था। मैंने प्रेमीजीकी सलाह मानी। जो कुछ था सब दे दिया। बाकीके लिए वादा किया। धीरेर सब चुका दिया। और यद्यपि मैं पैसेदार नहीं हूं तथापि मुझे इस बातका अभिमान है कि मैं प्रामाणिक और पाकसाफ जीवन बिता रहा हूं। और इसके लिए मैं स्वर्गीय प्रेमीजीका भी कृतज्ञ हूं।

एक समयकी बात

एक दिन हम लेनदार और देनदारकी बात कर रहे थे। मैं उन दिनों बाजारमें फिर कर आया था। मैंने कहा-एक लेनदारने अपने देनदारके घरका सारा सामान कुर्क करवा लिया और उसे नीलाम कराकर अपना रुपया वसूल किया। रुपयेकी चीजके चार आने भी वसूल नहीं हुए। सुना गया कि दो सौ रुपये कर्ज दिये थे। दस सालमें उसने सवाई ड्योढ़ीके हिसाबसे दो हजार रुपये वसूल कर लिये थे तो भी लेनदारने बेचारे देनदारका पिण्ड न छोड़ा, आखिरमें गरीबका सारा सामान बिकवा लिया।

"कैसा है यह कर्जका धन्धा और कैसी है इस धन्धेकी रक्षा करनेवाली हमारी सरकार।"

दादाने एक निःश्वास डालकर कहा, "मेरा कुटुंब भी इस तरहके लेनदारका शिकार बन चुका है। हम उन दिनों इतनी गरीबीमें पड़ गये थे कि दोनों वक्तका भोजन भी कठिनतासे जुटता था।

"एक दिन दाल-भात सीझकर तैयार हो चुके थे और हम भाई बहन थालियाँ लेकर भोजन करनेको तैयार बैठे थे। भोजन परसा जानेवाला था।

उसी समय हमारा लेनदार सिपाहियोंको लेकर घरके बरतन भांडे इत्यादि कुरक करने आया।"

"मेरे पिताजीने कहा– बच्चोंको खा लेने दो फिर बरतन लेजाना।"

उस चांडालने कहा– "हम तुम्हारे नौकर नहीं है। हवालदार ! डाल दो डाल चावल चूल्हेमें उठालो तपेलियाँ छीन लो बच्चोंके हाथसे थालियाँ और ग्लास।" यह कहतेर दादाकी आँखोंमें क्रोधकी लाली दौड़ गई। मेरे शरीरमें भी गुस्सेकी उत्तेजना फैल गई।

कुछ क्षण शांति रही। फिर दादाकी आँखोंमें पानी भर आया। वे दुःखभरे शब्दोंमें बोले–सिपाही और लेनदार सबकुछ ले गये। हमारा सारा कुटुंब रातभर भूखा ही सो रहा। मिट्टीके कुल्हड़से गट-गटकर ठंडा पानी पी कर सबने भूखकी ज्वाला बुझाई और हम रोते हुए बच्चोंको निद्रा देवीने अपनी शीतल गोदमें सुलाकर हमारे हृदयकी आग बुझाई।

"ऐसे हैं ये लेनदार जो साहूकार कहलाते हैं, और ऐसे हैं ये सिपाही जो हमारे रक्षक माने जाते हैं। अगर सिपाही चाहते तो हमें खानेकी इजाजत दे सकते थे।"

× × ×

प्रेमीजी अपनी जान पहचानके लोगोंको उनकी आवश्यकताके वक्त कर्जके तौर पर रुपये देकर उनकी आवश्यकता पूरी करते थे। सिर्फ आठ आने सैंकड़ा मासिक व्याज पर रुपये देते थे।

एक बार व्यवहार चतुर एक भाईने प्रेमीजीसे कहा, "आप अमुक रकम खर्च कीजिए तो आपकी दो तीन पुस्तकें पाठ्य पुस्तककी तरह मंजूर करा दी जायंगी।"

प्रेमीजीने कहा, "पैसेखर्च कर मैं अपनी पुस्तकें मंजूर कराना नहीं चाहता। पुस्तकें अपने गुणहीसे मंजूर होनी चाहिए।" सचमुच ही उनकी अनेक पुस्तकें, पाठ्य पुस्तकोंकी तरह अपने गुणोंहीसे स्वीकृत हुई थीं।

हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तकें छपाई, सफाई व भाषा सौष्ठवकी दृष्टिसे ही उत्तम नहीं हैं; परन्तु भावनाओंकी और मनोरंजनकी दृष्टिसे भी उत्तम है, हिन्दी संसारमें उनका आदरणीय स्थान है।

हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालयकी स्थापनाके पूर्व प्रेमीजीने जैनमित्रके प्रारंभिक कालसे ही ८-१० वर्ष तक जैनमित्र द्वारा महत्ती सेवा की है। आप पं० गोपालदासजी बरैयाके साथ ही काम करते थे।

स्व० पं० पन्नालालजी बाकलीवालने जैन ग्रंथ रत्नाकर कार्यालयकी स्थापना की। इसके द्वारा जैन पुस्तकें प्रकाशित होती थीं। प्रेमीजी और पन्नालाल-जीके भतीजे छगनलालजी भी उसमें काम करते थे। कुछ समयके बाद पन्नालालजीने यह कार्यालय इन दोनोंको सोंप दिया और आप अलग हो गये।

प्रेमीजीके मनमें हिन्दी साहित्यके ग्रन्थ प्रकाशित करनेकी इच्छा हुई। इसके लिए हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालयकी स्थापना की। इसके द्वारा सबसे पहली पुस्तक 'स्वाधीनता' प्रकाशित की गई, यह अंग्रेजी पुस्तक 'लीबर्टी'का अनुवाद था। अनुवादक थे हिन्दीके ख्यातनामा लेखक श्री महावीरप्रसादजी द्विवेदी। हिन्दी संसारमें इसका अच्छा आदर हुआ। फिर अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई।

काम बढ़ा। प्रेमीजी पुस्तकें चुनना, प्रूफ देखना पत्र व्यवहार करना आदि काम करते थे। छगन-लालजीके जिम्मे हिसाब-किताबका काम था। यह काम समय पर पूरा नहीं होता था। इसलिये प्रेमी-जीने तकाजा किया। छगनलालजीने इसे अपना अप-मान समझा। उस समय जैन ग्रन्थोंसे हिन्दी ग्रंथोंकी अपेक्षा अधिक कमाई होती थीं।

× × ×

दोनों अलग हो गये। छगनलालजीने जैन ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, लिया प्रेमीजीने हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय लिया, नकद रकमका बटवारा होनेके बाद जैन ग्रंथ रत्नाकरके स्टोकके लिए जो रकम माँगी गई थी वह यद्यपि ज्यादा थी, तथापि प्रेमीजीने दे दी।

लेखक लोग प्राय: प्रकाशकोंकी शिकायत करते हैं। उनका कहना है कि प्रकाशक लेखकोंको पैसा नहीं देते। प्रेमीजीकी ऐसी शिकायत कभी नहीं सुनी गई। वे अनुवादकी रकम पुस्तकके प्रकाशित होते ही और रोयल्टीकी रकम दीवाली पर हिसाब होते ही लेखकोंको भेज दिया करते थे।

× × ×

प्रेमीजी प्राचीन जैन साहित्यके उत्तम जानकार थे। तुलनात्मक दृष्टिसे उनका अध्ययन गहरा था। वह बात जैन हितैषीकी फाइलोंसे उनके द्वारा लिखे गये जैन साहित्यके इतिहाससे और संपादित अर्द्धकथानकसे भली प्रकार प्रमाणित होती है।

× × ×

प्रेमीजीने पुराने हिन्दी जैन काव्योंका सम्पादन किया था और उनमें कठिन शब्दों और स्थलोंमें फुटनोट लगाकर उन्हें सर्वसाधारणके लिए सुगम बना दिया था।

प्रेमीजी कवि भी थे। उन्होंने कई संस्कृत स्तोत्रोंका हिन्दी कवितामें अनुवाद किया था।

प्रेमीजी जैसे साहित्यिक थे वैसे ही समाज सुधारक भी थे। वे विधवा विवाह और अन्तर्जातीय विवाहको योग्य मानते थे। व कुछ कार्यरूपमें लाये थे। अत: अपनी परवार जातिमें अगुवोंने आपको बहार किया था व कुछोंने साथ भी दिया था।

जब प्रेमीजीके सुपुत्र हेमचन्द्रकी शादीका मौका आया तब उनके मित्र दो समूहोंमें बट गये। एक समूहका कथन था कि हेमचन्द्रकी शादी उत्तम परवारकी लड़कीसे की जाय और परवारकी पंडितों और पंचोंको बताया जाय कि परवार समाजका एक बहुत बड़ा प्रभावशाली भाग प्रेमीजीके साथ है।

दूसरे समूहकी राय थी कि प्रेमीजीने जैसे विधवा विवाहका आचरणीय उपदेश दिया है, वैसे ही वे अन्तर्जातीय विवाहका भी आचरणीय उपदेश दें। किसी अन्य जैन जातिकी लड़कीसे हेमचन्द्रका ब्याह कर समाजको यह बतावें कि वे सुधारकी केवल बातें ही नहीं करते है पर उनके अनुसार अमल भी करते हैं।

यद्यपि प्रेमीजीका आकर्षण दूसरे समूहकी तरफ था तथापि वे उसके अनुसार चलनेमें असमर्थ रहे। कारण, हेमचन्द्र और उसकी माता प्रथम समूहके साथ थे। पिताको अपने जवान और कमाऊ पुत्र हेमचन्द्रकी बात माननी पड़ी। व परवार जातिमें ही दमोहमें खानदान कुटुम्बकी पुत्रीसे विवाह हुआ तब कुछ परवारोंने विरोध किया, दो पक्ष पड़ गये तो भी विवाह धूमधामसे हुआ था।

स्व० अर्जुनलालजी सेठी खण्डेलवाल थे; प्रसिद्ध समाज सुधारक थे। उन्होंने अपनी एक लड़कीकी शादी शोलापुरके एक हूमड़ युवकके साथ की थी। यह शादी बम्बईमें हुई थी। स्व० पं० धन्नालालजी खण्डेलवाल थे, पंडित थे और बम्बईकी दिगम्बर जैन पंचायतके मुखिया थे। इन्होंने सेठीजीको तो खण्डेलवाल जातिसे च्युत करनेकी घोषणा ही की थी; परंतु यह भी फतवा निकाला था कि जो इस शादीमें शामिल होंगे उनका भी धार्मिक व्यवहार बन्द कर दिया जायगा।

मंदिरमें पंचायत हुई। शादीमें शामिल होनेवालोंको बुलाया गया और कहा गया कि शादीमें शामिल होनेकी जो भूल की है उसके लिए क्षमा मांगो अन्यथा तुमको धार्मिक व्यवहारमें शामिल नहीं किया जायगा। तो अनेकोंने क्षमा मांग ली तो प्रेमीजीने बड़ी तेजस्विताके साथ कहा—"अन्तर्जातीय

ब्याहमें शामिल होना न होना हमारा स्वतन्त्र अधिकार है। इसमें दखल देनेका पंचोंको अधिकार नहीं है। खण्डेलवाल और हूमड़ दोनों दिगम्बर जैन हैं। दोनोंको मन्दिरमें दर्शन पूजनका अधिकार है। इन दोनोंमें ब्याह होना न अधर्म है न शास्त्र-विरुद्ध है। इसलिए हमारे दर्शन-पूजनमें दखल देनेका भी पंचोंको अधिकार नहीं है। मैंने न कोई भूल की है न मैं क्षमा मांगनेहीको तैयार हूं।"

× × ×

प्रेमीजी विद्याप्रचारके रसिक थे इसलिए वे विद्या प्रचारके कार्योंमें सहायता दिया करते थे। इतना ही नहीं उन्होंने अपने स्वर्गीय पुत्र हेमचन्द्रके नामसे हाइस्कूल आरंभ करनेके लिए देवरीमें एक अच्छी रकम दी थी।

स्वतंत्र विचारोंका प्रचार करनेके लिए उन्होंने अपने स्वर्गीय पुत्रके नामसे 'हेमचन्द्र मोदी ग्रंथमाला' आरंभ की है। उससे अबतक अनेक प्रसिद्ध स्वतंत्र विचारकोंके ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है।

× × ×

पिछले दो बरससे तो प्रेमीजीने चारपाई पकड़ ली थी; फिर भी वे जीवनके अंतिम श्वासतक साहित्य और साहित्यिकोंकी चर्चा करते नहीं थके थे।

प्रेमीजी परवार दि० धर्मानुयायीके घरमें जन्मे थे; उन्होंने सदा दिगंबराचार्यों द्वारा लिखित संस्कृत प्राकृत ग्रन्थोंका अध्ययन मनन किया था; परंतु इतिहासकी कसौटी पर कसते समय उन्होंने कभी पक्षपात नहीं किया। वे जितना आदर दिगंबराचार्योंका करते थे, उतना ही श्वेताम्बराचार्योंका भी करते थे। जैसे डॉ० हीरालालजी, डॉ० उपाध्येके दिगंबर विद्वान उनके मित्र थे वैसे ही पं० सुखलालजी और मुनिश्री जिनविजयजीके समान श्वेतांबर विद्वान भी उनके मित्र थे। सर्वधर्म समभावकी भावना यद्यपि उनमें प्रबल थी तथापि धर्मोंमें घुसे हुए अंधविश्वासों और मानवताके विघातक विधि-विधानों और रीति-रिवाजोंकी कटु आलोचना करते भी वे कभी नहीं हिचकिचाते थे।

अनेकोंकी तरह मैं भी उनको दादा ही कहता था। आज भी उनकी यादमें हृदय भर आता है और आंखे अश्रुपूर्ण हो जाती हैं, अब उनकी प्रेम भरी कड़वी मीठी बातें सुननेको कभी नहीं मिलेंगी।

जब कभी मुझे किसी कठनाईका सामना करना पड़ता था; मैं उनके पास दौड़ जाता था और वे सहानुभूतिके साथ उसे मिटा देते थे। मेरी भूल देखते तो धमका भी देते थे। अब कहां जाऊँगा?

अंतिम समयमें, मैं खुद बुखारका शिकार था इसलिए उनके दर्शन न कर सका। एक हफ्ते पहले उनसे मिलने गया था तब उन्होंने कहा था, "वर्माजी यह अंतिम मुलाकात है। अपने शरीर और आत्माको सँभालना, इस समय मेरी एक ही अभिलाषा है कि मेरे अंतिम समयमें पांचों (पुत्रवधु चम्पा, दोनों पौत्र और उनकी बहुएं) मेरी आंखोंके सामने हों।

भाग्य किसीकी सब इच्छाएं पूरी नहीं होने देता। परिस्थितिवश बड़ा पोता और उसकी बहु अंत समयमें बनारस थे अतः बंबई नहीं पहुंच सके। इसका इन दोनोंको बहुत दुःख है।

अंतमें इस इच्छाके साथ ये संस्मरण समाप्त करता हूं कि उनके पौत्र पुत्रवधू और पौत्रवधुएँ स्वर्गीय दादाकी इच्छानुसार चलें, उनकी तरह सरल व उच्च जीवन बितावें और ऐसे काम करें जिससे लोग यह कहें कि, ये उत्तम काम तो करेंहीगे क्योंकि ये स्वर्गीय प्रेमीजीके आत्मज हैं।

दोनों भाई, श्री यशोधर और श्री विद्याधर इस तरह रहेंगे जिस तरह दूध और पानी एक होकर रहते हैं; तथैव अपनी माता चम्पाबाईकी सेवा करेंगे।

'जैनमित्र' की महिमा

ले०—श्री कामताप्रसाद जैन,
सम्पादक—'अहिंसावाणी'
व ऑइस ऑफ अहिंसा, अलीगंज।

जगत जनहित करन कँह, जैनमित्र वर-पत्र।
प्रगट भयहु-प्रिय! गहहु किन? परचारहु सरवत्र?

यदि मेरी गणना भ्रान्त न हो तो यह समझिये कि विक्रम सं० १९५७ में 'जैनमित्र' का जन्म जनहितके लिये हुआ। श्री दि० जैन प्रांतिक सभा बम्बईने इसे प्रकाशित किया और इस युगके सर्वश्रेष्ठ संस्कृत विद्वान् श्रीमान् पं० गोपालदासजी बरैयाके सबल हाथोंमें इसके सम्पादनकी बागडोर सौंपी। पं० जीने 'जैनमित्र' के मुखपृष्ठ पर उपरोक्त पद्य छापकर उसकी समुदार नीति सार्थक सिद्ध कर दी। जैसा उसका अच्छासा नाम रहा वैसा ही उसका काम भी हुआ! जैन कौन? वह जो जिनेन्द्रका भक्त हो—उनके उपदेशको दैनिक जीवनमें उतारता हो। और जिनेन्द्र वह जिन्होंने राग-द्वेषको जीत लिया तथा सबको सिखाया 'मैत्ती मे सव्व भूदेसु'—'मेरी मैत्री जीव मात्रसे हो!' ऐसे महान विश्वमैत्रीके उद्देश्यको लेकर 'जैनमित्र' का अवतरण हुआ। और यह था जैनकी पुरातन परम्पराके सर्वथा अनुकूल!

जैन जाति, वर्ग, भेद आदि सभीसे ऊंचा और ऊपर है। वह विश्वका मित्र है। इसीलिए जैन मात्र मानवकी नहीं, प्रत्युत जीव मात्रकी रक्षा करनेका व्रत लेता आया है। "जैनमित्र" भी यही व्रत लेकर अवतरा और उसको खूब ही निभाया। उसका आदर्श उन लोगोंको एक खुला दर्पण है जो संकीर्ण मनोवृत्तिमें बहकर 'सत्वेषु मैत्री' के सिद्धांतको भुला देते और अकल्याणकारी स्थिति सिरजते हैं।

"जैनमित्र" के पंचम वर्षके सम्माननीय सम्पादकजी निम्नलिखित संस्कृत श्लोकको उसके मुखपृष्ठ छापकर उसकी नीतिको घोषित करते हैं:—

'जिनस्तु मित्र सर्वेषामिति शास्त्रेषु गीयते।
एतज्जिनानुबंधित्वाज्जैनमित्रमितीष्यते॥'

उद्देश्य और भावना वही हिन्दीकी पद्यवाली है, परन्तु भाषा संस्कृत है। यह परिवर्तन क्यों किया गया? वस्तु स्वरूपका प्रतिपादन तो इससे हुआ ही। भाव रूपेण—निश्चय धर्ममें वस्तु शाश्वत है, किंतु व्यवहारमें वह उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य त्रिकटकी परिवर्तनशीलतामें नये नये रङ्गरूप धारण करता है। तत्कालीन परिस्थितिने हिन्दी पद्यका स्थान संस्कृत श्लोकको दिलाया यह व्यवहारिक आवश्यकता ही समझिए।

उस समय संस्कृतज्ञ जिनधर्ममर्मी विद्वानोंकी आवश्यकता थी। संभवतः इसीलिए पं० जीने संस्कृतको महत्व दिया। जन मानसमें संस्कृतके प्रति सद्भाव जागृत करना जो था। किन्तु जैनधर्मके लिए संस्कृतके साथ ही प्राकृत भाषाओंका भी विशेष महत्त्व है। आज वह स्थिति भी नहीं रही अंग्रेजीका अपना महत्त्व है। उसे कोई भुला नहीं सकता।

इससे एक बात स्पष्ट हुई कि "जैनमित्र" लकीरका फकीर नहीं रहा। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके अनुकूल आवश्यक परिवर्तनके लिए प्रेरक बनना उसका कर्तव्य रहा है, क्योंकि समयानुकूल सुधार करके ही धर्म और समाज आगे बढ़ते हैं। इस प्रकार [illegible] पत्रकारिताके आदर्शोंको उसने खूब निभाया है। धर्म प्रभावना और समाजोत्थानके लिए जिन बातोंको आवश्यक पाया उनका विरोध भी किया। अभी ही पाठकोंने देखा होगा कि गजरथ चलानेका विरोध सम्पादकजीने किया और वह ठीक ही किया, क्योंकि इस समय नए मंदिर और मूर्तियोंकी

आवश्यकता नहीं है।

जैनोंकी संख्यासे कहीं अधिक मूर्तियां मौजूद हैं जिनकी दैनिक पूजा और सार संभाल भी ठीकसे नहीं होती, तो फिर नई मूर्तियोंके सिरजनेसे क्या लाभ? जैन धर्म लाखों आपत्तियां सहकर भी आज जीवित हैं और बौद्ध धर्म यहांसे लुप्त हो चुका था, इसका कारण यही रहा कि जैनाचार्य युगकी फिरन और उसकी मांगको पहिचानते और मानते आए।

उन्होंने समयानुकूल युगधर्मका प्रसार किया और जनताकी बोलीको प्रचारका माध्यम बनाया। आज जैनी इस नीतिको भुला बैठे हैं-इसी कारण जैनका महत्व अप्रतिम-सा हो रहा है, फिर भी इस शिथिलताको दूर भगानेके लिए 'जैनमित्र' सदा जागरूक है। अ० विश्व जैन मिशन सदृश युगधर्मी प्रगतिशील संस्थाके कार्यकलापोंको सदा ही प्रकाशित करके उसने समाजमें उत्साहगुणको जागृत किया है।

निःसन्देह जबसे 'जैनमित्र' समाजहितैषी कर्मठ वीर श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाके तत्वावधानमें आया तबसे वह न केवल साप्ताहिक हुआ, बल्कि नियमितरूपमें अपने पाठकोंका सच्चा हित साधता आया है। स्व० पूज्य ब्र० सीतलप्रसादजीने उसमें वह शक्ति भर दी है जो आज भी उसके रूपमें दिखती है। अनेक नये लेखकों और समाजसेवकोंके निर्माणमें उसकी मूक प्रेरणा रही है। कदाचित ब्र० जी इस लेखकको 'जैनमित्र' और 'दिगम्बर जैन' की ओर आकृष्ट न करते, तो संभव था कि समाजमें उसको कोई जानता भी न! सारांश यह कि 'जैनमित्र' एक ऐसी जीवित संस्था-सा बन गया है कि वह दि० जैन समाजके लिए एक अमूल्य और कल्याणकारी साधन ही है।

उसके सम्पादनमें इस समय श्री स्वतन्त्रजीका योग दान भी उल्लेखनीय है।

ऐसे जनोपकारी पत्रका हीरक जयंति विशेषांक प्रकाशित होना समाजके लिए गौरवास्पद ही है।

हमारी भावना है कि वयोवृद्ध कापड़ियाजी दीर्घजीवी होकर 'जैनमित्र'को निरन्तर आगे ही बढ़ाते रहें। हमारा शत-शत अभिनन्दन!

धर्मद्वेषिमदेभपञ्चरूपनं भव्याब्जसूर्योदयम्।
स्याद्वादध्वज-शोभितं गुणयुतं श्री जैनमित्रं मुदा॥
मुम्बा (सूरत) पत्तनभूषणं समवशंवृतान्तसत्पेटिकम्।
मर्त्यैरद्भुतवस्तुवत् प्रतिदिनं तद्वाह्यमस्यग्रजन्म॥'

जैनमित्रके प्रति शुभ कामना

कोई न भूल सकता उपकार तेरे,
सम्पूर्ण कार्य जनता हितमें किए हैं।
अज्ञान अन्ध सब मानव लोचनोंको,
खोला तथा सुखद मार्ग सदा दिखाया॥१॥
वृत्तान्त जैन जनता हितमें छपाए,
त्यागी अनेक तुमने शिवमें लगाए।
भूले तथा भटकते निज मार्ग पाए,
है जैनमित्र तुमने बिछुड़े मिलाए॥२॥
नैराश्यनी रवि निमग्न हमें सदा ही,
उत्साह हस्त अवलम्बन नित्य देते।
लेते न भेंट कुछ भी परमार्थ सेवी,
हो डूबते मगर पार हमें लगाते॥३॥
श्रद्धा समेत मनसे शुभ कामना है,
जैनेन्द्र वीर प्रभुसे मम भावना है।
जीवो हजार शुभ वर्ष सुकीर्ति पाओ,
सन्मार्ग दर्शन सदा सबको कराओ॥४॥

—प्रकाशचन्द्र जैन 'अनुज'-कैमोर (जबलपुर)

जैनमित्रका हीरकजयंती अंक

जैन समाजके शुभोदयसे ही समाचार पत्र दीर्घ-जीवी बनते हैं, और उनका यह दीर्घकाल जनताके प्रेमका परिचायक होता है, अन्यथा पत्रका उदय और अस्त सभीप ही हो जाता है। जैनमित्र ६० वर्ष पूर्ण कर चुका यह गौरवका द्योतक है, और जैन जनताके प्रेम एवं उदारताका पोषक भी है। इस पत्रको श्री कापडियाजी जिस लगनसे समय पर प्रकाशित करते हैं, और उपयोगी मैटर निकालते हैं यह सर्व विदित ही है।

समाजका शायद ही कोई नगर व कस्बा ऐसा होगा जहाँ जैनमित्र अपनी मित्रताका प्रसार न करता हो, गुजरातसे निकलनेवाला और बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभासे संचालित होनेवाला यह पत्र उत्तर-दक्षिण-पूर्व-पश्चिम सभी प्रांतोंमें अपना प्रकाश फैलता है यह भी इसकी अद्वितीयता ही है, सर्वप्रिय होनेके कारण इसके ग्राहक भी अत्यधिक हैं। ब्र० शीतलप्रसादजीके पश्चात् इसका सर्वभार कापडिया मूलचन्दजीने भलीभाँति संभाला है। आज-तक एक सम्पादकीयमें पत्र प्रकाशित हो रहा है, यह भी जैनमित्रकी विशेषता है। आपको वृद्धावस्था होने पर भी पत्रमें किसी तरहकी कमी नहीं रहती, समाजके देशके और उत्सवोंके समाचार जाननेको लोग जैनमित्रके अंक पढ़नेको लालायित रहते हैं। अतः इस हीरक जयन्ती अंकका हम अभिनन्दन करती हैं!

समाजके सौभाग्यसे पत्र शतायु होकर पुनः शतायु अङ्क निकाले और नये टाईप, नये कागज और नवीन डिजाइनोंमें समाजके उत्थान करनेवाले लेख प्रकाशित करता रहे यही भावना है। क्योंकि समाचार पत्र ही जनताका पथ प्रदर्शक होता है, जिस मार्ग पर चलाना हो, समाचार पत्र ही अपने सुझावोंसे मनुष्योंको चलाते हैं। युद्धके समय वीर-रस भरना, धर्मके समय धार्मिक उत्साह बढ़ाना और देशभक्तिके समय देशपर प्राण न्योछावर करनेवाले वीर समाचार पत्र ही बनाते हैं। आज राष्ट्रपति और प्रधान मन्त्री श्री नेहरू भी अपने भाषण पत्रों द्वारा ही जगतमें प्रसारित करते हैं, समाचार पत्र न हों तो किसीकी वाणी जनताके कानोंमें नहीं पहुंच सकती अतः अखबार इस समय सबसे बड़ा हथियार है। यह एटम बमसे कम नहीं है, बम तो सीमित स्थान पर ही पड़ता है किन्तु समाचार पत्र समस्त देशविदेशोंमें अपना प्रभाव जमा देते हैं।

अतः समाजके समाचार पत्रोंका उन्नत होना समाजको उन्नत बनना है। आशा है जैनमित्र अपनी दिशामें अधिक उन्नतिशील होता रहेगा, और इसके लिये पत्रके कर्णधार हर पहलूसे इसका विकास करनेमें समर्थ होंगे यही प्रभुसे प्रार्थना है।

ब्र० चन्दाबाई सम्पादिका 'जैन महिलादर्श'
जैन बालाविश्राम, आरा।

"मित्रसे"

मित्र तेरा रूप लख लखकरके अहो,
हर्ष किसको हो न मित्र तुम कहो।

बह रही है मित्रकी धारा जहां,
लग रहा है ध्यान मानवका वहां॥

मित्र तेरे हृदयका नहीं पार है,
धनपतिका हृदय भी निस्सार है।

नाम तेरा सार्थक हो तभी,
विश्वमें मित्रकी कीर्ति फैलेगी सभी॥

नवयुवकोंमें संगठन प्रतिक्षण करो,
भावना सद् ज्ञान उनमें नित भरो।

समाजको प्रिय रहोगे तब सखे,
हो सभी पुलकित तुम्हारी छवि लखे॥

—जिनदास जैन, भेलूपुर-वाराणसी।

साठा सो पाठा !

[लेखक--पं० दामोदरदासजी जैन, सागर]

हर्षका वह दिन हमें देखने व उसका स्वागत एक महान् उत्सवके रूपमें करनेका मौका इस जीवनमें पा ही लिया, जिसकी भावना सम्पादकजी जैनमित्रने अपने सुवर्ण जयन्ती अंक सन् ५१में आयी है-की है।

जैनमित्रका उदय मासिक पत्रके रूपमें सन् १८९९में हुआ था, तब इसके सम्पादक गुरूणां गुरु श्रीमान स्व० पं० गोपलदासजी बरैया थे। आपके बाद इसकी बागडोर उन्हींकी आज्ञासे श्रीमान् पं० नाथूरामजी प्रेमी मुंबईने सहा-यक रूपमें सम्हाली जिन्होंने अपने हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्यसे हिन्दीकी महान् सेवा की व अनेकों हिन्दीके लेखक तैयार कर दिये।

आपको जानकर दुःख होगा कि ऐसे कर्मठ व यशस्वी विद्वान्का लम्बी बीमारीके बाद ३० जनवरी १९६०को मुंबईमें देहावसान हो गया, आपके देहावसानके समय मित्रके वर्तमान सम्पादक सेठ मूलचन्दजी कापड़िया मुंबईमें ही थे।

जैनमित्र ७ वर्ष तक मासिक व फिर ८ वें वर्षसे पाक्षिक हो गया था। सन् १९०९से इसके सम्पादनका गुरु-तर भार श्री ब्र० सीतलप्रसादजी लखनऊने अपने सबल कन्धों पर ले लिया और जो आगे जाकर श्री जैन धर्मभूषण धर्म-दिवाकर ब्र० सीतलप्रसादजीके नामसे प्रख्यात हुए।

आपके सम्पादनकालमें ही सूरत पहुंचकर जुगल जोड़ी (कापड़ियाजी व ब्र० सीतलप्रसादजीकी) मिल जानेसे मित्रकी यह गाडी साप्ताहिक रूपमें चलने लगी जो अब तक चल रही है। पूज्य ब्र० जीका कम्पवायुसे सन् ४२ में लखनऊमें देहावसान हो गया।
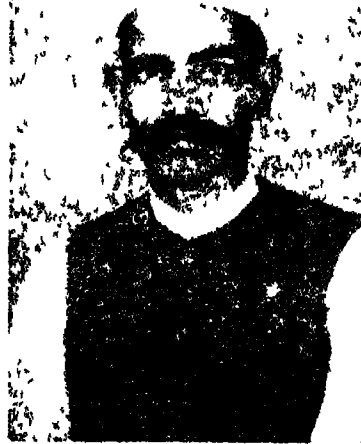
पूज्य ब्रह्मचारी सीतलप्रसादजी चातुर्मासके सिवाय किसी खास स्थानके निवासी नहीं रहे, भ्रमण व प्रचार उनका मुख्य लक्ष था। ब्र०जीने ही अपने सम्पादनकालमें जैनमित्रके ग्राहकोंको उपहार देनेकी पद्धति चालू की, वे जहां भी चातुर्मास करते, धर्मप्रचारके साथ १ ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद करते थे व उसके प्रकाशनके लिये दानी भी ढूंढ़ लिया करते थे।

समय व विचारोंने पलटा खाया और ब्रह्म-चारीजीने खण्डवा चातुर्मासमें कितने ही भले आदमियों (!) की प्रेरणसे सन् २७ में स्याद्वाद महाविद्यालयके अधिष्ठाता पदके साथ जैनमित्रकी सम्पादकीसे भी विश्राम ले लिया और दूसरे पथ (विधवा विवाह प्रचार !) के पथिक बन गये।

साप्ताहिक पत्रकी सम्पादकी भ्रमणके साथ करना सरल कार्य नहीं। आप रेलमें बैठे २ भी सम्पादकीय टिप्पणी लिखा करते थे, कहीं भी हों मंगलवारको

सवेरे ही डाकसे हमें आपका मैटर मिल जाया करता था।

एक समयकी बात है कि श्रीमान् सेठ मूलचन्दजी कापड़िया प्रकाशक जैनमित्र सन् २५ में मानसिक व शारीरिक रोग जांघ पाठासे अस्वस्थ थे। ब्रह्मचारीजी बम्बईमें थे।

उस समय १ घटना घटी कि एक विधवा (जो अच्छे घराने व प्रख्यात पुरुषकी पत्नी थी) ने पतिकी मृत्युके थोड़े ही दिन बाद नया घर बसा लिया, तब ब्रह्मचारीजीने लिख भेजा—

"एक विधवाका साहस.. .. विधवाने पुनर्विवाह कर साहसका काम किया है।"

मैं उन दिनों मित्रकी सेवामें था तब ब्रह्मचारीजीने समाचारोंमें प्रथम पृष्ठ पर यह समाचार छापनेको लिख दिया तो मैं पढ़ते ही अवाक् रह गया।

किससे पूछूं, क्या करूं? सम्पादककी लेखनीसे लिखकर आया है। अंक देखकर भोजन बनाने गये व साथमें वह कागज भी लेते गये, सोचते थे कि बम्बई प्रां० सभा, उसके कार्यकर्ता, प्रकाशक व मेरी इज्जत पर पानी फिरनेकी नौबत है, क्या करें? छापना अवश्य है।

शांतिसे विचार करने पर उसका समाधान भी मिल गया और साहसके पहले दुः शब्द जोड़ दिया व आगे "नहीं" शब्द बढ़ा दिया। इधर ब्रह्मचारीजीका नाराजीका पत्र आनेसे मैंने सेठ ठाकुरदास भगवानदास झवेरी व सेठ ताराचन्द नवलचन्दजी झवेरी (उस समयके प्रांतिक सभाके खास पदाधिकारी)को असली कॉपी व अपना पत्र भेजकर ब्रह्मचारीजीको संतोषित करवा दिया। तब इन दोनों अधिकारियोंने मुझे मेरी इस सूझपर सभीका सम्मान रह जानेका प्रेमभरा पत्र भेजकर अपने कार्यमें निर्भीक बने आगे बढ़ते रहनेकी प्रेरणा की थी। व कुछ समय बाद सूरत आनेपर ब्रह्मचारीजीने भी अपनी इस भूलको प्रेमसे स्वीकार किया था।

कापड़ियाजीकी करीब ३-४ माहकी बीमारीमें ऐसे कई प्रकरण आये। पर धैर्यसे सभी सम्भालना पड़ता था। इस प्रकरणमें मैं यह भी बता दूं तो अनुचित न होगा कि सन् २१ में कानपुर महासभासे लौटते हुए सेठ मूलचन्दजी कापड़िया ललितपुर आये थे, जब 'क्षत्रचूडामणि ग्रन्थ' का हिन्दी अनुवाद आपके प्रेसमें छप रहा था व उसकी प्रेसकॉपी श्रीमान् स्व० पं० निद्धामलजीकी आज्ञानुसार मैं करता था। मैं गर्मियोंकी छुट्टियोंमें सूरत ता० १२-५-२१ पहुंचा था, तब कापड़ियाजी प्रेसमें कार्य कर रहे थे, पर सुयोग ऐसा मिला कि फिर ५ वर्ष वहां कापड़ियाजीके सभी विभागोंमें कार्य करते हुए मुझे कई अनुभव मिले।

खुशीकी बात यह थी कि उन दिनोंमें कापड़ियाजी चन्दावाड़ीमें रहते थे व मैं भी वहीं रहने लगा। असहयोग आंदोलनका जमाना था अतः गुजराती भाषा समझनेमें कुछ विशेष समय नहीं लगा। २४ घण्टे हम दोनों साथ रहते थे।

सन् २१ से सन् २६ तकके कार्यकालमें अनेकों उतार चढ़ाव देखने व अनुभव करनेका मौका मिला। पर सन् २५ में जिस संकटकालका मुकाबला करना पड़ा वह समय अलग ही था।

उन दिनों गोम्मटस्वामी यात्रासे वापिस आने पर कापड़ियाजी सख्त बीमार हो गये, उन्हें अपने तन बदन, कुटुम्ब परिवार, प्रेस, पत्र वा पुस्तकालयकी सब सुध भूल गई व मेरे मित्र ब० ईश्वरलाल कल्याणदासजी मेहताको उन दिनों जो परिश्रम करना पड़ा वह कर्तव्यकी व जीवनके प्रेमकी होड़ थी।

पर कर्तव्यने प्रेमपर विजय पाई और डॉ० चंपकलालजी दियाके सहयोगसे कापड़ियाजी आरोग्यताकी ओर आये, पर शरीर कृश था अतः इसे ठीक करनेके लिये उनको कुछ दिन कतारगाम रहनेकी डॉ० सा०ने राय दी, जहां रहकर कापड़ियाजीने पूर्ण स्वास्थ्य लाभ किया व पांच सप्ताह किये।

वह समय था जिन दिनों १८ घण्टे कार्य करना पड़ता था। पर जब कापड़ियाजीने जब स्वास्थ्य लाभके बाद अपने बिरवों-जैनमित्र दि० जैन, जैन महिलादर्श, पुस्तकालय तथा प्रेसका कार्य सुचारुरीतिसे नियमित चलते देखा तो उनकी छाती फूल गई कहा-कि तमे बधाए अमारा धन, धर्म अने यशनी रक्षा करी छे.

कापड़ियाजीका उपकार

श्री कापड़ियाजीका उपकार मैं कभी नहीं भूल सकता। मुझे १७ वर्षकी आयुमें बुड़वार (ललितपुर) से सूरत लाये, जहां मैं पांच वर्ष रहा लेकिन इतने कालमें मुझे ऐसा योग्य आपने बनाया व मेरी ऐसी ख्याति हुई कि मेरी सगाई सागरमें हुई व शादी भी हुई बाद पत्नीको भी लाकर सूरत रहा था। बादमें ससुरजी (जो धनवान थे) की सूचनासे सागर आया जहां उनकी कटलरीकी दूकानका कामकाज सीखकर नई दूकान भी उन्होंने मंडवा दी व मकान भी दिया तबसे मैं बहुत उन्नति पर आया हूं व पांच सन्तान भी हैं। यह सब उपकार मैं तो कापड़ियाजीका ही मानता हूं।

परिवार परिचय

कापड़ियाजीकी पहली पत्नीके देहावसानके बाद आपकी दूसरी शादी श्रीमान् गुलाबचन्दजी पटवाकी सौ० पुत्री सविताबाईसे सं० १९८९ में हुयी, जिससे पुत्र बाबूभाई व पुत्री दमयन्तीने जन्म पाया, पर विधिका विधान कुछ ऐसा था कि यह बगीचा असमयमें ही उजड़ता गया।

हुआ क्या कि ७ वर्ष बाद वीर सं० २४६१ में सौ० सविताबाईका पीलिया रोगसे स्वर्गवास होनेके बाद १६ वर्षकी अल्प वयमें बाबूभाई भी वीर सं० २४६८ में मोतीझराकी बीमारीसे कालकवलित होगया। रही दमयन्ती सो आज अपने घर (ससुराल) में फलती फूलती है।

इतना संकट आने पर भी कापड़ियाजी अपने समाजसेवा व्रतसे कर्तव्यको ध्येय बनाते हुए संकटोंके पर्वतोंको चूर२ करते हुए आगे ही बढ़े व ईडर निवासी डाह्याभाई (जो प्रेसमें कार्य करते हैं) को सन् ४६ में गोद लेकर दत्तक पुत्र स्वीकार किया जो होनहार है। व जिसका विवाह सन् ४७ में चन्द्रकलाबाईके साथ हो गया है। तथा अब कापड़ियाजीका शुभोदय आजानेसे पुत्र पुत्रवधू व पौत्र पौत्रीसे सम्पन्न ७८ वर्षके बूढ़े होते हुए भी समाज-सेवाके कार्यमें एक युवककी तरह संलग्न हैं। और हमेशासे रहे हैं। यही कारण है कि कैसी भी परिस्थितिमें या किसी कर्मके कारण क्षति पहुंचनेके बाद भी जैनमित्रका कोई युग्मांक नहीं निकला व पत्र बराबर अगाध गतिसे अपनी उन्नति करता हुआ साठा सो पाठाकी कहावत चरितार्थ कर रहा है।

अंतमें इस हीरकजयंती उत्सवकी सफलताके साथ यही हार्दिक भावना है कि कापड़ियाजी १०० वर्षसे ज्यादा हम लोगोंके बीच रहकर जैनमित्र द्वारा मार्ग प्रदर्शित करते हुए जैनमित्रका शताब्दी उत्सव मनानेके लिये शक्तिशाली हों। इन शब्दोंके साथमें मित्र, प्रांतिक सभा व कापड़ियाजीके प्रति अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं।

शुभ कामना

'जैनमित्र' तुमने सचमुच, अनगिनत करी सेवा अबतक।
जिनका वर्णन इकमुखते तो, हो नहीं सके, कहुँ कबतक॥
सोई समाजको जगा दिया, कर्तव्य मार्गपर लगा दिया।
अपने पराये जो समझ रहे, वे इस दुविधाको भगा दिया॥
सारी कुरीतियाँ नाश करी, दुर्गुण समाजके दूर भगाके।
साहस पुरुषार्थ जगा करके, सचमुचमें 'वीर' बना करके॥
श्री कापड़ियाजीकी शक्ति एक, कर्तव्य मार्ग पर डटे रहे।
चाहे जो भी सङ्कट आये,
पर वे निज पथ पर डटे रहे॥
दोहा-श्री शुकदेवप्रसादकी, विनती है करजोर।
मूलचन्दजी चिरा रहै, अज हूं वर्ष करोर॥

—शुकदेवप्रसाद तिवारी "निर्बल",
सुहागपुर (म० प्र०)
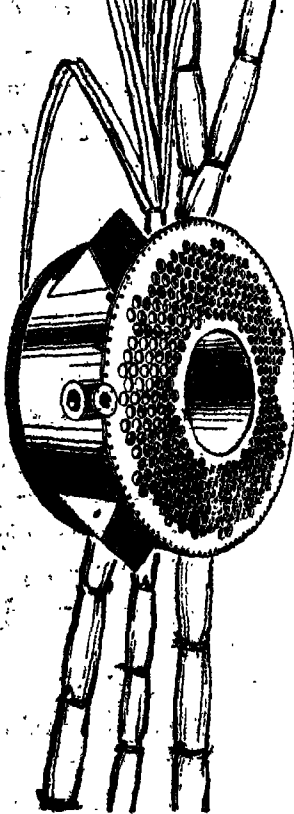
[लेखक:—वैद्य धर्मचन्द्र जैन शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, B. I. M. S. इन्दौर]

समाचार पत्र यों तो बहुत साधारणसी वस्तु है और सर्व-साधारण उसे केवल नवीन वृत्त या घटनाओंको जाननेका साधन मानते हैं, परन्तु गम्भीरतासे सोचा जाय तो इस युगमें अखबार या समाचार पत्रोंका दायित्व बहुत बढ़ गया है। ये चाहें तो दुनियामें विघटनात्मक नीतिसे विप्लव मचा दें और चाहें तो सर्जनात्मक रूपसे उसे शांतिधारासे प्लावित कर संहारक भावनाओंको ठंडा कर दें। यद्यपि विभिन्न पत्रोंके प्रतिपादनीय विषय भिन्न होते हैं फिर भी तद्विषयक विवाद और शांतिका उत्तरदायित्व पत्रोंपर निःसन्देह निर्भर करता है।

विस्तारमें न जाकर लेखके दायरेको अत्यन्त सीमित बना जैन समाजमें प्रकाशित होनेवाले विभिन्न पत्रोंपर जब दृष्टिपात करते हैं और उन्हें उनके दायित्वकी कसौटीपर कसते हैं तो "जैनमित्र" निःसन्देह ऐसे पत्रोंमें प्रमुख है जिसने यथासमय समाजसे सम्बन्धित सभी उत्तरदायित्वोंका निर्वाह किया है, और सामाजिक प्रगतिमें अग्रसर रहा है। समाज किसी व्यक्ति-विशेषका नाम नहीं अपितु विभिन्न विचारधाराओंके किंतु समान संस्कृति एवं सिद्धांतके अनुयायी अगणित व्यक्तियोंके समूहका नाम है। समयके प्रवाहसे कोई अछूता नहीं रहता, और सामाजिक नियमोंका निर्माण तत्कालीन आवश्यकता तथा परिस्थितिके अनुरूप होता है। इसी-लिये ये सिद्धांत नहीं अपितु विधान या व्यवस्था मात्र कहे जाते हैं, जो परिवर्तनीय होते हैं। अनेक धार्मिक विधि विधान तथा आचरणोंके विषयमें भी यही स्थिति है।

सामाजिक सेवा

अन्तर्जातीय विवाह, विजातीय विवाह, कुरीति निवारण, मरणभोज—निषेध जैसे सामाजिक कार्य जो आज साधारणसी बातें हैं, जिन्हें निन्दनीय अथवा घृणा-स्पद नहीं माना जाता, न इनके अपनानेपर कोई दंड या बहिष्कार ही होता है, कुछ समय पहिले गर्हणीय एवं घातक समझे जाते थे। इनकी चर्चा मात्र समाज द्रोही भ्रष्ट, पतित जैसी संज्ञायें पाने और समाजका कोप भाजन बननेके लिये पर्याप्त होती थी।

जैनमित्रने निर्भय होकर इनका समर्थन किया था,

जब कि दूसरे पत्र, अनेक सभा संस्थाओं जिनका संचालन प्रायः श्रीमानोंके हाथमें होता था, के आश्रित होकर इस विषयमें मौन ही नहीं रहते थे अपितु जैनमित्रका विरोध करते थे। किन्तु जैनमित्रकी यह दूरदर्शिता थी जो आज सर्व-मान्य एवं सामयिक सिद्ध हुई है। आज भी इन मामलोंमें जैनमित्र अग्रणी है।

धार्मिक सेवा

दस्सा पूजाधिकार समर्थन, गजरथ विरोधी प्रचार, अनावश्यक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं नवीन मंदिर निर्माण विरोधी दृष्टिकोण, इसयुगकी महत्वपूर्ण धार्मिक सेवा है, जिसका व्रत जैनमित्रने ले रखा है। यद्यपि अभीष्ट सफलता इस दिशामें अभी नहीं मिली परन्तु पर्याप्त सुधार हुआ है और लोग वस्तु स्थिति समझने लगे हैं। वर्तमान गजरथ, पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओंका वह सर्वाङ्ग अपव्यय सूचक स्वरूप अब नहीं रहा जो कुछ समय पूर्व था। इतर पत्र यदि समर्थन नहीं करते तो विरोध भी नहीं। यह भी सफलताका सूचक है। बाबौराके श्री गजाधरलालजीके पूजाधिकारको लेकर जैनमित्रका आंदोलन उस समयकी सराहनीय एवं स्मरणीय घटना है।

कुरीति निषेध

दहेज प्रथा, पहिले कन्या विक्रय और आज वर विक्रयके निषेध रूपमें जैनमित्रने उल्लेखनीय सेवाकी है। इन मामलोंमें यद्यपि वर्तमान शासकीय रुख पर्याप्त ध्यान रखता है किन्तु सर्व साधारण जैन जनतामें इस जागृतिका मूल जैनमित्र है। सुशिक्षित लोगोंमें दूसरे कारण भी इसके हैं।

राजनैतिक सेवा

राजनैतिक कारणोंसे जब कभी जैनधर्म और जैन समाजके अधिकारों पर आघात हुआ है या होता है, जैनमित्र सदा जागरूक रहकर समाजको सावधान कर उपयुक्त उपायोंसे उसका विरोध करता है, और न्याय्य हकको प्राप्त करनेके लिये निरन्तर प्रयत्न करता है। महावीर जयन्तीकी सार्वजनिक (केन्द्रीय) छुट्टीकी मांग, जैनियोंके धार्मिक ट्रस्टों, मंदिरोंको हिन्दू ट्रस्ट या धार्मिक संस्थान मान उनपर शासकीय नियंत्रणके निर्णयका विरोध जैनमित्रकी राजनैतिक सेवा है। जैनियोंके तीर्थक्षेत्रों पर विधर्मियोंके अत्याचार, (देवगढ़ प्रभृति क्षेत्रोंकी मूर्तियोंको तोड़ना आदि) धार्मिक उन्मादवश या राजनैतिक स्वार्थ साधनकी आड़में जैन मंदिरोंको तोड़नेके खिलाफ आवाज बुलन्द कर स्वत्व रक्षण हेतु शासन तक न्यायोचित मांग करना राजनैतिक सेवा है।

इस प्रकार जैनमित्र अपने जन्मकालसे ही समाज, धर्मकी सेवा करनेमें तल्लीन रहता आ रहा है। उसकी लोकप्रियता स्वाभाविक है। उसकी हीरक जयन्ती इसका प्रमाण है। पचीस वर्षसे जैनमित्रका नियमित पाठक होनेके नाते इन पंक्तियोंके रूपमें मित्रका अभिनन्दन करता हूं।

जैनमित्रके प्रति

साठ वर्ष पूरे हुए, हर्षित जैन समाज।
'जैनमित्र' आगे बढ़ो, जनसेवाके काज ॥
पुष्पित हो नव वर्षमें, प्रगटे दिव्य प्रभात।
नव-जागृति संदेश दे, 'जैनमित्र' हम भ्रात ॥
अजर-अमर यह पत्र हो, हीरक जयंति प्रसंग।
दिन दूना, निशि चौगुना, धर्मप्रचार अभंग ॥
जिन महिमा देशना, अपकम कुटिल रिवाज।
मंगल धर्मकथा सदा, 'जैनमित्र' के काज ॥
जगमें नित जयवन्त हो, वीर प्रभाके पत्र।
जिनशासन उन्नत हो, शांति क्षेम सर्वत्र ॥

पं० सिद्धसेन जैन गोयलीय, ...

जैनमित्र जैन जगतका सच्चा मित्र है

[लेखक—सिं० हुकमचन्द जैन सांधेलीय-पाटन]

जैन जगतके अकल्याणको भयंकर परिस्थिति रूपी शिलाओंसे टकरानेकी घड़ियोंमें 'जैनमित्र' ने जिस प्रकाश स्तम्भका प्रखर कार्य किया है, वह जैन इतिहासमें अपना अक्षुण्ण-स्थान बना चुका है। जैनहितों पर बाह्य एवं आंतरिक आक्रमणोंके अवसरों पर जैनमित्रने जिस ढालका कार्य किया है, वह स्वर्णाक्षरोंमें अंकित करने योग्य है।

जबर हमारे समाजमें कुप्रवृत्तियोंकी सेनाने अभियान किया है, जैनमित्रने सदैव सुधारके बिगुल फूँककर समाजको कर्तव्य पथकी ओर उन्मुख कर जैन जगतका मार्ग निर्देशन किया है! अपने विगत ६० वर्षीय जीवनकालमें स्वयं संक्रमणकी स्थितिका मुकाबला करते हुये जैनसमाजसे कुरीतियोंके आच्छन्न-तमको दूरकर सुधारक प्रवृत्तियोंको जन्म दिया है, यह अतिशयोक्ति नहीं!

सुधारक प्रवृत्तियोंके उदाहरण जैनमित्रके पाठकोंको दुर्लभ नहीं हैं। जहां एक ओर दस्सा पूजन अधिकार समर्थन; बालविवाह, वृद्ध विवाह, मृत्युभोज आदिका निषेध कर समाजकी रूढ़ियोंका निराकरण किया है, वहीं दूसरी ओर सार्वोक्त अन्तर्जातीय विवाह पद्धतिका प्रचार कर समाजको प्रगतिशील बनानेमें योगदान दिया है। पुरातन प्रतिक्रिया वादी जन्य अड्डासे मुक्त कर समाजको नवोन्मेष प्रदान किया है, जिसके प्रत्यक्ष उदाहरण, प्रथम समयसारमें "जैन" ही छिपानेका दुर्व्यवहार एवं गजरथ विरोधी सफल आन्दोलन परिचालन आदि हैं।

शिक्षाके क्षेत्रमें जैनमित्रके आंदोलन एवं प्रचारके कारण ही आज समाजमें अनेक शिक्षण संस्थायें तथा कन्याशालाओंकी स्थापना हुई है। इसके साथ ही इसने नवोदित लेखकोंको जो सम्बल प्रदान किया है, उससे समाजमें अच्छा साहित्यिक वातावरण उत्पन्न हो गया है। जैनमित्रकी इन सेवाओंकी सुस्मृतिके अवसर पर इसके यशस्वी संपादक श्री मूलचन्द किसनदास कापड़ि-याको विस्मृत करना अकृतज्ञता होगी। क्योंकि यह श्रद्धेय कापड़ियाजीका व्यक्तित्व है, जिन्होंने जैनमित्रके साथ एकाकार होकर अपनी सद्बुद्धिका लाभ समाजको दिया। देशके कतिपय जैनपत्र यदाकदा समाजके आंतरिक विवादोंकी अग्नि प्रज्वलित करनेमें जब तत्पर रहे तब ऐसे अवसरोंपर 'जैनमित्र' ने सदैव तटस्थताकी नीतिका अवलम्बन करते हुए उनके शमनमें ही अपनी सार्थकता समझी, इसलिये समाजकी श्रद्धाका केन्द्र रहा है।

अंतमें यह लिखते हुये गौरवान्वित हूं कि पत्रकारिताके क्षेत्रमें मैंने प्रथम पाठ जैनमित्रसे ही सीखा था और जैनमित्रने ही मुझे पत्रकार बनाया है जिसके लिये जैनमित्रका चिर ऋणी हूँ।

जैनमित्रकी हीरक जयन्तीके अवसर पर मैं कामना करता हूं कि जैनमित्र हमारी समाजका इसी प्रकार पथ-निर्देश करता हुआ, समाज सेवा एवं धर्म प्रभावनाका प्रचार करता हुआ, यशस्वी चिर जीवन प्राप्त करे। जैनमित्रकी यह सफलता उसकी भावी उत्तरोत्तर प्रगतिका सोपान है। श्रद्धाके कणोंके साथ मैं "जैनमित्रके हीरक जयंती अंक" की बधाई देता हूँ।

जुग जुग जिये जैनमित्र

(लेखक—बाबू परमेष्ठीदास जैन, बी. ए., बी. टी., सागर ।)

साहित्यका अध्ययन करनेपर हमें ज्ञात होता है कि उसे हम मुख्य तीन भागोंमें विभाजित कर सकते हैं:—

१. धार्मिक साहित्य
२. सामाजिक साहित्य
३. राजनैतिक साहित्य

जिस साहित्यमें किसी विशेष धर्मके मौलिक सिद्धान्तो एवं उनके आचार विचारका वर्णन किया हो, उसे हम धार्मिक साहित्यकी कोटिमें रखते हैं। कई ग्रन्थ ऐसे भी उपलब्ध हैं जिनमें मानव जातिकी सभ्यता एवं संस्कृति पर प्रकाश डाला गया है और जिनमें सामाजिक संगठन आदि कई विषयोंका विवेचन किया गया है। ऐसे ग्रन्थोंकी भी भरमार है जिनमें मनुष्यके राजनैतिक अधिकार एवं कर्तव्योंका विवेचन पाया जाता है, किन्हीं ग्रन्थोंमें राजतंत्र प्रणाली पर प्रकाश डाला गया है, तो किन्हीं ग्रन्थोंमें मानवके राजनैतिक संगठनका इतिहास प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्यने मानवीय त्रिमुखी पिपासाकी तृप्तिके लिये पर्याप्त कार्य किया है। इसी विभाजनको दृष्टिगत रखते हुए हम जैनमित्रकी सेवाओंके मूल्यांकनका प्रयत्न कर रहे हैं।

यद्यपि जैनमित्र किसी राजनैतिक पार्टी एवं दल विशेषका पत्र नहीं रहा और न इसने किसी दलका समर्थन ही किया है, फिर भी जैनियोंको अपने राजनैतिक संगठनके लिये इसने अपनी आवाज बुलंद की है। जब कभी हमारे ऊपर कोई आपत्ति या कठिनाई आई तो हमने देखा कि उस स्थितिमें जैनमित्र कभी चुप नहीं बैठा। हमें हमेशा चेतना मिलती रही, मार्गदर्शनके लिये हमने इसे आगे पाया।

सामाजिक सुधारके लिये जैनमित्रके कुछ कार्य चिर स्मरणीय रहेंगे। हमारे समाजमें विद्यमान सामाजिक कुरीतियों एवं कुप्रथाओंके विरुद्ध इस पत्रने अपनी जोरदार आवाज बुलंद की और इस कार्यमें इसे सफलता भी प्राप्त हुई। दहेज प्रथा, मरणभोज, वृद्ध विवाह आदि समाजको खोखला करनेवाली कुरीतियोंका यथा-शक्य विरोध किया गया और इसकी हानियोंपर प्रकाश डालकर समाजको सावधान किया गया। इस कार्यका थोड़ासा भी प्रयत्नकर्ता प्रशंसनीय होता है क्योंकि समाज-मूलको दृढ़ एवं उसे विकास मार्ग पर आरूढ़ करनेके लिये समाजमें इन कुरीतियोंका अभाव होना, अत्यावश्यक होता है।

इन दो अंगोंके सिवाय यदि हम जैनमित्रमेंसे धार्मिक विषयसे संबंधित लेख कविता आदि संग्रहीत करें तो एक बड़ा धार्मिक ग्रंथ तैयार किया जा सकता है। विशेषता यह है कि किसी विशेष धार्मिक ग्रंथकी पुनरा-वृत्ति नहीं की गई बल्कि उनमें वर्णित विषयोंपर विद्वानोंके विचार हमें पढ़नेको मिले। कई समस्याएं कठिनाइयां और विरोध इस पत्रके माध्यमसे समाधानको प्राप्त हुए। धार्मिक-शृङ्खलाको कायम रखनेके लिये इस पत्रने जो कार्य किये हैं, वे अमर हैं।

जब हम अपने "मित्र" की त्रिमुखी सेवाओंको स्मरण करते हैं तो हमारे सामने रत्नत्रयका स्वरूप आजाता है। जिस प्रकार रत्नत्रयसे अमरपदकी प्राप्ति है, उसी प्रकार इस त्रिमुखी सेवाने मानों जैनमित्रको अमर कर दिया फिर हीरक जयन्तीके अवसर पर ये शब्द निकल जाना स्वाभाविक है।

जुग जुग जिये जैनमित्र।

एक दृष्टिमें—

जिसका कोई शत्रु नहीं

पं. बाबूलाल जैन
जमादार-बड़ौत

यों तो समाजमें बड़े२ श्रीमान् धीमान् और त्यागवान हुए होंगे मगर अपने समयका एकमात्र श्रीमान्, धीमान् और त्यागवान एक ही पाया जा रहा है, वह कोई व्यक्ति नहीं है, और है भी तो सर्वगुण सम्पन्न सदा एक स्थितिमें रहनेवाला, न कभी जिसका ढांचा बदला न टाईप बदला और न बदला जिसका अपना आभूषण ऐसा है वह "जैनमित्र" !

"जैनमित्र" ने कितने मित्र पैदा किये इसकी गिनती नहीं की जा सकती। इसकी अनोखी कहानी है। यह सदैव समयका पाबन्द रहा है, सदैव हरेककी बात अपने अन्तस्तलमें स्पष्ट रखता रहा है जिसे हरेक अपनी इच्छासे अपना रूप देख सकता है। बगैर भेदभाव किये साम्यभावसे प्रेषकोंके समाचार व लेख इसमें देखनेको मिल जाते हैं। सच पूंछिये तो यही एक ऐसा मित्र है जो सबकी सुख-दुःख, जीवन-मरण, लाभ-लाभ, भोग और हानि-प्रतिष्ठा, अप्रतिष्ठा आदिके समाचार खोती हुई जैन समाज तक पहुँचा देता है। साथ ही जैन सिद्धांत मननके हेतु या स्वाध्यायके हेतु सालमें एक न एक धार्मिक ग्रंथ भेंटमें भेजकर अपनी मित्रता व कर्तव्य-परायणताका पूर्ण रूप प्रगट करके अपना कर्म निभाता है। फिर भला सोचो इसका कोई अहित कैसे चाह सकता है।

"जैनमित्र" निर्भीक और स्वाभिमानी जहां रहा है वहां उसने समाजमें फैली रूढ़ियोंको जड़ मूलसे उखाड़ फेंकनेमें कोई कोर कसर न छोड़ी। "क्या, हम वह दिन भुला सकते हैं जब जैन ग्रन्थोंके प्रकाशनकी बात करना धर्म विरुद्ध समझा जाता था ? क्या, हम वह दिन भूल सकते हैं जब समाजके कुछ बन्धुओंको बहिष्कार करके धर्मकर्मसे वंचित किया जा रहा था ? क्या हम वह दिन भूल सकते हैं जब धार्मिक ग्रंथोंमें योनिपूजन आदिका वर्णन लिखा जाने लगा था ? क्या हम वह दिन भूल सकते हैं जब घरोंको व जेवरोंको गिरवी रखकर मरणभोज किये जाते थे ? क्या हम वह दिन भूल सकते हैं जब गजरथोंका घोर विरोध समयको देखकर किया गया ? और क्या हम वह दिन भी भूल सकते हैं जब जैन धर्ममें फैल रहे शिथिलाचारोंको मित्र सुन्दर ढङ्गसे प्रगट करता हुआ सुधारका मार्ग बता रहा है ?"

कितने तुकांत कवियोंको कविमित्रने बना दिये और कितने लेखकोंको लेखक इसने बनाया गिनती करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। यों यदि कहा जाय कि हमारा "जैनमित्र" कामधेनु है या कल्पवृक्ष है तो अत्युक्ति नहीं होगी। सभीकी भावनाओंकी पूर्ति इसके द्वार पर होती है। फिर भला सोचिये इससे जैन समाजका प्यार क्यों न हो ? अवश्य हो।

एकबार जैन पत्रोंकी स्थिति पर चर्चा चल पड़ी सभी जैन पत्रोंमें पार्टीबाजी व संस्थावादकी बात कहकर कोई न कोई कमी निकाल दी और अन्त इन शब्दोंमें कर दिया जाता कि अमुक पत्र परिषद्के गुण गाता है, अमुक पत्र महासभाके गुण गाता है और अमुक

पत्र पंडितोंके गुण गाता है तथा अमुक पत्र मुनियों व त्यागियोंके गुण गाता है, अमुक पत्र यतीयों व श्रीमानोंके गुण गाता है, और अमुक पत्र आध्यात्म-वादियोंके गुण गाता है अथवा जैन सिद्धांतकी खोजमें लगा है आदि मगर "जैनमित्र" एक ऐसा पत्र है जिसमें यों कहो—"हाथीके पैरमें सबीका पैर" वाली कहावत पूर्ण होती है। इसमें उपर्युक्त पत्रोंका स्तर बराबर मिल जाता है इसीसे इसका संचालन आदिसे आजतक एक ही कर्मठ समाज सेवी वयोवृद्ध सेठ मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाके हाथमें चला आ रहा है।

श्रद्धेय परम पूज्य स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीकी पैनी लेखनीने मित्रमें जीवन डाला तो मान्य कापड़ियाजीके सहयोगी समकालीन विद्वान पं० दामोदरदासजी व पं० परमेष्ठीदासजीने रूढ़ियोंको तोड़नेमें अमरत्वका काम किया। वर्तमानमें श्री 'स्वतन्त्रजी' अपनी लेखनीको मांजनेमें लगे ही हैं जो प्रति अंकमें हमें देखनेको मिलती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान युगमें जैनसमाजका इकलौता व लाड़ला यदि मित्र कोई हो सकता है तो वह है हमारा चिरपरिचित परखा पुराना "जैनमित्र।"

भारतवर्षके कितने उत्थान पतनके चित्र इस मित्रने देखे हैं उनका वर्णन न करके हम यह अवश्य कहेंगे कि जैन समाजके उत्थान व पतनके चित्र जहां मित्रने देखे वहां उन चित्रोंको समाजके सम्मुख भी व्यक्त किये हैं। आज उनका संकलन ऐतिहासिक सामग्रीके रूपमें सुरक्षित है।

गिरिराज सम्मेदशिखरजीका झगड़ा, केशरिया कांड, मक्सी पार्श्वनाथ कांड, गिरनार कांड, पालीताणा कांड आदि सुरक्षित समयपर अंकित यहां हैं वहां रतलाम कांड, जबलपुरकांड, देवगढ़ बूढ़ी-चंदेरी, दूबई आदि तीर्थक्षेत्रोंके कांडके चित्र जनता तक पहुंचानेमें कोई कोर कसर सिमने न रखी।

साहित्यिक क्षेत्रमें देखिये—एकसे एक प्राप्य पूर्वाचार्योंके व पूर्व कवियोंके तथा वर्तमान कालके कवियों व लेखकोंके प्रगट होते रहते हैं जिससे समाजको समय समय पर लाभ होता रहता है। भले ही व्यक्तिगत कुछ काम अंश ही पर होता अवश्य है। कहीं भी कोई ग्रन्थ व पूर्व भंडारकी मांग हो वह सुनतकी ओर अवश्य निगाह डालेगा और निराश कभी न लौटेगा।

ऐसे शुभावसर पर हम अपने 'जैनमित्र'की शतायुः चिरकामना करते हुए उसके कर्णधारोंकी भी शुभ कामना करेंगे कि वह इसी प्रकार सतत् जैन समाजकी सेवामें तत्पर रहें जिस प्रकार आज है।

कामना

सूरज बनकर ऐसे चमको।
मिट जाय लोक अंधियारा ॥
धरतीके आंगनको दे दो।
अपने ज्ञान दीपका उजियारा ॥

—"सागर", विदिशा।

स्वास्थ्यके लिए नींद आवश्यक है

(लेखक—श्री धर्मचन्द्रजी सरावगी, कलकत्ता)

शरीर विज्ञानके विद्वानोंने यह माना है कि नींदके समय मनुष्यको गहरे सांस लेने पड़ते हैं और इन गहरे सांसोंके द्वारा सारे दिनमें शरीर और फेफड़ोंमें जो विष उत्पन्न होता है वह निकलता है, दिनमें अशुद्ध भोजनके द्वारा जो विजातीय पदार्थ शरीरमें पहुँचता है और उससे जो थकान आती है वह रात्रिके समय नींदकी अवस्थामें पूर्ण हो जाती है। इसलिए यह माना गया है कि नींदका समय मनुष्यकी उम्र, काम, उसके भोजन तथा अन्य कई बातोंपर निर्भर करती है। जिन लोगोंका भोजन गलत होता है या जिन लोगोंको अधिक मेहनत करनी पड़ती है उन्हें अपनी थकानको दूर करनेके लिए तथा गलत भोजनके विषको निकालनेके लिए अधिक सोना पड़ता है। कभी कभी तो ऐसा भी होता है कि गलत भोजन करनेवालोंको अनिद्राकी बिमारी होती है क्योंकि गलत भोजन आंतोंमें जाकर सड़ता है और उसका असर उनकी नाड़ियोंपर आता है। इसलिए बच्चोंके अलावा साधारण जवान व्यक्तिके लिए यह हम मान लें कि ६–७ घंटेकी नींद काफी है। परन्तु जिनका भोजन गलत है और जो किसी प्रकारकी मादक चीजें खाते हैं उन्हें अधिक देर सोना पड़ता है और वह अवधि ८–९ और १० घंटेकी होती है।

भोजनसे हमारे शरीरका निर्माण होता है। दिन भरके कार्योंसे शरीरके जो परमाणु नष्ट होते हैं वे भोजन द्वारा बनते हैं। नींदसे हमारे शरीरकी मरम्मत होती है इसलिए जब कभी रोगीको नींद आती है तो उसे अच्छा माना जाता है और बढ़ियासे बढ़िया औषधि भी उसे उस समय नहीं दी जाती क्योंकि यह माना हुआ सिद्धांत है कि शरीरकी मरम्मत बढ़िया नींदसे होती है और किसीसे नहीं होती, नींद और भोजनका सम्बन्ध एक दूसरेसे बंधा हुआ है परन्तु इसमें भी नींदका स्थान मुख्य है, अनुभवसे देखा गया है कि मनुष्य बिना भोजनके कई दिनों, कई हफ्तों और कई महिनों रह सकता है पर बिना नींदके वह कुछ ही दिनों तक रह सकता है।

जागरणकी अवस्थामें पेड़, पौधों, जानवरों और मनुष्योंमें फर्क होता है, निद्राकी अवस्थामें सब एक ही तरह निर्जीवसे सोते हैं। चाहे वह गरीब हो, विद्वान हो, धनी हो, किसान हो, मूर्ख हो या कवि हो, मनुष्य जब जागृत अवस्थामें होता है तो प्रकृतिके नियमोंका उल्लंघन करता है इसी कारण शरीरमें कमजोरी, थकान और विजातीय द्रव्य आते हैं, परन्तु जब वह सोता है तब उसे स्वतः ही प्राकृतिक नियमोंका पालन करना पड़ता है और उस समय उसके शरीरकी मरम्मत हो जाती है। इसलिए बिना सोए अधिक दिनतक जीवित रहना सम्भव नहीं। जैनियों और पारसियोंके धर्म ग्रंथोंमें लम्बे उपवासोंके बड़े लाभ बतलाये हैं। जिनके शरीरमें काफी विजातीय पदार्थ होता है वे बिना सोये कुछ दिन भी नहीं रह सकते, परन्तु जो स्वास्थ्यकर भोजन खाकर

करते हैं वे कई दिनोंतक बिना सोये रह सकते हैं। उनके शरीरको सोकर विजातीय पदार्थ निकालनेकी जरूरत नहीं रहती, सोनेकी अवस्थामें नींद उनके शरीरकी मरम्मत करनेके बजाय उनको दीर्घ आयु अच्छा और उन्नत बनाती है। इसलिए अपने यहां कहा है—

जैसा खाय अन्न, वैसा होवे मन;

गलत खान-पान करनेवालोंको अधिक नींद्रा आती है। बहुतबार समाचार पत्रोंमें पढ़नेका मिलता है कि कई लोग महीनों तक सोते हैं और डाक्टर उन्हें उठा नहीं सकते।

नींदकी अवस्थामें किसी प्रकारका शरीरमें दर्द नहीं मालूम होता इसलिए चीड़फाड़के समय चिकित्सक रोगीको औषधियों द्वारा बिजली नींदमें सुलाते हैं। विशेषज्ञोंका यह भी कहना है कि नींदकी अवस्थामें शरीर पर विषका असर नहीं होता, विषका असर मनुष्यकी जागृतिकी अवस्थामें ही होता है, नींदकी अवस्थामें मनुष्यको ज्ञानकी प्राप्ति होती है, बड़े-बड़े लेखक, कवि, वैज्ञानिक तथा अनुसंधान कर्ताओंकी डायरियोंके पन्नोंसे यह पता लगता है कि बहुतसे लेख कवितायें रात्रिमें लिखीं गयीं और बहुतसे अनुसंधान सोनेके बाद सुबहके शांत वातावरणमें हुए। संसारमें जितने महापुरुष हुए हैं उनका जीवन क्रम देखा जाय तो पता लगेगा कि बहुत सीधा सादा सात्विक जीवन रहे, इसी कारण उनके विचार बढ़िया होते थे। नींदको उनके शरीर मरम्मत करनेकी जरूरत नहीं पड़ती थी।

सोनेके समय हमें कमसे कम कपड़े शरीर पर रखने चाहिए साथ ही यह भी ध्यान रहे कि वह भी ढीले ढाले हों। जिस घरमें सोयें उसकी खिड़कियां खुली हों, जिस चीज पर सोयें वह स्वच्छ हों, स्प्रींगवाली मुलायम गद्दे, स्प्रींगकी चीजों पर सोनेसे मेरुदण्ड टेढ़ा होता है सोनेके लिए हमारे भारतीय ढंगसे सबसे अच्छी चीज तख्त है। सोते समय मुँह ढकके नहीं सोना चाहिए। बढ़िया नींदके लिए सोनेके पहिले मुँह हाथ धोकर अपने आराध्यदेवका ध्यान कर सोया जाय तो बढ़िया स्वास्थ्य कर नींद आयेगी। भोजन भी सोनेके तीन चार घंटे पहिले कर लेना चाहिए।

जैनमित्रके प्रति

हे जैनमित्र तुम रहो अमर।

प्रबल सुधारक बनकर तुम पत्रोंकी दुनियामें आये।
समयोचित प्रचार करनेमें तनिक नहीं घबराये॥
परंपरागत कार्योंमें तुम ही नूतनता लाये।
रूढ़ियावादियोंके आगे तुम रहे सदा निर्भीक निडर॥

♣

दस्से बीसेके विभेदको तुमने ही अनुचित ठहराया।
दर्शन पूजनका उनको न्यायोचित अधिकार दिलाया॥
मृत्यु भोजके दानवसे तुमने ही पिण्ड छुड़ाया।
कन्या वर विक्रेताओंसे डटकर तुमने किया समर॥

♣

लेखक कवियोंके हृदयमें तुमने ही उत्साह भरा है।
उचित पाठ्य सामग्री देकर जनताका उपकार किया है॥
सुसंगठित करना समाजको यह महानतम ध्येय रहा है।
झेल अनेकों विपदायें बन गये मित्र तुम पथ अजर॥

♣

साठ वर्षके हुए किन्तु आई तुममें तरुणाई।
नया कलेवर नई दिशा तुम पर आई अरुणाई॥
आज खुशीकी बेलामें हम देते तुम्हें बधाई।
मित्र मित्रता सदा निभाना रखना तुम सब ओर नजर॥

—धमणेन्द्रकुमार शास्त्री, कटनी।

जैनमित्र: एक सिंहावलोकन

(लेखक—भागचन्द्रजी जैन "भागेन्दु" शास्त्री, काव्यतीर्थ एम. ए. (प्रि०) विश्व वि०—सागर)

"जैनमित्र" बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाका साप्ताहिक मुखपत्र विगत पचीस वर्षोंसे हमारे परिवारमें उपलब्ध है। प्रसन्नता अतिशय इस बातकी है कि इसने अनेक असह्य विपदाओंका प्रत्यक्षीकरण करते हुए भी ६० वर्ष अनवरत अनवरुद्ध गतिसे समाप्त कर लिये हैं। विगत पचीसों वर्षों और इसके पूर्वके भी सभी अंकोंकी फायलें हमारे पुस्तकालयमें आज भी आलोडित होती रहती हैं। अतः ऐसे महत्वपूर्ण पत्र पर एक समीक्षात्मक निबन्ध आवश्यक है।

"जैनमित्र" बम्बई प्रांतीय सभाका मुखपत्र है, इस नाम विशिष्टसे अनुमिति होती है कि इस पत्रका उद्देश्य संस्था विशेषके उद्देश्योंका प्रचार करना है। किन्तु जैनमित्रका इतिहास इस बातका साक्षी है कि—यह सभा विशेषका पत्र न होकर सार्वभौमिक नैतिक स्तर पर कार्य करनेवाला पत्र है। इसमें सामाजिक धार्मिक, राजनैतिक और अन्तर्राष्ट्रीय आदि किसी भी विषयकी उपेक्षा नहीं हुई। प्रत्येक परिस्थितिसे जन सामान्यको परिचित कराना इसका प्रमुख उद्देश्य चला आ रहा है। वस्तुतः मुझे उस समय विशेष प्रसन्नता होती है, जब पाण्डुलिपि पाठककी त्रुटिसे जैनमित्रके स्थान पर "जनमित्र" ही रह जाता है। वस्तुतः हृदयकी बात ही होकर रहती है। यह पत्र न केवल जैनियोंका मित्र है, प्रत्युत मानव मात्रका अनुपम मित्र है। यह प्रूफ रीडरकी सत्कृपासे ही अपना वास्तविक नाम यदाकदा प्रकट कर देता है।

जैनमित्रके उद्भव विकास और युवावस्थाकी कथा अत्यन्त रोमांचकारी है। इसे कैसी कैसी विपत्तियोंका सामना करना पड़ा है, यह तो आज हम और आप सुनकर ही अपना साहस तोड़ देंगे। किन्तु धन्य है वे कर्मठ सत्पुरुष जिनके पुनीत करकमलों द्वारा यह पत्र सदैव उन्नतिके पथ पर अग्रसर रहा।

श्री० पं० गोपालदासजी बरैया जैसे उद्भट विद्वद्रेण्यने इसके समुन्नयन हेतु कुछ भी नहीं उठा रखा। श्रद्धेय ब्र० शीतलप्रसादजीसे तो इस पत्रको माताकी ममता और पिताका स्नेह अशेष रूपमें उपलब्ध हुआ। 'माडर्न रिव्यू' का तात्पर्य और अनेक अनुपलब्ध ग्रन्थोंकी टीकायें आपकी ही कृपा-प्रसून हैं। पत्रके सार्वदेशिक प्रचार प्रसार और विकास तथा महत्वपूर्ण बनानेमें पुत्रवत् ध्यान आपका रहा है। श्री० पं० परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थकी उदात्त सेवावृत्ति, साहित्यिक अभिरुचि और प्रखर तर्कणाशक्तिका परिचय भी जैनमित्रके विगत वर्षोंकी फायलोंसे दर्शित होता है।

आजके जैन पत्रकार जगत्में सर्वाधिक सेवाव्रती, समाज, धर्म, साहित्य और राष्ट्रके सेवक तथा हितचिन्तक, मौलिक विचारक श्रद्धेय श्री. मूलचन्दजी किसनदासजी कापड़ियाको तो हम लोग "जैनमित्रका अग्रज" कह सकते हैं। एक सुयोग्य अग्रजकी भांति

उन्होंने अपने अनुभवके सर्वांगीण विकासका पूर्ण ध्यान रखा है। जहां जिस बातकी न्यूनता दृष्टिगोचर हुई वहां उसकी अविलम्ब पूर्ति की है। इतनी वृद्धावस्था (आयु और ज्ञान दोनोंसे) होने पर भी आपकी नियमित सुव्यवस्थित दिनचर्या और सेवावृत्ति आपको महापुरुषके पद पर प्रतिष्ठित करनेको लालायित है। आपके ही निकटमें हमें श्रद्धेय पं० ज्ञानचन्द्रजी "स्वतन्त्र" से परिचय प्राप्त होता है। भैया स्वतंत्रजीकी विविध पत्र पत्रिकाओंमें प्रकाशित होनेवाली रचनायें नित्य प्रति उनकी प्रौढ़ता मौलिकता और व्यापकता व्यंजित करती हैं।

"हम कैसे सुधरें?", "हमारे देशका मानचित्र" इत्यादि लेखमालायें आपकी निर्भीकता और मानव सुधारकी उदात्त भावना प्रकट करती हैं। "पाप और पुण्यकी चर्चायें" स्वर्ग और नरक जैसे सूक्ष्म विषयोंपर भी आपकी लेखनीने कमाल हासिल किया है समय२ पर सभी आवश्यक और उपयोगी विषयों पर लिखना आपका कर्तव्यसा होगया है। आप कथाकार, कहानीकार, निबन्धकार, समीक्षक और विचारक एक साथ हैं, साथ ही कुशल वक्ता और क्रियाकाण्डके मर्मज्ञ पंडित हैं।

जैनमित्र-ने ही अनेक कोमल हृदय-कवियों और लेखकोंको उनको अनेक प्रकारसे प्रेरणायें और प्रोत्साहन देकर जन्म दिया है। सभी प्रकारके उपयोगी साहित्यका प्रकाशन कर पाठकोंको मानसिक भोजन प्रदान किया है तथा कर रहा है। पाठकोंके पास सहज ही इसके उपहार ग्रन्थोंसे सिद्धान्त ग्रन्थोंकी लायब्रेरी एकत्र हो गई है।

अन्तमें-हम भगवज्जिनेन्द्रदेवसे जैनमित्र, श्रीमान् कापड़ियाजी एवं भाई सा० पं० स्वतन्त्रजीकी चिरायु और उदात्त अनुपम लोक कल्याण भावनामें वृद्धयर्थ कामना करते हैं। इत्यलं विस्तरेण।

अभिनन्दन

(पं० चन्दूलाल शास्त्री साहित्यरत्न, [illegible])

यदि जैनमित्र पत्र हमें ना मिला होता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता।
समय व्यर्थ ही जाता ॥टेक॥

नव जागृति सन्देश हमें कौन सुनाता,
लेखक तथा कवियोंको कहो कौन बढ़ाता।
श्री मूलचन्दभाई सम्पादक नहीं होता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता ॥
समय व्यर्थ ही जाता ॥ १ ॥

यह रूढ़िवाद आज तलक हमको सताता,
सच्चे सुधारका हमें दर्शन नहीं होता।
स्थितिपालकोंसे पिंड छुड़ाया नहीं जाता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता ॥समय०॥

कन्याविक्रय तथा दहेज कौन मिटाता,
पर्दा प्रथा व मरणभोज कौन हटाता।
जाति सुधारका सुपाठ कौन पढ़ाता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता ॥
समय व्यर्थ ही जाता ॥ ३ ॥

दस्साओंको पूजाधिकार कौन दिलाता।
जिनवाणीका उद्धार कहो कौन कराता।
गर मित्र न होता तो हमें कौन बचाता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता ॥
समय व्यर्थ ही जाता ॥ ४ ॥

पूरे हुए हैं साठ वर्ष हम है "चन्दन",
हीरक जयंतीका लो जैनमित्र अभिनन्दन।
बढ़ता रहे मित्र रीति नीति नित्य निभाता,
उत्थान जैनधर्मका किसने किया होता ॥
समय व्यर्थ ही जाता ॥ ५ ॥

जैनमित्रके माध्यमसे—
श्री० पं० नाथूरामजी प्रेमीकी साहित्य सेवा

लेखक–सवाई सिंघई अनन्तराम जैन, दीठी (कटनी)

आजके आलोचना प्रधान युगमें जैन कृतियोंकी ही सबसे कम आधुनिक जन भाषामें विवेचनापूर्ण समीक्षायें प्रस्तुत हुई हैं। हमारी दिगम्बराम्नायकी कृतियां तो इस बातमें और ही दूर हैं, श्वेताम्बरोंके आगियों और विद्वानोंने हमसे बहुत पूर्व अपना साहित्य विश्वके रंग मंच पर प्रस्तुत कर दिया, इसीलिए प्रायः अधिकांश लेखक उन्हींकी कृतियोंके आधारपर समस्त जैनदर्शन, समाज और धर्मके प्रति अपनी धारणा परिपुष्ट कर लेते रहे हैं। यद्यपि इस मौलिक तथ्यसे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि—"पूर्वकी आलोचनात्मक पद्धति पश्चिमकी देन है", परन्तु हम लोगोंने उसे बहुत बादमें ग्रहण किया है, इसे भी नहीं मेंट सकते। वस्तुतः हमारे भारतवर्षके समस्त वाङ्मयमें पाश्चात्य–समीक्षा जैसी कोई चीज ही नहीं दृष्टिगत होती, जिसमें विवेचनात्मक पद्धतिसे ऊहा-पोह हुआ हो। यहां या तो किसी कृतिकारकी प्रशंसामें यत्र तत्र २-४ श्लोक या पद मिल जावेंगे या कुछ और खोज.का मिलेगा।

पाश्चात्य–समीक्षा सिद्धांतसे अनुप्राणित हो, जैन दर्शन और साहित्यका सर्वेक्षण, आलोडन-विलोडन और आधुनिक जन भाषामें विश्वके समस्त विवेचन प्रस्तुत करनेवाले महानुभावोंमें श्रद्धास्पद पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार, श्रद्धेय पं० नाथूरामजी प्रेमी, माननीय डा० कामताप्रसादजी जैन और श्री अगरचन्दजी नाहटाने सर्वाधिक कार्य किया है। ये विद्वान् 'भारतीय वाङ्मयके इतिहास"में अपना महत्वपूर्ण स्थान सुरक्षित किए हुए हैं। इनमेंसे प्रत्येकने जैनदर्शन और साहित्यके प्रचार, प्रसार विकास और प्रकाशमें लानेके लिए अद्वितीय सेवा व्रत ही धारण कर अपना सर्वस्व ही समर्पण कर दिया है। अनेक विवेचनात्मक आधुनिक शैलीमें मौलिक रचनायें प्रस्तुत की हैं। ग्रन्थरत्नोंके प्रारम्भमें संक्षिप्त प्राक्कथन भी एक स्वतन्त्र ग्रंथके रूपमें प्रस्तुत किए जा सके हैं। जैनदर्शन और साहित्यका अन्य विद्वानोंको समीक्षात्मक अध्ययन करनेकी प्रेरणा इन्हीं महानुभावोंके ग्रन्थों और उनकी शैलीसे प्राप्त हुई है।

श्री पं. नाथूरामजी प्रेमीका जन्म सागरके समीप देवरी स्थानमें हुआ है। यह भूमि विद्वानोंकी उत्पादक और अतिशय उर्वरा है। अंग्रेजी और संस्कृत दोनों क्षेत्रोंमें यहांके सैकड़ों विद्वद्रत्न यत्र तत्र प्रकाशमान हैं। प्रारंभसे ही प्रेमी-जीकी वृत्ति साहित्य सृजनसे अनुप्राणित है। आपने जैन-दर्शन और साहित्यका गम्भीर और क्रमबद्ध आलोचनात्मक अध्ययन कर "जैन साहित्यका इतिहास निबद्ध किया। यह आज सभी जैन अजैन विद्वानोंको जैन साहित्यके विकास और अध्ययनके लिए मार्ग-दर्शक बना हुआ है। सहस्रों ग्रन्थोंका प्रकाशन, निर्माण और सम्पादन आपने किया है।"

"जैनमित्र" के प्रारम्भ और मध्यकालमें जितना

उपयोगी साहित्य प्रकाशित हुआ है, उतना सम्भवतः अन्य किसी जैन पत्रमें नहीं हो सका। एकसे एक उद्भट विद्वानोंका साम्निध्य, सम्पर्क और सहयोग इसे प्राप्त रहा है। विद्वद्वर पं० गोपालदासजी बरैयाके महत्वपूर्ण प्रवचन, श्रद्धेय ब्र० शीतलजीकी टीकायें और टिप्पणियाँ तथा मान्यवर पं० प्रेमीजीकी अद्भुत सम्पूर्ण साहित्य-सर्जनाका परिचय हमें 'जैनमित्र' के माध्यमसे ही प्राप्त होता है। 'जैनमित्र' में पं० प्रेमीजीका जो साहित्य प्रकाशित हुआ है, उस ढँगका साहित्य आज किसी भी पत्रमें प्रकाशित नहीं हो रहा है। श्रद्धेय प्रेमीजीने मनसा, वाचा, कर्मणा जैनधर्म, दर्शन और समाज तथा साहित्यकी सेवायें जैनमित्रके माध्यमसे की हैं। साहित्यके आलोचनात्मक अध्ययनकी प्रेरणा आपने बहुत् की है।

'जैन साहित्य अनुसंधान योजना' में भी श्री० पं० नाथूरामजी प्रेमीकी प्रमुख-प्रेरणा और व्यापक कार्य-तत्परता है। आपकी साहित्य सेवाके स्मरणार्थ "प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ" प्रकाशित कर आपको समर्पित किया ही गया है। किन्तु आपकी एतावती विशाल साहित्य सेवाका स्मरण इतने ग्रन्थ मात्रसे ही पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। जैनमित्र तथा विविध पत्रों द्वारा आपने जो साहित्यसेवा की है वह भी निरन्तर अनुस्मरणीय है। हम उनकी चिरायुकी कामना करते हैं। इत्यलम्।
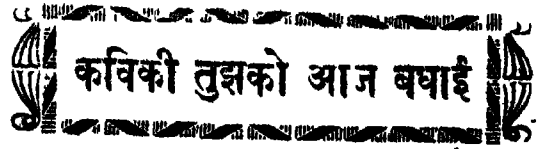
कविकी तुझको आज बधाई

[श्री सागरमल जैन, सागर, विदिशा।]

साठ वर्ष अब पूर्ण हो गये
कोई तुमसे बूढ़ा न कह दे!
इसलिये, कहावत याद आगई—
साठा सो पाठा
तूने बचपन देखा
और जवानी?
जाने कितनी आंधी, तूफान, बवन्डर देखे हैं तूने
सागरकी उत्ताल तरंगे
तुझे डुबोने आने कब कब?
आसमानको छूने ऊपर उठकर आई होंगी!
पर-गिरि शैल हिमालयकी नांई
तूने सब कुछ सह डाला
लू-लपट-गरम हवाएं भी?
छू कर ठण्डी हो जाती हैं
वैसे ही जाति पांतिके भेदभावसे
तू अडिग रहा है अब तक—
इसलिये बधाई तुझको है!

♣

जिन पंचोंने मानवके अधिकार छीनकर
मानव-मानवमें भेद कर दिया
उन पंचोंके सन्मुख तूने
दस्सोंको मानवके अधिकार दिलाये
आखिर तूने कह डाला फिर—
भगवान नहीं तालेमें बंद हुआ करता है!

पूजन, आराधन, अर्जन सब समान हैं
जिओ और जीने दो जगको
जीनेका अधिकार मिला है
आज युगोंके बाद पुनः यह
मानवताका रूप खिला है
एक जातिके भेद चौरासी !
अन्धेर जमानेभरका इस धरती पर आया
मजहब एक-एक जाति है
एक दीन और एक ईमान है
तू करके सबको
सफल हो जाये अपने मनमें
इसलिये मैं अभिन
तुमको देता आज बधाई !

♣

तेरे बारेमें कविका नारा भी मिल जायेगा
ये गजरथ बंद करो !
ये बरबादी, जन-धनकी-तनकी
वैसे ही तुम लाख रुपये दे डालो
शिक्षालयको !
हम तुमको जो चाहेंगे !
पदवी दे डालेंगे !
एक नहीं—आगेकी पीढ़ीको भी
पट्टा दे देंगे !
पर जनमतके आगे ये नंगे नाच
नहीं चलेंगे—बंद करो अब
समयने पलटा खाया है
तुम्हारी अब न चलेगा !
रुपयोंसे दुनियाका सब काम
नहीं हो पाता है।
ये हठ धर्मी, ये पागलपन है
तुमने खून पसीना चूस चूस कर
सोनेके हार गढ़े हैं
सोनेकी लंका गढ़ डाली है
मूल-मूल पर सूद-सूद पर सूद दिया है
उस धनके गजरथसे
भगवान नहीं खुश हो पायेगा !
जिन सोनेकी मोहरों पर
कालोंच लगी है
अब भी चाहो तो
पदवी मिल सकती है
हर साल कसमसे—
इस गजरथका सोना दे डालो,
बन जायेगा एक 'विश्व विद्यालय'
जैनमित्र तू सफल हो
अपने इस बारेमें
कसम है मुझको मिट्टीकी
बहते पानीकी !!
हर सांसोंकी !!!
तुमको मैंने कलम बेचदी
तो फिर
मेरी तुमको आज बधाई
कविकी तुमको आज बधाई !
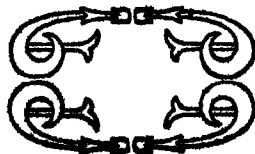
जैनमित्रसे

सामाजिक कुरीतियोंको तुमने ही दूर भगाया।
नई पौधको हँस हँस कर तुमने निज गले लगाया॥
शिक्षाका प्रचार किया, कर रहे, करोगे आगे।
जागे कितने सोनेवाले, शंख ध्वनि सुन जागे॥
दस्साओंको पूजाका तुमने अधिकार दिलाया।
क्रूर रूढ़ियोंका तुमने जड़से संहार कराया॥
बाल-वृद्ध अनमेल शादियोंके विरुद्ध आवाज-
सुनकर कुछ बौराये, कुछको छाया हर्ष अपार॥
रखा सदा ही तुमने, आगे निज आदर्श महान।
जाति, धर्मका सदा किया वश भर अपने उत्थान॥
अन्तर जातीय शादी, तुमने पतितोद्धार कराया।
अपनी विजय पताकाको, नीलाम्बरमें फहराया॥
पथ-दर्शक बन सदा सत्यका पथ हमको दर्शाया।
ऊँच नीचका छुआ-छूतका, अन्तर दूर हटाया॥
साठ वर्षसे तुम जन-जनका, कर उपकार रहे हो।
लाख विघ्न बाधायें आयीं, पर तुम अडिग रहे हो॥
सुना आज तुम मना रहे 'हीरक जयन्ती'का उत्सव।
अन्तरमें आह्लाद छा गया, हुए प्रफुल्लित हम सब॥
एक निवेदन करता हूं तुमसे प्रिय 'मित्र' महान।
जाति धर्मका सहन न करना सपनेमें अपमान॥
तेरा यश नित बढ़े, बढ़े गौरव अपार सम्मान।
साठ नहीं छः सौ वर्षों तक, तेरा ही गुणगान॥
जब तक नभमें रवि शशि तारे वसुधापर जिनवाणी।
जन जनमें गूँजे तेरी, सुमधुर सुधारक वाणी॥

—लक्ष्मीचन्द्र जैन 'रसिक' विदिशा।

समाचार-पत्र और जैनमित्र

लेखक—जीवनलाल जैन, बी. ए. द्वितीय वर्ष, विश्वविद्यालय–सागर (म० प्र०)

इस प्रगतिवादी युगमें मानव नित्यप्रति नवीन आवश्यकताओंका अनुभव कर रहा है। और वह यथा शीघ्र मानव समाजसे निकटतम सम्बन्ध स्थापित करनेके लिए सतत् प्रयत्नशील है। इस प्रयत्नके पूर्ति हेतु नवीन आविष्कार भिन्न२ रूपमें दृष्टिगोचर हो रहे हैं जो मानवकी प्रगतिमें पूर्ण सहयोगी हैं। आज जिस ओर भी दृष्टिपात किया जाय उसी ओर नवीन२ आविष्कार मानवको मानवके निकट लानेमें तत्पर हैं जिन्होंने इस युगमें हमें बहुत निकट ला दिया है। हम एक दूसरेसे बहुत जल्दी परिचित हो जाते हैं, दूसरोंकी बात बहुत जल्दी सुन सकते हैं, समझ सकते हैं; और थोड़े समयमें दूर भी जा सकते हैं। इस प्रकारके अनेक नये आविष्कारोंने सारे संसारको एक कुटुम्बसा बना दिया है।

इन आविष्कारोंमेंसे एक छोटासा और सरल आविष्कार समाचार पत्रोंका है, जो घर बैठे ही हर व्यक्तिको पैसेके दाममें ही सारे संसारकी खबरोंसे सुलभ ज्ञात कराते हैं। आजके इस वर्तमान समयमें समाचार पत्रोंने सारे संसारमें धूम मचा दी है। हर व्यक्ति इनसे लाभ प्राप्त करता है। वैसे रेडियोंने भी समाचारोंको प्रसारित करनेका बहुत काम किया है। किन्तु यह इतना सरल और सस्ता नहीं है कि हर व्यक्ति इसके लिए अपने घरमें रख सके और इसके द्वारा होनेवाला जो उपयोग है उसका पूर्ण लाभ ले सके किन्तु समाचारपत्र एक ऐसे रूपमें हमारे सामने आते हैं, जिन्हें हमारी मानव समाजका प्रत्येक सदस्य ले सकता है और उनसे पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकता है।

मानव समाजका प्रत्येक सदस्य प्रत्येक क्षेत्रमें समाचार पत्रोंसे लाभ ले रहा है, और यह अनुभव करता है कि समाचार पत्र मानव समाजके लिए हर-प्रकारसे उपयोगी है। यदि आज समाचार पत्र न होते तो हम अपना इतना विकास नहीं कर सकते थे और न ही हम दूसरोंके इतने निकटतम हो सकते थे जितने कि आज हैं। आज मानव समाजने अपना इस ओर जो विकास किया है वह समाचार पत्रोंकी एक स्मरणीय देन है।

समाचार पत्र प्रत्येक क्षेत्रमें अपना कार्य कर रहे हैं। वर्तमानमें राजनैतिक क्षेत्रमें समाचारपत्रोंके बिना काम चलना ही असम्भव है। इसी प्रकार सामाजिक, आर्थिक आदि अन्य दूसरे क्षेत्रोंमें भी समाचारपत्रोंकी आवश्यकता है। जिस प्रकार समाचारपत्र राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्रोंमें उपयोगी सिद्ध हुए हैं उसी प्रकार धार्मिक क्षेत्रमें भी इनका महत्व बहुत अधिक है। क्योंकि वर्तमानकालमें प्रायः सभी धर्मों और सम्प्रदायोंके पृथक्२ अनेक पत्रोंका प्रकाशन होता है। पत्रोंका एक निश्चित ध्येय है धर्म प्रचार करना और प्रचारका एक अच्छा और सस्ता साधन धार्मिक समाचारपत्र ही हैं जो हमारे गरीब अमीर सभी बन्धुओंको समान रूपसे धार्मिक चेतनाका नवीन रूप देते हैं और मानव मात्रको धर्मकी ओर प्रेरित कर सन्मार्गका प्रदर्शन कराते हैं। इस

प्रकार धार्मिक समाचारों द्वारा नवीन चेतना उत्पन्न करानेवाले अनेक धार्मिक पत्र दृष्टिगोचर होते हैं जो अपने अविच्छिन्न प्रवाह द्वारा धर्मामृतका मानव मात्रको पान करा रहे हैं जिसका मानव समाज सदैव ऋणी है।

प्रत्येक धर्मोंकी भांति जैनधर्ममें प्रकाशित होनेवाले पत्रोंमें "जैनमित्र" समाजका एक मात्र प्रमुख पत्र है, जो अनवरुद्ध गतिसे गत ६० वर्षोंसे प्रकाशित हो रहा है। इसकी शैशवावस्थामें इस पर जो अनेक आपदएं आयीं उनका गुरुतर भार वहन करना और अपनी स्थितिको सुदृढ़ बनाये रखना एक मात्र जैनमित्रकी ही विशेषता है। यह निरन्तर प्रगतिशील पत्र है।

इसने मासिकसे पाक्षिक और पाक्षिकसे साप्ताहिकका रूप लिया और समाजके प्रत्येक सदस्यको युग चेतनासे अनुप्राणित किया। जन-जनमें क्रांतिके बीज उस समय बोये जब कि समाज और राष्ट्र पर अनेक तरहके मिथ्या आक्षेप और आक्रमण होनेको उद्यत थे। नवीन और प्रौढ़ सभी तरहके लेखकों कवियों और साहित्यकारोंको स्थान देना इसकी अपनी विशेषता है।

वर्तमानमें इसके सुयोग्य सम्पादक सेठ कापड़ियाजी समाजके एक ज्योतिस्तम्भ कहे जा सकते हैं। वे युग दृष्टा हैं। समयकी गतिसे परिचित हैं। समयके साथ चलते हैं और उसीके अनुसार चलनेकी प्रेरणा करते हैं।

"जैनमित्र"की इस हीरक जयन्तीके अवसरपर हम कामना करते हैं कि "जैनमित्र" अपने परिवारसहित सुख-समृद्धिपूर्ण यशस्वी हो।

जैनमित्र और उसकी सेवावृत्ति

[लेखिका—श्रीमती सरोजकुमारी सांघेलीय, सीठी]

जैन पत्र संसारमें सर्वाधिक व्यवस्थित और प्राचीन पत्र जैनमित्र ही है। यद्यपि 'जैन गजट' अपने प्रकाशन कालमें कुछ और पूर्ववर्ती है, पर बीच२में अनेकबार उसका बन्द होना आदि अनेक चीजें उसे इसका पश्चात्वर्ती ही सिद्ध करती हैं। जन्मतः आरम्भ अद्युनातन इसका मुद्रण, प्रकाशन और वितरण सुरीत्या सम्पादित हो रहा है। सौभाग्यसे इसके सम्पादकों और व्यवस्थापकोंने इसकी उन्नतिके लिए किसी भी प्रकारकी कोर कसर नहीं उठा रखी है।

उन लोगोंने इस पत्रके माध्यमसे अपना एकमात्र लक्ष्य विवाद रहित साहित्य सर्जना, धार्मिकता, सामाजिकता और राष्ट्रीयताकी भावनाको अनुप्राणित करना ही बना रखा है। यही कारण है कि आज ६० वर्षोंके सुदीर्घकालमें इसमें प्रकाशित अनन्त साहित्य यदि पुस्तकाकार रूपमें गुम्फित और प्रकाशित किया जाय तो सहस्रों बड़ी २ जिल्दोंके उपयोगी और महत्वपूर्ण ग्रन्थ तैयार हो जावें।

जैनमित्र वस्तुतः किसी संस्था विशेष या सम्प्रदाय विशेषका पत्र न होकर एक सार्वजनिक दृष्टिकोणका अभिज्ञायक प्रगतिशील पत्र है। युगके अनुसार सभी प्रकारके साहित्यको स्थान देना इसकी मौलिकताका द्योतक है। अपने सम्पादकीय वक्तव्योंमें समयानुकूल मन्तव्य व्यक्त करना और समुदायको कर्तव्य मार्गकी ओर प्रेरित करना इसका प्रमुख लक्ष्य है। इसके संपादक सुयोग्य शिक्षककी भांति अपनी पूर्ण जवाबदारीका निर्वाह करते हैं। समय२ पर प्रकाशित होनेवाले

साहित्यकी समीक्षा प्रस्तुत कर जनताको उसकी अच्छाई बुराईसे परिचित कराना इसका प्रशंसनीय कृत्य है।

गम्भीर उपयोगी लेखमालाओं-द्वारा जनताका अभ्युदय करनेका प्रयास इसकी अपनी विशेषता है। जैनधर्म जैनसाहित्य समाज और तीर्थोंपर किसी भी प्रकारका आक्षेप या आक्रमण होनेपर उसका खण्डन और कर्तव्य मार्गका सुझाव सदैव इसके द्वारा प्राप्त होता रहता है।

भ्रमणोंके विवरणों तथा मिशनकी रिपेटों आदिके द्वारा सामाजिक जागृतिकी सामान्य रूप रेखा मिलती रहती है। सरल भाषामें भी गम्भीर वस्तुका प्रतिपादन इसी पत्रकी अपनी विशेषता है।

श्रद्धेय कापड़ियाजी और श्रद्धेय पं० स्वतन्त्रजी जैसे अनुभवी विद्वद्द्वयके सुदृढ़ हस्तोंसे इस पत्रका संचालन और नियमन हो रहा है, वह भी उदात्त सेवा-भावनाकी प्रेरणासे। इतनी निःस्वार्थ वृत्ति संभवतः अन्य किसी समाजमें दृष्टिगोचर नहीं हो सकती। जैन समाजके लिए यह अत्यंत गौरवकी वस्तु है। वयसा ज्ञानेन च अत्यंत वृद्ध कापड़ियाजी सदैव सामाजिक सर्वाङ्गीण अभ्युदयके लिए ही अपना प्रत्येक कार्य-कलाप प्रस्तुत करते दृष्टिगोचर होते हैं।

जैनमित्रका मूल्य वैसे ही अल्प है। फिर भी उसके उपहार ग्रन्थोंसे ही उसका मूल्य वसूल हो जाता है। और पाठकोंके पास सहज ही उत्तम पुस्तकालय हो जाता है। इस प्रकार जैनमित्र और उसकी सेवावृत्ति अनुपम है।

जैनमित्र अपनी कार्यशक्तिमें 'दिन दूना रात्रि चौगुना' विकास करे, उसका हीरक जयन्ती अंक सर्व कल्याणकारी हो और एक सेवावृत्ति श्रद्धेय श्री कापड़ियाजी तथा पं० स्वतंत्रजी चिरजीवी और यशस्वी हों, यही मेरी शुभ कामना है।

शुभाकांक्षिणी विनीता—
श्रीमती सरोजकुमारी सांघेलीय
C/o सि० अनन्तरामजी जैन,
पो० रीठी (कटनी-म. प्र.)

'जैनमित्र' जो जगमें ना आवत

तो समाज क्षेत्रमहिं प्रेम पाठ,
कौन सुधीर पढ़ावत ॥ जैन० ॥
नीर छीर विवेकी जन अज्ञानीकूं,
पथ कैसे लख पावत।
पुराणखण्डी अरु उग्र सुधारक,
दोऊ मिल कैसे गुण गावत ॥ जैन० ॥
घटना घटे जब होनी अनहोनी,
तुर्त हि ताहि छपावत।
अग्रलेखमें प्रेरित कर जनकूं,
निज कर्तव्य बतावत ॥ जैन० ॥
देशहित हेतु राजनीतिको,
धर्मसे मेल करावत।
धर्म विमुख नेतागणकूं,
नित फटकार लगावत ॥ जैन० ॥
युग धर्मको सन्देशवाहक है तू,
जन मन सुख पावत।
धन्य तेरे संचालक संरक्षक,
पत्रनमें सिरमोर कहावत ॥ जैन० ॥

प्रभुदयाल बैनाड़ा, आगरा।

जैनमित्रकी हीरक जयन्ती

ज्ञान गगनसे जैनमित्रने, किरणें बिखराई हैं भूपर।
उदित देखकर मनुज गा उठे गीत मनोहर जन्मदिवस पर॥

(१)

कलियोंने भी ली अंगड़ाई, मस्त पवनके झोंकाओंमें।
चमन खिल उठा जैनजगतका, जागृति-पथकी आशाओंमें॥
जैनमित्रका नवल सन्देशा, पग-पग पर वह याद दिलाता।
यह प्रतीक बन हीरकजयंती, जैन-जगतको प्यार जताता॥
आज दिखाने उतरे हो तुम, शांति-सुधाकी लहरें सुन्दर।
ज्ञान गगनसे जैनमित्रने किरणें बिखराई हैं भूपर॥

(२)

कितने कठिन परिश्रम सहकर, श्री तुमने सन्देश दिये हैं।
भूल सकेगा कौन मनुज जो, अमृतसे उपदेश दिये हैं॥
जैन धर्मकी ज्योति नई दी, हर प्राणोंमें बसकर तुमने।
तुम्हीसे आशाओंके अबतक, पूर्ण हुए हैं सारे सपने॥
हर अधरों पर गीत तुम्हारे, बनकर गूंजे हैं वह मनहर।
ज्ञान गगनसे जैनमित्रने, किरणें बिखराई हैं भूपर॥

(३)

श्री 'जैनमित्र' के सम्पादककी, कलम चली पर रुक न पाई।
है सौभाग्य दिखाकर था वह, ज्योति जली पर बुझ न पाई॥
जैन धर्मकी निधियां हैं सब, रत्नोंका विस्तार है... संभार।
जिसने पाया इस प्रकाशको, उसकी रेखा पार न आई॥
के अ ई अध्यात्मकी धारा, जग-अंचलसे, मनके ऊपर।
ज्ञान गगनसे जैनमित्रने किरणें बिखराई हैं भूपर॥

(४)

आज जैन जगती यह सारी, पुलकित लिए हुए है छाई।
यह इतिहास विगत वर्षोंका, दिखलायेगा साहित्य भाई॥
इसके जीवनसे क्या पाया, औ' प्रगति है साथ तुम्हारे।
कवि तेरी कुछ गाथा लिखकर, गाते हैं गुणगान तुम्हारे॥
जैनमित्र हो अखिल जगतमें, प्रगति करे यह पत्र निरंतर।
ज्ञान गगनसे जैनमित्रने किरणें बिखराई हैं भूपर॥

कांतिकुमार 'करुण'–खिमलासा।

मित्रोंका मित्र—'जैनमित्र'

[ले०—फूलचन्दसिंह जैन एम. ए., सी टी., शामली।

आजके युगमें किसीका मित्र बनना खतरेसे खाली नहीं है। मित्र बनना हरेक चाहता है और उसके लिए जीतोड़ प्रयत्न भी करता है; किन्तु जहांतक मेरा विचार है, वह स्वयं मित्र बनना नहीं जानता है। क्योंकि उसे मित्रताके महत्व तथा उसकी आवश्यकताका ज्ञान ही नहीं होता है। फलतः मित्र उसके मित्र न रहकर शत्रु बन जाते हैं। उन्हें जब कभी भी अवसर प्राप्त हो जाता है, तभी वे उसे घर दबाते हैं। अतः वह मित्रोंकी परिपाटीसे निराश होकर विश्वको विश्वासघाती, प्रपंचमयी, छद्मवेषी एवं निष्ठुर समझने लगता है। किन्तु जब हम जैनियोंके एकमात्र मित्र—"जैनमित्र" को मित्रताकी सच्ची कसौटी पर कसते हैं; तो वह बावन तोले पावरत्ती खरा उतरता है। वह भलीभांति मित्र बनना और बनाना जानता है। यह तथ्य इस बातसे स्वतः सिद्ध हो जाता है, कि इस वर्ष उसकी "हीरक जयन्ती" मनाई जा रही है।

गत २० वर्षोंसे तो "जैनमित्र" मेरा भी मित्र बना हुआ है। भले ही मैं स्वयं उसका आज तक ग्राहक न बन सका हूं; परन्तु हां! इस मध्य जिस जैन-संस्थासे भी मेरा सम्बन्ध एवं सम्पर्क रहा है; यातो वह वहां पर पहलेसे ही मंगाया जाता रहा हो अथवा मैंने पाठक, लेखक, संवाददाता आदि अनेकों रूपोंमें उसका अवलोकन किया है, और इसे सदैव ही अपनेमें पूर्ण और निरन्तर उपयोगी एवं कल्याणप्रद पाया है।

जैन-समाजमें अनेक पत्र-पत्रिकायें निकलती रहती हैं और निकल भी रही हैं। उनमेंसे प्रत्येकका निजी हित है; आत्मकल्याण, समाजकल्याण तो बादकी बात। यही प्रमुख कारण है कि वे लोकप्रिय न हो पाये और अपनी अल्पायुमें ही या तो विश्वसे विमुख हो गये, अथवा आज भी अपने दिन गिन रहे हैं।

निःसंकोच रूपसे यह कहा जा सकता है, कि "जैनमित्र" चाहे स्व० गोपालदासजी बरैया, चाहे पं० नाथूरामजी 'प्रेमी', चाहे स्व० ब्र० शीतलप्रसादजी, चाहे श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया और चाहे श्री ज्ञानचन्दजी 'स्वतन्त्र' के करकमलों द्वारा सम्पादित हुआ है; वह आजकल निरन्तर नियमित रूपसे जैन-समाजमें प्रचलित जादूटोने, झाड़-फूँक, मिथ्या-मूर्ति-उपासना, बाल-विवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल-विवाह, मृत्यु-भोज, आतिशबाजी, बाग-विहार आदि अनेक अंधविश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं आदिका निवारणकर आपत्तिकालमें भी अपनी नियमितताको अपनाते हुए दस्सा पूजा-समर्थन, शिक्षण-संस्थाओंकी स्थापना, शास्त्रोक्त अन्तर्जातीय-विवाहका प्रचारकर समाज व धर्ममें नव-जागृति, नवचेतना, एवं नव-स्फूर्तिका संचार करता रहा है। इतना ही नहीं, 'जैनमित्र' सदैव ही समाजको विश्वके कोने-कोनेके प्रमुख समाचारोंसे अवगत कराता रहा है और अनेकानेक पाठकों, लेखकों एवं कवियोंको जन्म देकर जैन-साहित्य व समाजकी अभिवृद्धि करनेमें अपनी ओरसे कुछ कसर नहीं छोड़ रहा है।

केवल 'जैनमित्र' ही जैनाकाश पर ऐसा जगमगाता नक्षत्र है; जिसने कि प्रतिवर्ष अपने ग्राहकोंके घर-घरमें नवीनसे नवीन अमूल्य शास्त्र एवं ग्रंथको उपहार स्वरूप प्रदानकर, पुस्तकालयोंकी स्थापना कराकर नव ज्योति जगमगाई है। इसके लिए यह सदैव चिरस्मरणीय रहेगा।

अतः 'जैनमित्र' को जैन समाजका अग्रदूत, समाज-सेवक, सन्देश वाहक कहना अमंगल न होगा। निःसंदेह "जैनमित्र" सच्ची मित्रताका जीता-जागता प्रतीक एवं द्योतक है, और मित्रोंका मित्र है।

जैनमित्र बनाम साहित्यकार

लेखक—सागरमल वैद्य 'सागर' (अतिरिक्त सहायक कृषि संचालक—विदिशा, म० प्र०)

मैं आज बहुत प्रसन्न हूँ कि जैनमित्रके हीरक जयंती अंकके लिये लेख लिख रहा हूँ। मित्रने ६० वर्ष पूरे करलिये और मैंने ३०, यह अंक सचमुच संग्रहके योग्य होगा। मुझे भी कुछ जाने पहचाने साहित्यिक मित्रोंकी रचनाएँ पढ़ने मिलेंगी। जिनमें कुछ ऐसे होंगे जिनसे प्रत्यक्ष मिलन है—कुछसे परोक्ष—किसीसे पत्र व्यवहार मात्र! आज मुझे बहुत ही विद्वत्ता पूर्ण लेख लिखना चाहिये था क्योंकि यह अंक वर्षों संग्रहमें रहेगा लेकिन मैं बिल्कुल पिपीपिटी भाषामें लिखने बैठा हूँ और कईबार सोचा कि क्या शीर्षक रखूं? समझमें नहीं आया तब भाई श्री स्वतन्त्रजीको पत्र लिख कर पूछना पड़ा कि किस विषयपर लेख लखूं? फिर भी बहुत समझ बूझके बादमें इस निर्णयपर पहुँचा कि मैं खुदके जीवन पर ही प्रकाश डालूँ। इस लिये मेरा शीर्षक बेढँगासा बन पड़ा है, लेकिन सच मानिये शीर्षक अपनी जगह सही है।

'जैनमित्र बनाम साहित्यकार' उतनी ही सही पंक्ती है जितनी 'सूरज पूर्वसे निकलता है। गत एक दशाब्दीके विशेषांक और बहुतेरे साधारण अंक मेरे पास सुरक्षित हैं और वे इस समय मेरे सामने हैं। मेरे शीर्षकसे शायद आप पाठक सहमत नहीं होंगे लेकिन यदि आप जैनमित्रके नियमित पाठक हैं तो यह भ्रम न रहेगा। जैनमित्र एक साहित्यिक सांचा है जहांसे साहित्यकार ढलते हैं—कवि, लेखक, कहानीकार आदि इस सांचेमें ढले हुये मेरे कई मित्र हैं और मैं खुद भी।

मेरी रचनाओंके संग्रहमें १८ साल पुरानी एक कविता भी अभी सुरक्षित है उस जमानेके लिखे हुये लेख, कविताएँ और कहानियां आज मुझे प्रेरणा देती हैं। आरंभिक जीवनके रचनाओंका प्रकाशन केवल स्कूलके सालाना मेगजीन तक सीमित था। आजसे १० वर्ष पूर्व पं० श्री दयाचन्दजी उजैनवालोंने; मेरे लेख देखे वे उस समय हेमराज सलालाल जैन बोर्डिंग हाऊसके सुप्रिंटेन्डेन्ट थे और धर्मके अध्यापक, लेख प्राय: सभी सामाजिक थे। अत: उन्होंने उनके प्रकाशनकी सलाह दी और उन्हींकी प्रेरणासे पहला लेख जैनमित्रमें प्रकाशनके हेतु भेजा गया।

मेरा सर्वप्रथम लेख जैनमित्र अंक ४५ दिनांक २९ सितम्बर १९४९ को प्रकाशित हुआ शीर्षक था—"पर्दा और नारी" उसी समय एक अन्य लेख पं०जीने भेजा जो बहुत बड़ा था लेकिन जैनमित्रने बिना काट छांटके प्रकाशित कर दिया यह लेख ८ दिसम्बर ४९को प्रकाशित हुआ। ठीक १० वर्ष पूर्व मेरे लेख जैनमित्रमें छपना शुरू हुये। लिखनेका चाव बढ़ गया और सन् ५२ में सबसे अधिक लेख व कविताएं जैनमित्रमें मेरी प्रकाशित हुई।

आज भले ही वे रचनाएँ अच्छी न लगें। किन्तु वे उस समय प्रकाशित हुई जिसका परिणाम यह हुआ कि

मैं साधारणसे साक्षर बन गया। मेरे जीवनकी सर्व प्रथम कविता भी जैनमित्रमें ही प्रकाशित हुई। शीर्षक था "पर्यूषण-पर्वराज" शायद आज मैं उसे फाड़कर फेंक दूं।

जैन मित्रने मेरी बीसों कविताएँ ऐसी प्रकाशित कीं जिनमें छन्द भंगका दोष था, मात्राओंका ज्ञान भी नहीं था न लय थी लेकिन आज सोचता हूँ अगर जैन मित्र वह कविताएँ प्रकाशित न करता तो शायद आज मैं मध्य प्रदेशके कवियोंकी गिनतीमें नहीं आ सकता था। यदि जैनमित्रने वे लेख न छापे होते तो विश्वास कीजिये मैं साधारणसा लेखक भी नहीं बन पाता जो आज लेखकसे आगे बढ़कर एक सफल आलोचक बना जा रहा हूँ।

जनवरी १९५२ में मैंने एक खण्ड काव्य रणविदा नामसे लिखा था और इसपर भूमिका लिखवाने आदरणीय डॉ० शिवमंगलसिंहजी सुमनके पास पहुँचा। वे उस समय माधव कालेज उज्जैनके हिंदी विभागके प्रधान थे आजकल नेपालमें हैं। उस पूरे काव्यको देखकर सुमनजीने कहा सागर तुम सचमुचमें कवि बन जाओगे अगर मेरी सलाह मानो तो! मैंने तुरन्त उत्तर दिया जी आज्ञा कीजिये। कहने लगे इसे फाड़कर फेंक दो। मैंने वहींके कमरेमें उसे फाड़ डाला, महिनोंसे सुरक्षित लिख रहा था फाड़ते देर न लगी, फिर बोले इस कचरेको बाहर फेंक दो। वह भी फेंक आया, तब कहने लगे अब बैठकर इसी खण्डकाव्यको लिखो। मैं अजीब उलझनमें पड़ गया फिर भी लिखने बैठा केवल १५० पंक्तियां याद आईं लिखकर सामने रख दीं तब सुमनजीने कहा सागर इसे कोई प्रकाशित नहीं करेगा खैर तुम इसको किसी पत्रमें प्रकाशित करा दे फिर मैं भूमिका लिख दूँगा तब पुस्तकाकार निकलवा लेना।

मेरे सामने प्रश्न था इतनी बड़ी कविता कौन छापेगा उसे अप्रैल ५२ में जैनमित्रमें प्रकाशनके लिये भेज दी और सोचा रद्दीके टोकरेमें डाल दी गई होगी, पर ८ मई १९५२ को जैनमित्रमें वही छन्दभंग खण्ड काव्यकी १५० पंक्तियां सम्पादककी टिप्पणी सहित प्रकाशित हुईं। जिस कविताका मित्रके सम्पादकने फुटनोट देकर उसका स्वागत किया, कुछ दिनों बाद वही कविता अपने बचपनको गुजरकर यौवनमें आई, जिसने कई कवि सम्मेलनोंमें मेरे कितने ही साहित्यिक मित्र बना दिये।

मैं क्या मेरे जैसे कितने ही बन्धु आज भी जैनमित्रके कर्जदार हैं जो अपना कर्जा कभी नहीं चुका सकेंगे। जिस जैनमित्रने हमें एक सफल लेखक, कवि, कहानीकार सब कुछ बना दिया। आज मेरे लेख, कविताएँ और कहानियोंने कितने ही दैनिक, साप्ताहिक, मासिक और वार्षिक विशेषांकोंमें स्थान बना लिया है। अब जातीय पत्रोंसे हटकर दूसरे जगतके पत्रोंमें आ गया—लेकिन जैनमित्रके इस अहसानको कभी नहीं भुला सकूँगा जिसने मुझे इस योग्य बनाया है।

इन दस वर्षोंमें मैंने बहुत लिखा। अगर गिनती करूँ तो दोसौ रचनाओंसे ऊपरका प्रकाशन होगा लेकिन आधेके हकदार जैनमित्र और भाई श्री स्वतंत्रजी हैं। जिन्हें जीवनभर नहीं भूल सकूँगा। १० वर्षके दिगम्बर जैनके विशेषांक मेरे सामने हैं और प्रकाशित रचनाओंके पत्र मुझसे उठ नहीं सकेंगे किंतु इस सबका श्रेय भी भाई श्री स्वतंत्रजीको है। फिर भी मैं सोचता हूँ कि अभी मेरी कलम निखार पर नहीं आपाई है अभी कुछ वर्ष और जैनमित्रमें लेख लिखना है, कविताओंका प्रकाशन कराना है।

जयन्तीकी सबसे बड़ी खुशी अपनी जब सोचीमें

मनायी गई थी, उस समय मैं ओसवाल समाजका सहायक सम्पादक था। मैंने एक लेख "जैनधर्मकी विश्वको देन" जैनमित्रमें भेजा जिसकी प्रशंसा कापडियाजीने दूसरे अंकमें स्वयं की थी इस लेखको कितने ही अन्य पत्रोंने उद्धृत किया था। कलकत्तामें यही लेख छपवाकर बटवाया गया था, यह श्रेय मुझे नहीं है किन्तु मैं तो मात्र कागज पर स्याही फेंकनेवाला हूं उसे सही रूपमें जैनमित्र और स्वतंत्रजी देते आये हैं।

आचार्य प्रवर आनन्द भदंत कौशल्यायनजीने मुझसे पूछा यह लेख तुमने लिखा है ! मैं उत्तरमें जी कहकर शांत हो गया। उन्होंने आशीर्वाद देते हुये कहा कलममें संयम लाओ, वरन कीचड़में पत्थर फेंकनेसे अपने ऊपर भी छींटे आयेंगे उस समयमें उनका आशय न समझ सका था पर आज उसे जीवनमें उतारा है, मैंने एक प्रति जैनमित्रकी उन्हें दी थी।

इसी तरह मेरी सर्व प्रथम कहानी जैनमित्रमें प्रकाशित हुई आज इसी वर्ष कहानी क्षेत्रमें मुझे पुरस्कार प्राप्त हुआ है। कितने ही कवि इस समय ऐसे हैं जिन्हें केवल जैनमित्रने ही बनाया है।

आजसे १० वर्ष पूर्व जैनमित्रमें प्रकाशित लेख मेरे सामने हैं और अब हीरक जयंती अंकके लिये लेख लिख रहा हूं। यह मुझे गर्वकी बात है। मित्रका यह मेरे पास ११ वा विशेषांक होगा जिसे मैं संग्रह बाके साहित्यमें रखूंगा। अब आप जान गये होंगे कि मेरा शीर्षक सही है—जैनमित्र बनाम साहित्यकार।

"जैनमित्र" सारे समाजका मित्र क्यों है ?

[ले०—प० केवलचन्द्र जैन अध्यापक, केवलारी।]

"यथा नामो तथा गुणा"। इस पत्रका जैसा नाम है, वैसा ही इसका गुण भी है। किसीने सच ही कहा है—जो विपत्तिके समय काम आवे, वही सच्चा मित्र है। यह उक्ति हमारे इस परम प्रिय "मित्र" पर पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है। हमारी समाजमें प्राचीनकालसे ही अनेक कुरीतियोंका, जैसे—बाल, वृद्ध, अनमेल विवाह, मृत्युभोज, आदि—प्रचलन था। परन्तु हमारे इस मित्ररूपी सूर्यने समाजरूपी नभमें आच्छादित सामाजिक प्राचीन कुरीतियोंरूपी काले मेघोंको छिन्न भिन्न कर दिया और समाजरूपी पथिकको शाश्वत सुखरूपी नगरमें पहुंचनेके लिए उज्ज्वल प्रशस्त मार्गका दर्शन कराया। अंधकारमें पड़े हुए कवियों और लेखकोंकी सुप्त लेखनी व मेधा-शक्तिको जागृत किया।

हमारे मित्रके परम सहायक परम श्रद्धेय श्री कापड़ियाजी व धर्मनिष्ठ, साहित्यप्रेमी श्री पं. स्वतन्त्रजीके सत्प्रयत्नों एवं कर्तव्यनिष्ठाके कारण "मित्र" आज अपनी चरमोत्कर्ष सीमाको पहुंच गया है। मैं परम सौम्य, दयालु श्री १००८ भगवान महावीरसे करबद्ध प्रार्थना करता हूं कि हमारे मित्र "जैनमित्र" के सहयोगीव एवं सहयोगी श्रद्धेय श्री कापड़ियाजी व श्री पं० स्वतन्त्रजीको भी "यावच्चन्द्र दिवाकरौ" अमरत्व पद प्रदान करें !

जैनमित्रकी चतुर्मुखी सेवायें

ले०–पं० मनोहरलाल शास्त्री
कुरवाई।

पाठकवृन्द। हर्ष ही नहीं किन्तु असीम हर्ष है कि जैन समाजका प्रमुख हितैषी "जैनमित्र" पत्र अविरल सतत् सेवा करता हुआ आज ६० वर्ष जैसे लम्बे समयको समाप्त कर चुका है, जिसके उपलक्षमें हमारे श्रीमानों और धीमानोंने बड़े परामर्शके साथ "मित्र" की ६० वें वर्षकी हीरक जयन्ती (डायमंड जुबली) मनाकर विशेषांक जैन समाजके समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है, जो कि वास्तविकमें ६० वर्षके जैन इतिहासका द्योतक होगा जिसकी मुद्रित प्रति अनेक विद्वानोंके ऐतिहासिक लेखों श्रद्धांजलियों और चित्रोंसे चित्रित सुन्दर सुसज्जित आपके हाथोंमें है। मित्र! जैनमित्र' का जन्म (प्रारंभ काल) मेरे आयुसे पूर्वका है। अतः इसका आद्योपान्त विशद विवरण (उल्लेख) शक्तिसे बाहर है तथापि "मित्र" का प्रेम और श्रद्धा कुछ न कुछ लिखनेको बाध्य करती है अतएव इस विषयमें जो कुछ भी संक्षेपमें लिखा जायगा उसे केवल सिंहावलोकन मात्र समझें। "मित्र" ने जैन समाजकी क्या२ सेवायें की हैं इसका विस्तृत विवरण ६० वर्षसे पूर्व परिचित विद्वानोंके लेखोंसे ही भलीभांति ज्ञात कर सकेंगे। जहां तक मालूम है "जैनमित्र" का जन्म (प्रारंभकाल) वीर सं० २४२५ वि० सं० १९५६ में श्रीमान् विद्वद्वर्य स्व० पं० गोपालदासजी बरैयाके समक्ष बम्बईमें हुआ था वे प्रथम ७ वर्ष तक मासिक पत्र रहा फिर कुछ जागृतिके बाद करीब १० वर्षतक पाक्षिक रहा। पं. जी सम्पादक रहे, पं०जी अपने समयके एक प्रतिभाशाली स्वतन्त्र निर्भीक दूर दर्शी स्पष्ट विद्वान थे समयानुसार समाजोपयोगी धार्मिक लेखों और समाचारों द्वारा "जैनमित्र" की वृद्धि होने लगी अतः समय पाकर "मित्र" साप्ताहिक पत्र हो गया जो बराबर अभी तक धाराप्रवाह रूपसे सेवा करता हुआ उत्तरोत्तर उन्नति पथ पर चलाता रहा है। यदि प्रकरणवश पंडितजीके जीवनपर प्रकाश डाला जाय तो लेख बढ़ जानेका भय है। पं०जीने अपने अल्प जीवनमें जैनधर्मकी भारी सेवा की, अनेक विद्वानोंको तैयार कर धर्मकी प्रभावना बढ़ाई जो आपके प्रत्यक्ष है।

क्योंकि 'न धर्मो धार्मिकैः विना" आपके बाद श्रीमान् स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीने जितनी लगनसे लगाकर ३० वर्ष तक "जैनमित्र" के सम्पादकका कार्य किया आपके विषयमें जितना लिखा जाय उतना ही कम है आपकी वक्तृत्व और लेखक कला अपूर्व थी, रेलगाड़ीमें सफर करते हुए भी लेखनी बराबर काम करती रहती थी समयके सदुपयोगका बड़ा ध्यान रखते थे।

"जैनमित्र" में आपकी सतत समयोचित लेखमालाएं प्रकाशित होती रहती थी, जहां२ पर आप चतुर्मास करते थे ग्रन्थोंकी टीकाएं करना सार्वजनिक हिन्दी अंग्रेजीमें व्याख्यानों द्वारा धार्मिक प्रचार करना ही एक अद्वितीय लगन थी, ज्ञान प्रचारार्थ अनेक संस्थाओंको जन्म दिया (उद्घाटन कराया) "मित्र" की

ग्राहक संख्या बढ़ाते रहे, जैन समाजमें फैली हुई अनेक कुरीतियां जिनसे पतन अवश्यंभावी था, जैसे-बाल विवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, मृत्यु भोज आदिका घोर विरोध किया और समझाया गया। धीरे२ कुरीतियोंको हटाया गया जिसका लाभ प्रत्यक्ष है अधिक कहांतक लिखा जाय ! एवं उमय विद्वानोंने "जैनमित्र" के सम्पादकत्वमें धर्म और जैन समाजकी अभूतपूर्व सेवाएं की हैं वे चिर स्मरणीय हैं साथ ही उनके हम चिर ऋणी भी हैं। अतः-

"कीर्तिर्यस्य स: जीवति" श्री ब्र० जीके स्वर्गवासके बाद श्रीमान वयोवृद्ध, अनुभवी, कार्यकुशल, मूलचन्दजी कापड़िया सूरतने "जैनमित्र" का कार्यभार (सम्पादकत्व) अपने हाथमें लिया तबसे-"मित्र" की अधिक वृद्धि हुई। प्रत्येक प्रांतोंमें ग्राहक संख्या बढ़ गई कुछ समय बाद कार्यमें सहयोग देनेके लिए श्रीयुक्त प० परमेष्ठी-दासजी न्यायतीर्थको बुला किया पं० जीने खूब उत्साह और परिश्रमसे कार्य करते हुए कापड़ियाजीको पूर्ण सहयोग दिया।

खेदके साथ लिखना पड़ता है कि इसी बीचमेंही कापड़ियाजीको अकस्मात् कर्मके उदयसे स्त्री और पुत्र जैसे महान इष्ट वियोग जन्य आपत्तियोंका सामना करना पड़ा फिर भी आप अनित्य और अशरण रूप संसारके स्वरूपको जान (अनुभव) कर अपने धार्मिक कर्तव्यसे विचलित नहीं हुए और बराबर "जैनमित्र" को यथा-समय प्रकाशित करते रहे कभी भी विच्छेद (विश्राम) का समय नहीं आया यह सब कापड़ियाजीके महान धैर्य और परिश्रमका श्रेय है। आप वृद्धावस्थामें बड़े उत्साही हैं। समय २ पर हर जगह धार्मिक जलसों सभाओंमें जाकर भाग लेते रहते हैं। कापडियाजीकी कार्यकुशलता और चातुर्यता अत्यन्त प्रशंसनीय है। आपका जीवन विद्वानोंके समागममें रहता चला आ रहा है। इस प्रकार १५ वर्ष तक पं० परमेष्ठीदासजी न्या० सूरतमें आपके पास रहे। आपके बाद समय पाकर हमारे उत्साही प्रिय मित्र श्रीयुत् पं० ज्ञानचन्द्रजी स्वतन्त्रने सूरतमें आकर "जैनमित्र" कार्यालयमें कार्य प्रारंभ कर दिया। आपके सहयोग से "मित्र" की और भी दिनोंदिन अधिक वृद्धि होने लगी। आपकी लेखनकला (शैली) को पढ़कर "मित्र" के पाठकगण सहसा मुग्ध होकर प्रशंसाका तांता लगा देते हैं। आपके लेख समय २ पर समाज सुधार और बहुत ही शिक्षाप्रद प्रकाशित होते रहते हैं परन्तु खेद है लोग केवल पढ़ ही लेते हैं उपयोगमें अंशमात्र भी नहीं लाते हैं। इसलिए ही तो हम दुखी हैं पं. स्वतन्त्रजी बड़े उत्साही सरल स्वभावी पुरुष हैं आपको भी कार्य करते हुए १५ वर्ष हो चुके हैं। "मित्र" के विषय में कहांतक लिखा जाय एवं "जैनमित्र" अपने कुशल विद्वानों द्वारा कार्य करता हुआ ६० वर्ष समाप्त कर चुका है। जैन समाजमें अनेक समाचार पत्र प्रकाशित हुए परन्तु प्राय: वे असमयमें ही विलीन हो गये परन्तु "जैनमित्र" ही एक ऐसा वास्तविक "जैनमित्र" है जो यथा समय पर प्रकाशित होता चला आ रहा है।

"मित्र" की सेवायें समाजके सामने हैं। इसमें पक्षपात, साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, आदि दोष कोसों दूर रहे। जिसके फलस्वरूप यह "जैनमित्र" ६० वर्ष समाप्त कर आपके समक्ष है। भला फिर ऐसे पत्रकी "हीरक जयंती" बड़े भारी समारोह उत्सवके साथ क्यों न मनाई जाय ? अब हम अपने लेखको संकोच करते हुए अन्तमें 'जैनमित्र' के आद्योपान्त विद्वान सम्पादकों और उनके सहयोगी विद्वानों जिन्होंने अपना जीवन "जैनमित्र" की उन्नतिमें लगाकर समाजमें (का) मुख उज्वल किया है, उनके हम महान आभारी हैं। अन्तमें वीर प्रभुसे प्रार्थना है कि ये चिरायु रहकर जैन धर्म और समाजसेवामें सदा (सतत) प्रयत्नशील बने रहें, यही हमारी "जैनमित्र" के प्रति अन्तिम प्रेमपूर्वक हार्दिक श्रद्धांजली है।

जैन समाजका सच्चा मित्र

[ले०—लखमीप्रसाद जैन, मन्त्री, पब्लिक
जैन लायब्रेरी—रामपुर ।]

जैनमित्र जैन समाजका सबसे पुराना पत्र है इसकी सबसे बड़ी विशेषता इसका नियमित प्रकाशन है। यह वास्तवमें मित्र है क्योंकि यह किसीको प्रतीक्षा अन्य कष्ट नहीं देता। अपने नियमित समय पर अपने मित्र पाठकोंके हाथमें पहुंच जाता है। शायद ही कोई दूसरा जैन या जैनेतर पत्र नियमिततामें इसकी बराबरी कर सके। जैनमित्रकी एक बड़ी विशेषता है उसका समाचार संकलन, जैनमित्र पढ़ कर समस्त जैन समाजकी प्रवृत्तियोंका सब चित्र सामने आजाता है। फिर जैनमित्र सदा दलबन्दीकी दलदलसे दूर अपनी स्वतन्त्र सत्ता रखता है। इसका अपना स्थान है और इसकी अपनी निराली शान है। श्री पं० गोपालदासजी बरैया, जैन धर्मभूषण श्री० ब्र० शीतलप्रसादजी जैसे विद्वानोंकी अमर लेखनीका क्रीड़ास्थल यह जैनमित्र श्री० मूलचन्द किसनदास कापड़ियाकी जैन समाजको एक अनुपम देन है। और प्रसन्नताकी बात है कि स्वतन्त्रजी जैसे सुलेखक विद्वानकी अमूल्य सेवायें इसे प्राप्त हैं। श्री० पं० परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थने भी जैनमित्रकी वर्षों तक अथक व सराहनीय सेवा की है। सच तो यह है कि जैनमित्र जैन समाजका सच्चा मित्र है इसकी हीरक जयन्तीके अवसर पर मैं हृदयसे इसका अभिनन्दन करता हूँ कि यह मित्र चिरायु हो और सदा समाजकी सेवामें इसी तरह कृत संकल्प व दृढ़ संकल्प बना रहे जैसा अब तक अपने ६० वर्षकी लम्बी आयुमें यह बना रहा है।

प्रेरणाका स्त्रोत्र–'जैनमित्र'

आज जब जैन समाजमें अशान्तिका वातावरण फैला हुआ है, जैन समाज विभिन्न वर्गों एवं सम्प्रदायोंमें विभाजित है, विद्वानों एवं पत्रकारोंमें सिद्धान्तोंके कारण परस्पर मत भेद चला रहा है। समाजमें प्राचीन रूढ़िवादी, मृत्युभोज, दहेज प्रथा आदि प्रथाएँ विशिष्ट रूपसे प्रचलित हैं जिसके कारण समाज अवनतिके गर्तमें गिरता जा रहा है।

तब ऐसी शोचनीय एवं गम्भीर परिस्थितिमें "जैनमित्र" ने जैनधर्मके सिद्धान्तको अपना कर अपनी तटस्थ एवं निष्पक्ष भावनाका आश्रय ग्रहण कर जैन समाजमें अपना एक आदर पूर्ण स्थान बना दिया है।

जैनमित्रके ६० वर्षके इतिहासका अवलोकन करने पर स्पष्ट विदित होता है कि सर्व प्रथम यह मासिक रूपमें बम्बईसे प्रकाशित होता था जिसका कि सम्पादनका कार्य श्रीमान् पं० गोपालदासजी बरैया करते थे। समय पाकर सात वर्षके बाद यह पाक्षिक हो गया। तदन्तर कुछ समय पश्चात् इसका कार्य समाजसुधारक, कर्मठ कार्यकर्ता जैनधर्मके प्रकाण्ड विद्वान श्रीमान् ब्र० शीतलप्रसादजीने अपने हाथोंमें लिया। आपने निःस्वार्थ भावनासे सभी रूपके साथ इसका कार्य सुचारुरूपसे किया। १६ वर्ष निर्विघ्नतापूर्वक व्यतीत करनेके पश्चात् इसके प्रकाशनका कार्य सूरतमें होने लगा।

समयानुकूल होनेके कारण यह पत्र पाक्षिकसे

प्रकाशित कर दिया गया। तभीसे श्रीमान् मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया, समयाभाव होते हुये भी निष्पक्ष एवं निस्वार्थ भावनासे इसके सम्पादन एवं प्रकाशनका कार्य सुचारु रूपसे कर रहे हैं। तभीसे यह पत्र अन्य पत्रोंकी अपेक्षा निरन्तर प्रगति कर रहा है।

यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि समाजमें संगठन एवं भ्रातृत्व भावनाकी जागृति करके बिना विरोधके जैनधर्मका प्रचार मित्रने किया है। जैनमित्र पार्टीबाजी, एवं वादविवादसे सदैव कोसों दूर रहा है, इसी कारण इसकी निष्पक्ष नीतिसे सभी प्रभावित हैं। तथा इसने अपनी रचनाओं द्वारा सदैव प्राचीन अन्धविश्वास, मृत्युभोज, दहेज प्रथा आदि समाज घातक कुरीतियोंका बहिष्कार करनेका प्रयास किया है। एवं सत्य निष्ठासे पराङ्मुख जनताको जैन सिद्धांतोंका सच्चा ज्ञान कराया है। इसी कारण जैनमित्र जैनियोंका ही मित्र नहीं अपितु अन्य धर्मावलंबियोंका भी 'मित्र' बन गया है।

यह सत्य है कि "विपत्तिमें ही सफलता निहित है" अतः आर्थिक अभावके कारण और अनेक विघ्न बाधाओंको सहन करके पश्चात् भी यह अपने उद्देश्यमें सफल फलीभूत हुआ है। जैनमित्रमें विभिन्न विद्वानों, लेखकों एवं कवियोंने अपनी सर्वतोमुखी वाणीसे लोगोंको प्रभावित किया है। साथ ही मैं जैनमित्रके सम्पादक कापड़ियाजी एवं श्री स्वतन्त्रजीकी इन प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते जिन्होने अपनी रचनाओंसे जैन समाजको सदैव जागृत किया है। इस प्रकार अपनी विशेषताओं के कारण जैनमित्र सबके लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया है। यदि अन्य पत्रके सम्पादकभी इसका अनुकरण करें तो वे भी अपने उद्देश्यमें सफल फलीभूत हो सकते हैं। अन्तमें जैनमित्रकी सफलता चाहता हुआ समाज से निवेदन करता हूँ कि इसे आर्थिक सहयोग देकर अधिक सफल बनानेका प्रयास करें।

राजमल जैन गोधा–अलीगढ़ (टोंक)

धन्य 'जैनमित्र'

[र० – पं० मोतीलाल जैन मार्तंड – ऋषभदेव,]

'मित्र' तुम जिन धर्मके,
परचारमें संलग्न हो।
करते प्रशंसा हम तुम्हारी,
ज्ञान–गुणमें मग्न हो॥
उत्साह देते पाठकोंको,
धर्मके परचारमें।
काव्य–धारामें बहाते,
धर्मकी मझधारमें॥

सन्देश देते विश्वका,
क्या हो रहा इस कालमें।
जाति–सुधारोंमें सदा,
आवाज देते चालमें॥
राष्ट्रमें जिन धर्मका,
परचार करते हो सदा।
करते बुराई कुप्रथाकी,
तुम नहीं छिपते कदा॥
'मार्तण्ड' प्रात:कालमें,
और मित्र तुम गुरुवारको।
आनन्द देते हो सदा ही,
'मित्र' तुम संसारको॥
कितने ही रचते काव्यको,
और जगमगाते हो सभी।
सो बार तुमको धन्य है,
गुणगान कितने हम किये?

'जैनमित्र' के प्रति मेरी श्रद्धांजलि।

'जैनमित्र' ने जैन जातिको, सत्य शिव जैनत्व दिया ॥
झूंठ कपटसे दूर रहा, नित सदा सत्यको अपनाया ।
साठ वर्षके दीर्घ कालमें, निज कर्तव्य न बिसराया ॥
सेवाओंसे विमुख थकित हो, कभी नहीं विश्राम लिया ॥जैन०॥
आगमके अनुकूल अग्रसर, पथपर अपने सदा रहा ।
विघ्न अनेकों आनेपर भी, एक ध्येयका नेह गहा ॥
वैर विरोधी गरल हलाहल, सरल स्वभावसे सफल पिया ।जैन०॥
मनमें पक्षापक्ष लक्ष्यका, हर्ष विषाद नहीं लाया ।
वाम पक्षियोंके प्रति भी, दया भाव ही दिखलाया ॥
सच्चे एक 'मित्रकी' भांति, सदा सभीको साथ दिया ॥जैन०॥
अनाचार अन्याय अनीतिका, भाव न जीवनमें लाया ।
न्याय नीतिके रत्न रविको, जैन गगनमें चमकाया ॥
सदाचार और सद् विचारका, सौख्य सजग प्रचार किया ।जैन०॥
तुम्हें समर्पित श्रद्धांजलि है, मेरी शत् शत् बार सखे ।
सदा सर्वदा बीच हमारे, तुमको भगवान अमर रखे ॥
सत् पथ सुखद सुझानेका ही, केवल तुमने प्रण लिया ।
"जैनमित्र" ने जैन जातिको, सत्य शिवं जैनत्व दिया ।जैन०॥
वर्ष इकसठमें हीरक जयन्ती, आज मनाना शुभ होवे ।
विद्या विनय विवेक बुद्धिका, बीज हमारे उर बोवे ॥
आलोकित हो उठे लोक कर, बाल बुद्धिका दिया दिया ।
'जैनमित्र' ने जैन जातिको, सत्य शिवं जैनत्व दिया ॥जैन०॥

—आर० पी० जैन "रत्न", पिरौंब ।

श्रद्धाञ्जलियां

पत्रका नाम यद्यपि एक विशेष संप्रदायको संबोधित करता है। किन्तु इसमें छपनेवाले कुछ अमूल्य लेखोंके

कारण मुझे तो यह "जनमित्र" प्रतीत होता है। लेखोंकी उपमा एवं उनसे मिलनेवाले हृदयस्पर्शी भाव-महान किन्तु संक्षिप्त इस पत्रकी विशेषता है। उसके लेख एक दीप ज्योतिसे हैं जो महानतम अंधकारमें भी एक लौसे जलती है। पत्रके छोटे तथा साप्ताहिक होते हुए भी इसके गत् ६० वर्षोंके अविरत प्रयत्नसे समाजका जो उत्थान हुआ है वह अवर्णनीय है। कोई भी ऐसा क्षेत्र इस पत्रने अपने लेखोंसे अछूता नहीं छोड़ा है।

समाजकी बुराईयों पर करारी आलोचना तथा अच्छाईओंकी प्रशंसा यही इसका उद्देश्य रहा है जो इसके प्रत्येक लेखसे टपकता है। स्वधर्मकी रक्षा करते हुए भी दूसरे धर्मपर आक्षेप इस पत्रने कभी नहीं किया।

यह पत्र न केवल जैन समाजका ही वरन् हमारे सम्पूर्ण समाजोंका प्रतिनिधित्व करता है। जैनमित्रका अंकुर आजसे ६० वर्ष पूर्व फूटा था जिसे इस वसुमण्डलमें पहिले पहल कुछ थपेड़े भी खाने पड़े। किन्तु वह अपने गुणोंके कारण बढ़ता ही गया; टहनियां फूटीं और अब वह विशालतम वृक्षके रूपमें हमारे समक्ष प्रस्तुत है जिसके फल अब समाजका हर व्यक्ति चखने लगा है। मासिक पाक्षिकसे साप्ताहिक होना इसके प्रचारका द्योतक है; इसीलिये मान्यताका प्रतीक है एवं आदर्शवादिताका चिह्न है। इसमें प्रकाशित लेखोंने, समाजको जो प्रशस्त मार्ग दिखाया जो मार्ग अनेक कुरीतियां, अन्धविश्वास, वृद्धविवाह, बालविवाह आदिसे पूर्णतया आच्छादित था, उन सबोंको हटा दिया।

इस पत्रने नवउदित लेखकों, कवियोंकी रचनायें छाप उन्हें उत्साहित किया; साहित्यक चेतना उनके हृदयों में पैदा की एवं उन्हें कुशल लेखकोंके रूपमें ढाल दिया न जाने कितने ही दान इस पत्र में प्रकाशित हो चुके हैं जो दानियों को दान देने के निरन्तर उत्साहित करते रहते हैं अतएव इसी पत्रके कारण उन संस्थाओंका भला हुआ जिन्हे दान प्राप्त हुआ तथा वे आज अच्छी तरह चल रही हैं।

यह पत्र चूंकि सभी को सत्य मार्गकी ओर अग्रसर करते रहा है। अतएव सबकी सद् भावनायें एवं शुभ इच्छायें सदैव ही इसके साथ हैं जो इसकी उज्ज्वल, देदीप्यमान कीर्तिमें सहाय हैं इस जन-जन से प्राप्त प्रसिद्धिका एकमेव कारण इसके अपने गुण लोगोंको आकर्षित करते हैं। जगहितकारी पत्रकी आखिर यही तो विशेषता है॥

इस पत्रको निरन्तर उन्नतिके लिए मेरी सदैव शुभ कामनाएं समर्पित हैं।

रतनचन्द फूलचन्द जैन-ललमातीन।

लोकप्रिय आदर्श जैनमित्र

[ले०—पं० शिवसुखराय जैन शास्त्री, मन्त्री, जीवदया पालक समिति, मारोठ]

संसारमें जितने भी राष्ट्र हैं! वे सभी अपनी २ चहुँमुखी उन्नति धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक देखना चाहते हैं और उसके प्रचार एवं प्रसारके लिये उनके यहां अखबार (समाचारपत्र) नामकी अनेक संस्थायें है वे इन संस्थाओंसे अच्छा या बुरा जैसा भी प्रचार करना चाहें कर रहे हैं और भविष्यमें करते रहेंगे।

जिन समाचारपत्रोंने जिस राष्ट्रका सच्चा पथ प्रदर्शन किया है वे ही वास्तवमें फले एवं फूले हैं। और वे ही सदैव जीवित रहेंगे जिन्होंने सच्ची सेवा देश, धर्म एवं समाजकी की है। बाकी जिन पत्रोंसे देशका वातावरण विषैला बना है, और जिससे धर्म एवं देशकी अवनति हुई है उनका कोई मूल्य आज संसारमें नहीं है।

वर्तमानमें जैन समाजमें कतिपय साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक पत्र निकल रहे हैं। और वे सभी अपनी २ शक्तिके अनुसार योग्यरीत्या कार्य संपादित कर रहे हैं।

उन पत्रोंमें (साप्ताहिक) जैनमित्र अपनी शान एवं लोकप्रियतामें विशेष प्रसिद्धि तथा महत्व रखता है। जिसका ज्वलंत प्रमाण उसकी हजारोंकी संख्यामें निकलनेवाली प्रतियां हैं। इसमें दो राय नहीं हो सकती है। प्रारंभसे ही पत्रका योग्यरीत्यानुसार संपादन एवं संचालन बराबर होता आ रहा है।

यह सुप्रसिद्ध जैनमित्र पत्र कार्तिक सुदी १ संवत् २४८६से अपने ६० वर्ष पूर्ण करके ६१ वें वर्षमें पदार्पण कर चुका है। और यह अपने ६० वर्षके सुयोग्यरीत्या कार्य करनेके हर्षोपलक्षमें अपनी हीरक जयन्ती मना रहा है यह जैन समाजके लिये बड़े गौरवकी बात है।

जैनमित्रने कब और कैसे तथा किस शुभ वेलामें अपना जन्म लिया, यह तो मैं नहीं बता सकता। क्योंकि उस समय मेरा जन्म भी नहीं हुआ था, हां! तीस पैंतीस वर्षोंसे तो मैं इसका बराबर अवलोकन कर रहा हूँ।

जिस पत्रको विद्वत्समाजके यशस्वी जैन सैद्धांतिक उद्भट विद्वान् पं० गोपालदासजी बरैया जैसे उच्च कोटिके महानकी अनुपम सेवायें उपलब्ध हो चुकी हैं। और जिन्होंने थोड़ेसे समयमें ही सिद्धांतरूपी गागरमें सागर भर दिया था! तथा सब प्रकारका हस्तावलम्बन देकर इसमें चार चांद लगा दिये थे, वह पत्र क्यों न पुष्पित एवं पल्लवित हो?

तदनंतर जैन समाजके प्रसिद्ध साहित्यसेवी श्री पं० नाथूरामजी प्रेमी जैसे विद्वान्का सहयोग मिला। आपने अपनी सुन्दर लेह लेखनी द्वारा अनेक लेख लिखकर जैन समाजका बड़ा भारी उपकार किया है।

स्वर्गीय श्री० ब्र० शीतलप्रसादजीने तो बहुत बड़ी सच्ची महान सेवा इस पत्रकी वर्षों तक करके हर प्रांतमें इसे चमका दिया था। आपके लेख बड़े महत्वपूर्ण एवं जाग्रति पैदा करनेवाले निकलते रहते थे जिससे ग्राहक संख्या पत्रकी दिनोंदिन बढ़ती गई, और नवजीवनका संचार हुआ।

स्वर्गीय श्री० ब्र० शीतलप्रसादजीके स्वर्गवासके अनन्तर सारा संपादनका भार जैन समाजके कर्मठ यशस्वी कर्मशील वयोवृद्ध श्री सेठ मूलचन्द किशनदासजी कापड़ियाके वरद् कन्धोंके ऊपर आया। आपने तभीसे बड़ी योग्यतासे इसका संचालन किया है। वृद्धावस्थामें भी आप नवयुवकों जैसा कार्य कर रहे हैं।

समय२ पर बड़े उत्तम लेखोंद्वारा इस पत्रने समाजका पथ प्रदर्शन करके बालविवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह आदि अनेक सामाजिक कुरीतियोंका खुले दिलसे विरोध किया है।

श्री० पं० परमेष्ठीदासजी न्यायतीर्थकी सेवायें भी इस पत्रके संचालनमें कम महत्वपूर्ण नहीं रही हैं। सुंदर लेखोंका चयन एवं प्रकाशनादि कार्य आपके सूरत रहनेके कार्यकालमें श्रेष्ठ रहा था। आपके लेखोंसे समाजको बहुत बल मिला है।

गत पन्द्रह वर्षोंसे श्री० कापड़ियाजीके सहायक सम्पादक श्री पं० ज्ञानचन्दजी स्वतंत्रभी बड़ी विद्वत्ता एवं समयकी प्रगतिको देखकर अपनी लेखनी चला रहे हैं। आपकी लेखनीमें बड़ा ओज एवं जादूकासा असर है। आप पत्रकी उन्नतिके लिये सदैव ध्यान रखकर कार्य कर रहे हैं और करते रहेंगे।

समाचार पत्रोंकी गतिविधि जैसी हुआ करती है उसका बड़ा भारी असर जनता पर पड़ता है। यह ध्रुव सत्य है।

आज समाजकी शक्ति छिन्नभिन्न हो रही थी इसलिये जैन समाजके प्रसिद्ध उद्योगपति दानवीर श्री० सेठ साहू शांतिप्रसादजी सा० तथा दानवीर सर सेठ श्री० भागचन्दजी सा० सोनीके अथक परिश्रमसे देहलीमें अभी तो भा० दि० जैन महासभा एवं परिषद्को एक सूत्रमें बांधनेकी योजना बनाई गई है, जो सफल होगी तो वह वास्तवमें जैन इतिहासके स्वर्णाक्षरोंमें अंकित की जायगी।

जैन समाजकी कतिपय सभाओंकी तरफसे अथवा स्वतंत्र रूपसे, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिकपत्र वर्तमानमें प्रकाशित हो रहे हैं मेरी समझसे इन सबोंका एकीकरण हो जाय तो यह चीज भी बड़े महत्वकी सिद्ध होगी सिर्फ समस्त जैन समाजकी तरफसे एक दैनिक पाक्षिक, साप्ताहिक तथा एक मासिक (कल्याण जैसा पत्र) पत्र, इस प्रकार सिर्फ चार पत्र ही निकाले जांय। और इन्हींके प्रकाशनमें सारी शक्ति समाजकी एकसूत्रमें बंधकर लगा देना चाहिये। तथा अथक परिश्रम करके हजारोंकी संख्यामें ही नहीं बल्कि लाखोंकी संख्यामें इन पत्रोंके ग्राहक बना देने चाहिये।

फिर आप देखें कि संगठित करके पत्रों द्वारा जैनधर्म और जैनसमाजकी कितनी उन्नति होती है। तथा आज जो जैनधर्मका खद्योतवत् प्रकाश हो रहा है वह थोड़े दिनोंके बाद सूर्यकी तरह सारे संसारको अपनी देदीप्यमान किरणोंसे चमका देगा।

समाजमें कर्मठ कार्य-कर्ताओंकी बड़ी कमी है अतएव इधर समाजका ध्यान समयको जातिको ध्यानमें रखते हुये देना नितांत जरूरी है। आशा है समाज मेरे निवेदन पर ध्यान देगी। मैं जैनमित्रकी इस हीरक जयन्ति महोत्सव पर अपनी एवं श्री० मगनमल हीरालाल पाटनी ट्रस्टके अंतर्गत चलनेवाली संस्थाओं, तथा जलप्रबंध सेवा समितिएवं जीवदयापालक समितिकी तरफसे हार्दिक शुभ कामनायें प्रेषित करता हुआ वीर प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ कि अपने जैनमित्रकी दिनदूनी रात चौगुनी तरक्की हो।

'जैनमित्र' की जैनसमाजको देन

[पं०—राजकुमार शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, नवाई]

कृति वही श्रेष्ठ मानी जाती है, जिसकी शत्रु भी प्रशंसा करे, 'जैनमित्र' पत्रका जीवन सदैव संघर्षात्मक रहा। बड़े२ विरोध व संघर्ष इसके साथ रहे, मगर जैनमित्र कभी झुका नहीं, डरा नहीं, और किसीके प्रवाहमें बहा नहीं, इसकी नीति निर्भय और दृढ़ रही, इसने सदैव सामाजिक कुरीतियोंका विरोध किया, और अधिकांशमें उसे सफलता मिली,

खोटी पक्षका चाहे वह कितने ही बड़े आदमी द्वारा समर्थित रहा हो मित्रने उससे लोहा लिया, और वह उसमें विजयी रहा, सबके हितकी बात चाहे वह कितनी ही कड़ी क्यों न प्रतिभाषित हुई हो, 'मित्र' ने निर्भयतासे कही और आज तक कहता आ रहा है। जैन समाजमें विवाद बढ़ानेकी प्रवृत्ति 'मित्र' ने कभी नहीं अपनायी। शिक्षा प्रचार व आधुनिक तौर पर जैन-सिद्धान्तोंको जनताके समक्ष उपयुक्त तौर रखे जानेका श्रेय 'मित्र' को है। 'अखिल विश्व जैन मिशन' की प्रगतिमें जैनमित्र सबसे बड़ा सहायक रहा है। सही बातको 'मित्र' जिस ढंगसे पेश करता है, इस प्रकारके तौर तरीके बहुत कम पत्र अपनाते हैं।

"जैनमित्र" इसमें पूर्ण पटु है, यह लोकोक्ति आज सच है "जैनमित्र" स्वनामधन्य पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीके कार्यकालमें चमका। श्री कापड़िया-जीके समयमें बढ़ा और श्री स्वतंत्रजीका सहयोग उसे कुछ और आगे खींच रहा है।

"जैनमित्र" ने समाजको जो मार्ग दर्शन किया है वह सहस्र मुखसे प्रशंसनीय है। आज समाजमें जो जागृति दीख रही है, संस्थाएं व सभाएं जो आज प्रगति कर रही हैं, उसमें मित्रका सर्वोपरि सहयोग रहा है। बल्कि कितनी ही संस्थाओंका जनक 'मित्र' को माना जावे तो अत्युक्ति न होगी।

"मित्र" ने समाजके युवकोंको मार्गदर्शन दिया है। समाज-सेवी युवकोंको प्रोत्साहन दे उनको जनताके बीच लाकर सम्मान दिलाया है, नवीन लेखक व कवि तैयार कर समाजको दिये हैं। निष्पक्षतासे सबे पथ पर दृढ़ रहनेका आदेश दिया है, और समयकी पाबन्दीका महत्व आंकनेका अनुभव किया है। इस तरह "मित्र" की समाजके लिये अपूर्व अद्भुत अगणित देने हैं।

एक संस्मरण

(श्रेयांसकुमार, "वडकुल", शहापुरा)

ग्रीष्मकालीन अवकाशमें मैं अपने मित्र रमेश के घर गया, रमेश मेरे साथका पढ़नेवाला मेरा घनिष्ट एवं

स्नेही मित्र है। रमेशका घर नागपुर से करीब अठदस मीलकी दूर पर स्थित एक छोटेसे गांवमें है, रमेशके पिताजी अल्पशिक्षित किन्तु भोले तथा स्नेही स्वभावके कृषक हैं। रमेशके समान उनका मुझ पर अत्यधिक स्नेह है।

स्नान करनेके बाद जब हमलोग रसोईघर में भोजन करनेके लिए बैठे ही थे कि डाकियेने आवाज लगाई 'दादाजी चिट्ठी लीजिए" रमेश उठकर बाहर गया और डाकियाके द्वारा प्राप्त की गई चिट्ठियोंको देखकर प्रसन्नताके साथ उठा-पिताजी, "जैनमित्र" आया है।

पिताजी चौकी बिछाते हुए बोले-बेटा उसे भी बुलाकर साथमें खाना खिलाओ, कहाँ है वह?

रमेश जोरकी हंसी रोकता हुआ अखबारवाला हाथ पिताकी ओर बढ़ाकर बोला यह रहा पिताजी। पिताजी बोले बेटा यह तो अखबार है। हाँ पिताजी इस अखबारका नाम 'जैनमित्र" है यह कहते हुए रमेशने समझाया-पिताजी मित्र वही है जो हितैषी हो; व्यक्ति एवं समाजको बुरे रास्ते पर जानेसे रोककर उसे सद् मार्गका दिग्दर्शन कराये। जैनमित्र जैनोंका सच्चा मित्र है हितैषी है। यह समाजको आगम अनुकूल उपदेश देकर उन्हें मुक्तिमार्गकी प्रेरणा देता है।

(१) जैनमित्र समाजका अग्रदूत है—

जैनमित्र समाजका एकमात्र समाचार पत्र है अतः यह समाजमें होनेवाली नित्य प्रतिकी गति विधियोंका दिग्दर्शन कराता है।

(२) जैनमित्र आगमका उपदेष्टा है—

जैनमित्रमें प्रकाशित सामग्री प्रायः शास्त्रोंके अनुकूल होती है जो भवसागरमें भटकनेवाले प्राणियोंको धर्मकी ओर प्रेरित कर उन्हें सुगतिका बन्ध कराती है। तथा अनेक प्रकारकी शंका समाधान करती है।

(३) मुक्तिपथका प्रेरक—

जैनमित्रमें अनेक आध्यात्मिक एवं आत्मासे सम्बंधित निबन्ध कविताएं एवं कहानियां प्रकाशित होती रहती हैं जो मनुष्यको मुक्ति पथकी ओर प्रेरित करती हैं।

(४) समाज सुधारक—

जैनमित्र समाजका दर्पण है अतः समाजमें व्याप्त समस्त कुरीतियों अन्धविश्वासों एवं अन्य अनैतिक कार्योंकी कटु आलोचना कर समाजसे उनका अन्त कराकर नवचेतना एवं जागृतिका सन्देश देता है।

(५) अनन्य सेवक—

जैनमित्र विगत ६० वर्षोंसे पाक्षिक एवं साप्ताहिकके रूपमें धर्म एवं समाजकी जो सेवा करता आया है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है।

इस प्रकार यह पत्र ६० वर्षोंसे अपनी सेवासे समाजको संगठित जागृत एवं समुन्नत बनाये आ रहा है। तथा भविष्यमें समाजको प्रगति देता रहेगा।

रमेशकी यह बात सुनकर पिताजी ठहाका मार कर हंस पड़े और बड़े प्रेमसे बोले-बेटा मैं तो समझा था कि तुम्हारा कोई मित्र आया है, इसलिए मैंने चौकी

पं० गोपालदासजी व जैनमित्र

लेखक—
हरखचन्द सेठी।

उन्नीसवीं शताब्दीमें जैन समाजका नया मोड़ लेनेका समय आया था। वैसे इस मोड़में उस समयके श्रीमान धर्मात्मा आदि सबका ही हाथ अवश्य रहा होगा किन्तु इस नये मोड़में मुख्य हाथ पं० गोपालदासजी बरैयाका रहा। पंडितजी से तो उस समयके एक प्रतिभा सम्पन्न महा-विद्वान थे। उन्होंने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा जैन समाजके सभी

क्षेत्रोंमें आशातीत प्रगति करनेके साथ ही साथ अपने अथक परिश्रम एवं त्यागके द्वारा जैन समाजको एक ऐसा अपूर्व जीवनदान दिया जो आज तक अक्षुण्ण रूपसे अतीतके इतिहासको बनाये हुये है।

पं० जी का सार्वजनिक जीवन बम्बईसे प्रारंभ हुआ था। उन्होंने अपने उद्योगसे बम्बई प्रांतिक सभाकी स्थापना कर जनवरी १९०० में एक सभाकी ओरसे मासिक रूपमें 'जैनमित्र'को जन्म दिया और उसकी उपयोगिताका यह सूचक है, कि छ वर्षके पश्चात् जैन-मित्र पाक्षिक रूपमें समाज सेवामें आगे आया। वि० सं० १९६५ के १८ वें अंक तक पं० जी का वरद हस्त जैनमित्रको मिलता रहा। वस्तुतः पं० जी की छत्रछायामें जैनमित्रकी ऐसी प्रगति हुई कि वह आज भी समाजके प्राचीन समाचार पत्रोंमें अच्छा व अनूठा अपना स्थान रखता है।

वैसे यह पत्र एक प्रांतिक सभाका होते हुये भी अपनी सेवासे भारतवर्षीय जैन समाज पर अपना अनूठा प्रभाव जमाये हुये हैं। इसकी सेवायें नियमितता संयमितता एवं धर्मके अनुकूल चली आ रही हैं। तथा अपनी कुशल नीतिके कारण भारतवर्षिय सभाका रूप ले लिया है। पं० जी के जीवनमें अनेक संस्था-ओंने जन्म लिया और वे आज भी अपनी सेवाओंसे समाजका हित कर रही हैं, लेकिन पं०जी की कीर्तिका मुख्य स्तंभ 'जैनमित्र' है। उन्होंने इसे ऐसे शुभ समयमें जन्म दे कर संचालन किया था कि यह समाजकी ६० वर्षोंसे धार्मिक व सामाजिक सेवामें अक्षुण्ण रूपसे यथापूर्व करता चला आ रहा है। इसलिये पं० जीका नश्वर शरीर आज हमारे सामने नहीं है फिर भी जैन-मित्र व पं० जी सा० दोनों भिन्न नहीं रहे और आज भी उनका यह जैनमित्ररूपी पौधा समाजके धार्मिक व सामाजिक क्षेत्रमें विस्तृत रूप पा चुका है। इसी लिये जैनमित्रके साथ पं० गोपालदासजीका नाम और गोपालदासजीके साथ जैनमित्रका नाम सदा संबंधित है, व रहेगा।

रखकर उसको भोजनार्थ बुलानेके लिये तुम्हें आदेश दिया था किन्तु अब समझा कि वह तुम्हारा और मेरा ही नहीं समस्त जैन समाजका मित्र जैनमित्र आया है।

जैनमित्र वास्तवमें जैनोंका सच्चा मित्र है, सच्चा हितैषी है, इसकी सामाजिक सेवाएं स्तुत्य एवं सराहनीय हैं। मैं भी अब जैनमित्रको मंगाकर अवश्य पढ़ा करूँगा।

इसके उपरान्त हम लोगोंने भोजन किया। जैनमित्रकी यह बढ़ती हुई लोकप्रियता देखकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ।

पं० गोपालदासजीने इस जैनमित्रके द्वारा जब उप-न्यासका युग देशमें प्रारंभ हुआ उस समय 'सुशीला उपन्यास' को जन्म देकर जैन समाजमें उपन्यासकी

पद्धतिको बतलाया था। इसी मित्रमें धारा प्रवाही लेखों द्वारा "जैन सिद्धान्त दर्पण" प्रकट कर अन्तमें पुस्तकाकारमें समाजके सम्मुख आया। बालकोंको सिद्धान्तमें प्रवेश करनेके लिये जैन सिद्धान्त प्रवेशिका भी समाजके लिये महान उपयोगी सिद्ध हुआ और आज भी है।

ये तीनों ग्रन्थ जैनमित्रके द्वारा पं० जी सा० ने समाजको दिये। इनमें अन्तके दो ऐसे ही हैं जैसा कि आचार्य कल्प टोडरमलजीका "मोक्षमार्ग प्रकाशक" पं० जी सा० उक्त दोनोंके प्रथम भाग ही दे सके। और समाजमें इनसे ही सिद्धान्तादि ग्रंथोंके पठन पाठनादिकी रुचि बढ़ी।

जैन मित्रका अतीतका इतिहास सदा उज्ज्वल रहा है। समाजमें इन विगत ६० वर्षोंमें अनेक आन्दोलनोंने जन्म लिया, लेकिन इनमें किसीकी भी दो राय नहीं हो सकती हैं कि जैनमित्र इन आन्दोलनोंमें अपने ही पथ पर अडिग रहकर जैन समाजको धार्मिक व सामाजिक दोनों ही क्षेत्रोंमें सदा पथप्रदर्शकका काम करता रहा है। जैन मित्रकी यह सदा विशेषता रही है कि उसने समाजके कलहके कारणोंको अपने यहां जरा भी स्थान नहीं दिया। समाजकी एकताके लिये इसका पूर्ण सहयोग रहा है। विगत ६० वर्षोंके अंकोंको देखनेसे भी यह ज्ञात हो सकेगा कि किसी कारणसे कभी अपनी कटु लेखनी करनी भी पड़ी होगी तो उस विवादको अंतमें शांतिसे ही समाप्त किया होगा।

जैनमित्रने सदा ग्राहकोंसे कम लेकर और उन्हें सदा अधिक देकर उनकी सेवायें की हैं और कर भी रहा है। स्वाध्यायकी ओर पाठकोंको लगाया, जो ग्रंथ प्रकाशनमें नहीं आये, या जिनका अनुवाद नहीं हुआ, उन ग्रंथको प्रकाशनमें लाया। उपयोगी लेखोंको पुस्तकाकारमें प्रकट किया। जैन समाज बड़ा भाग्यशाली है जो 'जैनमित्र' की हीरक जयन्ती देख रहा है। समाजमें कई पत्रोंने जन्म पाया और लेंगे भी कई होंगी, लेकिन यह जैन मित्रको ही सौभाग्य है कि जो समाजके अतीतके इतिहासके साथ आज भी अपनी सेवाओंसे वर्तमान युगमें समाजके उत्थानमें संलग्न है।

बंबई प्रान्तिक सभाको जन्म देनेका श्रेय पंडित गोपालदासजीको था तो जैनमित्र भी उनके द्वारा प्रारंभ हो कर बढ़ा। इसीने समाजको लिखने पढ़नेमें आगे बढ़ाया। कई लेखक, कवि, और आलोचक पैदा किये और उनके साथ साथ लेख, कविता और आलोचनाकी शैलीके लिये भी मार्ग प्रशस्त किया। जैनमित्रका और भी विद्वानोंने संपादन कार्य किया होगा किंतु ब्र० शीतलप्रसादजी भी इसके बढ़ानेवालोंमेंसे एक ही प्रमुख व सफल संपादक रह चुके हैं। कापड़ियाजीने भी इस वृद्धावस्थामें इसे संभालकर ६० वर्षका होने पर भी तरुणसा बना रखा है। संपादक बदले, लेकिन काया व नीति व ध्येय आज भी यथापूर्व बना हुआ है। जब कि इस विज्ञानके युगने संसारको कयासे कया कर दिखाया है। तब भी जैन मित्रने अपने सात्विक परिणामोंसे धर्म व समाजके उत्थानके लिये एक अपना सुंदर मार्ग अवलम्बन कर रखा है। अतएव पं० गोपालदासजी व जैनमित्र दो भिन्न २ होते हुये भी समाज दोनोंको एक ही अनुभव कर रहा है।
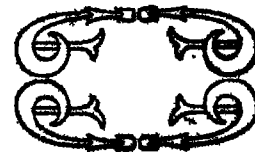
श्रद्धाञ्जलि

"जैनमित्र" समाचार पत्र ही नहीं अपितु एक संस्था है। उसने समाजकी गतिविधिके साथ पग बढ़ाये हैं।

विपत्तिके प्रभञ्जनसे लड़ता हुआ और कालके कराल वात्याचक्रको चीरता हुआ इष्ट पथ पर बढ़ता रहा है। विगत साठ वर्षोंमें उसने अनेक प्रख्यात लेखक विचारक एवं मनीषियोंका सृजन कर उन्हें स्फूर्ति प्रेरणा और प्रगति दी है। अतः समाजके लिए यह पत्र वरदानसा सिद्ध हुआ है, मेरा यह वैयक्तिक अक्षुण्ण विश्वास है। 'मित्र' ने सामाजिक राजनैतिक सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना जागृत की है। लेख, कविता, कहानी और समीक्षात्मक स्वस्थ साहित्य द्वारा समाजकी श्लाघनीय सेवा की है। उसकी निर्भीकता एवं नियमितता तथा पक्षपात हीनता प्रशंसनीय नहीं अपितु इतर पत्रोंके लिए अनुकरणीय है। इसमें सन्देह नहीं कि इस पत्रने समाजको रूढ़ियोंके जटिल जम्बालसे निकाल कर मानवताके प्रशस्त धरातल पर खड़ा करनेका श्रेय और प्रेय दोनों प्राप्त किये हैं। उसका भविष्य उज्ज्वल और आलोकमय है। "मित्र" समाजके लिए वास्तविक मित्र प्रमाणित हुआ है। अतः मैं अपने मित्र की हीरक जयन्ती पर उसकी सर्वतोमुखी सेवाओंसे प्रभावित होनेके कारण तीव्र आनन्दानुभूति करता हुआ श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूं।

—पं० सुमेरचन्द्र शास्त्री, बहराइच।

अभिनन्दन

[श्री० पं० सुमेरचन्द्र जैन शास्त्री, बहराइच]

"मित्र" हीरक पर्व आया!

धन्य यह मंजुल घड़ी है,
सौम्य सुन्दर वर्ष आया।
'मित्र' हीरक पर्व आया॥

युग युगों तक रहे शाश्वत, रुचिर सेवा दाम तेरा।
लोक-प्रिय इसने बन तुम, 'मित्र' सा हो नाम तेरा॥

क्योंकि तुमने राष्ट्रमें है,
जैनके तन मित उड़ाया।
'मित्र' हीरक पर्व आया॥

श्याम श्याम विशालताकी, गूंथ दी वेणी निराली।
सत अंग विचारमालाकी, छिटकती पूर्ण लाली॥

भावना प्रत्यूषमें ही,
जागरणका गीत गाया।
'मित्र' हीरक पर्व आया॥

आज नीराजन तुम्हारा, कर रहा जन जन हृदय है।
और मधुरिम गीत गाता, आ रहा दक्षिण मलय है॥

भाव सुमनोंको सजा कवि,
अर्चनाका थाल लाया।
'मित्र' हीरक पर्व आया॥

'गोपाल' शीतल'से समीक्षक 'परमेष्ठी' भी योग पाया।
स्वातंत्र्यकी दृढ़ साधनासे, पत्रकृतिमें ओज आया॥

वीरकी शुभ वन्दनाका,
गीत तुमने नित्य गाया।
'मित्र' हीरक पर्व आया॥

स्व० पं० गोपालदासजी बरैयाकी सेवायें

[ले०–भगवतीप्रसाद बरैया, लश्कर ।]

" जिस सफलताके लिये किसी महान् पुरुषको अपने प्राणोंकी बाजी लगानी पड़ी है, वह सफलता उतनी ही व्यापक बन सकी है।" यह बात जैन पथिक स्व० पं० श्री गोपालदासजी बरैयाके जीवनने स्पष्ट कर दी है। पं० गोपालदासजीने 'जैनमित्र' की स्थापनामें महान् कार्य किया है। जैन समाज व जैनमित्रके गौरवमय इतिहासमें तो उनका नाम सचमुच स्वर्णाक्षरोंमें लिखे जाने योग्य है।

पंडितजीका जन्म विक्रम सम्वत् १९२३ के चैत्र मासमें आगरेमें हुआ था, आपके पिताका नाम लक्ष्मणदासजी था। आपकी जाति 'बरैया' और गोत्र 'एछिया' था। आपके पिता आपको बाल्यकालमें ही छोड़कर परलोक सिधारे। अपनी माताकी कृपासे ही आप मिडल तक हिन्दी और छठी, सातवीं कक्षा तक अंग्रेजी पढ़ सके थे, आपको १९ वर्षकी अवस्था तक जैनधर्मसे कोई अभिरुचि नहीं थी। जब आप अजमेरके रेल्वे दफ्तरमें नौकर थे उस समय अजमेरमें पं० मोहनलालजी नामके जैन विद्वान थे उनकी संगतिसे आपका ध्यान जैन धर्मकी ओर आकर्षित हुआ। और तबसे आप जैन ग्रन्थोंका स्वाध्याय करने लगे। परिणाम यहां तक पहुंचा कि आप श्री आगसे जैन-समाजके उद्देश्यों पर चलनेका प्रयत्न करने लगे। अब आपके विचार केवल विचार ही न रहे, किन्तु आपने अपने विचारोंको क्रियात्मक रूप दिया और मार्गशीर्ष सुदी १४ सं० १९४९ को पं० चन्नूलालजीके सहयोगसे आपने बम्बई नगरमें 'दिगम्बर जैन सभा' की स्थापना की।

इसके बाद सं० १९५० के जम्बूस्वामी–मथुराके मेलेमें बम्बई सभाने इन्हें भेजा और सतत् प्रयत्नसे वहां पर महासभाका कार्य शुरू हुआ। महासभा और महाविद्यालयके प्रारंभका कार्य आपके ही द्वारा होता रहा। लगभग सं० १९५३ में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परीक्षालय स्थापित हुआ और उसका कार्य भी आपने बड़ी ही कुशलतासे सम्पादन किया।

पंडितजी भलीभांति समझते थे कि धर्मप्रचार करनेके लिये एक पत्रकी परम आवश्यकता है, जिससे शिक्षित जनता और धार्मिक जिज्ञासुओंको आत्मिक भोजन नियमपूर्वक पहुँचाया जा सके, और उनका धार्मिक विकास जारी रहे। अतः आपने दिगम्बर जैन प्रांतिक सभा बम्बईकी ओरसे जनवरी सन् १९०० में (सं० १९५६ के लगभग) "जैनमित्र" नामक मासिक पत्र चलाना आरम्भ कर दिया। आप सम्पादक बने। यह कार्य बड़े परिश्रम और उत्तरदायित्वका था। जैनमित्र प्रारम्भ करनेका श्रेय पंडितजीको ही है।

पंडितजीकी कीर्तिका मुख्य स्तंभ "जैनमित्र" है। यह पहले ६ वर्षों तक मासिक रूपमें और फिर सम्वत् १९६२ की कार्तिक सुदीसे २–३ वर्ष तक पाक्षिक

रूपमें पंडितजीके सम्पादकत्वमें निकलता रहा। सं० १९९५ के १८ वें अंक तक जैनमित्र सम्पादकोंमें पंडितजीका नाम रहा। उस समय जैनमित्रकी दशा उस समयके तमाम पत्रोंसे अच्छी थी। उस कारण उसका प्राय: प्रत्येक आंदोलन सफल होता था। श्रीजीकी कृपासे आज भी इस पत्रका वैसा ही स्टैन्डर्ड है।

पंडितजीकी प्रतिष्ठा और सफलताका सबसे महान् कारण उनकी निःस्वार्थ सेवाका या परोपकारशीलताका भाव है। एक इसी गुणसे वे इस समयके सबसे बड़े जैन पंडित कहला गये हैं। जैन समाजके लिये उन्होंने अपने जीवनमें जो कुछ किया उसका बदला कभी नहीं चाहा। जैनधर्मकी उन्नति हो, जैनधर्म संसारका शिरोमणि धर्म माना जाय, केवल इसी विशद् भावनासे ओतप्रोत होकर निरंतर परिश्रम करके जैनमित्रको प्रारम्भ किया। भले ही आज तक पं०जीकी इच्छाका शतांश भी न हो सका। हो परन्तु पाठक पं० जीकी धार्मिक भावनाका अनुमान अवश्य कर सकते हैं।

पं० जीको सत्यताके निबाहनेके लिये महान्से महान् संकट कालीन परिस्थितियोंका सामना करना पड़ा। लेकिन आप किंचित् मात्र भी सत्यताके पथसे विचलित नहीं हुए और न आपको कभी जीवनमें सत्यताकी ओरसे अरुचिका भाव आया।

पं० जी महान् स्वदेश प्रेमी थे। 'स्वदेशी' के आन्दोलनके समय आपने जैनमित्रके द्वारा जैन समाजमें अच्छी जागृति उत्पन्न की थी। पंडितजीकी जैन समाजके प्रति जैनमित्रके द्वारा की गई सेवायें अनिवार्य हैं, पं० जीने जैन समाजकी प्रगतिके लिये कोई कोशिश न उठा रखी, यहां तक कि समाजकी प्रगतिके लिये कई संस्थाओंके निर्माणमें पं०जीने अपूर्व योग दिया है।

पं० स्वतंत्रजी भी उसी जैनमित्र द्वारा जो समाजकी अपूर्व सेवायें कर रहे हैं वह किसीसे छिपी नहीं है। पं० स्वतंत्रजी अपनी सुदृढ़ पूर्ण विचारधाराओंसे हमेशा इस बातपर बल देते रहते हैं कि आपने जो बल संग्राममें लिया हार मानने आत्मसन्तके पथपर अविराम गतिसे चलनेका प्रयत्न करना चाहिये।

पंडित गोपालदासजी बरैयाजी अनुपम सेवायें करते हुये चैत्र सुदी ५ सं० १९७४ को स्वर्गवास सिधारे, मैं पं०जीकी दिवंगत आत्माके लिये श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

इस बातका उल्लेख बड़े सन्तोषके साथ किया जा सकता है कि 'जैनमित्र' ने जैन समाजकी पारस्परिक सद्भावना (एक दूसरेके ठीक सम्मानकी भावना) को सुदृढ़ बनानेमें और जागृतिके विकासमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है और हर्षकी बात है कि बड़ेरे प्रतिष्ठित लेखक, पत्र सम्पादक, बहुतेरे राजनीतिज्ञ जैनमित्रकी नीतिका आज भी हृदयसे समर्थन करते हैं।

मेरी कामना है कि आगामी वर्षोंमें और भी बड़े पैमाने पर पं० श्री मूलचन्दजी किसनदासजी कापड़ियाके सम्पादकत्वमें इसका उपयोगी कार्य जारी रहे। जैनमित्र पत्रिकाके ६० वें वर्षकी 'हीरक जयन्ती' के अवसर पर मैं इस पत्रिकाको और इसके पाठकोंको सहर्ष हृदयसे बधाई देता हूँ। और आशा करता हूँ कि यह पत्रिका सदैवकी भांति जैन समाजकी हितरक्षा करती रहेगी। "जैनमित्र" की सफलतायें इतनी अधिक हैं कि इस छोटेसे लेखमें उन सबकी चर्चा करना संभव नहीं है।

हीरक जयन्ती

[रच०—शिखरचन्द्र जैन, रैंठी ।]

" मित्र " की हीरक जयन्ती,
लेखनी तू स्वयं लिख दे ।
कर रहा सेवा हमारी,
साठ वर्षोंसे जगाकर ॥

श्री वीरका सन्देश देता,
रोज घर घरमें बताकर ।
हो रहे शुभ राह प्राणी,
स्वार्थ लिप्सामें उलझकर ॥

देता उन्हें चेतावनी,
श्री वीर प्रभुका मित्र बनकर ।
" मित्र " की हीरक जयन्ती,
लेखनी तू स्वयं लिख दे ॥ १ ॥

आईं हजारों आपदायें,
"मित्र" पर फिर "मित्र" पर ।
विचलित हुआ नहीं रंच भी,
बन सन्देशवाहक वीरका ॥

यह परिणाम है श्री वीरकी,
वाणी अहिंसा साधका ।
जो ख्याति पाई "मित्र" ने,
मानव हृदयके मंचमें ।
मित्रकी हीरक जयन्ती,
लेखनी तू स्वयं लिख दे ॥ २ ॥

हो व्याप्त सारे विश्वमें,
सुख शांतिका सन्देश यह ।
हों दूर कुत्सित भावनायें,
मानस पटलके मध्यसे ॥

हो ख्याति और होवे यश भी,
यह मित्रका "जैनमित्र" ।
मित्रकी हीरक जयन्ती,
लेखनी तू स्वयं लिख दे ॥ ३ ॥

श्री जैनधर्मभूषण धर्मदिवाकर—

स्व० ब्र० सीतलप्रसादजी

दि० जैनसमाज, दि० जैन साहित्य व जैनमित्रकी सम्पादकी वर्षोंतक करनेवाले सफल सम्पादक।

श्री धर्मरत्न स्व० ब्र० पं० दीपचन्दजी वर्णी

प्रांतिक सभा बम्बईके वर्षोंतक सफल उपदेशक तथा अनेक दि० जैन ग्रन्थोंके अनुवादक व लेखक।

सर सेठ भागचन्दजी सोनी, अजमेर
आप 'जैनमित्र'के परम हितैषी है
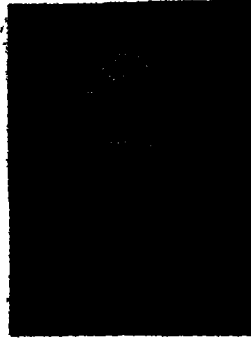
पं० चन्दनलाल जैन, उदयपुर
कविता पृष्ठ ५० पर पढ़ें

श्री हुकमचन्द जैन सांधेलीय-पाटन
लेख पृष्ठ ४६ पर पढ़ें

सेठ माणेकलाल रामचन्द गांधी,
भूतपूर्व मन्त्री-व० प्रां० सभा

सेठ वरूपाल शंकरलाल चौकसी,
भूतपूर्व मन्त्री-व० प्रां० सभा

फतेचन्दभाई ताराचन्द,
लेख पृष्ठ १६८ पर पढ़ें

पं० जीवनलाल सागर,
लेख पृ. ५५ पर पढ़ें

पं० भागचन्द भागेन्दु सागर,
लेख पृष्ठ ४९ पर पढ़ें

सिं० अनन्तरामजी रीठी,
लेख पृष्ठ ५१ पर पढ़ें

राजकुमार जैन वैद्य तिलक
फार्मेसी-इटारसी पृष्ठ ९६

जैनमित्र साठा, वह नाठा या पाठा

[ले०—श्री प्यारेलालजी बरैया "सुमन", लश्कर]

इस वर्ष 'जैनमित्र' ने अपनी आयुके ६० वर्ष समाप्त करके ६१ वे वर्षमें पदार्पण किया है। बन्धुओं

आम लोगोंसे प्रायः यही कहावत चली आ रही है, कि 'साठा सो नाठा' जिसकी आयु ६० वर्ष या उसके अधिक हो जाती है, उसके लिये यही कहा जाता है, कि 'साठा सो नाठा' अर्थात् उसकी बल, बुद्धि, चाल, ढाल आदि नष्ट हो जाती है सो प्रत्येक बातमें उससे हीन माना जाता है। परन्तु यहां पर 'जैनमित्र' के विषयमें सब बातें कहावतके ठीक विपरीत ही पाई जा रही है।

'जैनमित्र' दिन प्रतिदिन प्रत्येक बातमें पूर्वकी अपेक्षा बलवान है 'जैनमित्र साठा सो पाठा' जैसे कि 'जैनमित्र' के प्रथम दहाई (१० वर्ष) वैशाख मासके शिशु चन्द्रमाके समान सूक्ष्म शीतलता प्राप्त की व द्वितीय दहाई (१० वर्ष) जेष्ठमासके शिशु शोभित चन्द्रमाकी भांति तथा तृतीय (१० वर्ष) आषाढ़ मासमें केवल किशोर वय चन्द्रमाकी तरह व चौथी दहाई (१० वर्ष) श्रावण मासके किशोरावस्थासे परिपूर्ण कुमारावस्थामें पदार्पण करते हुये सुहावने चन्द्रमाके समान प्रकाशित हुवा। एवं पांचवी दहाई (१० वर्ष)में भाद्रपद मासकी युवावस्थाके समान वर्षाकी युवावस्थाके वेगमें अनेक प्रकारसे उन्नति करके समाजके समक्ष अग्रसर हुवा और जैन संसारके पत्रोंमें सर्व प्रथम ख्याति प्राप्त की। तथा छठवी दहाई (१० वर्ष) में आश्विन मासमें शरद् चन्द्रमाके समान स्वच्छता व शीतलता एवं गंभीरता धारण करके जैन समाजके प्रत्येक गृहमें स्वादिष्ट आहारकी भांति प्रवेश कर गया है।

जैसे कि स्वादिष्ट भोजनके लिये प्रत्येक समय पर उससे रुचि रहती है। ठीक उसी प्रकार मित्रके प्रेमी पाठकोंको उससे भेंट किये बगैरे चैन नहीं पड़ता है, और अब सप्तम दहाईका प्रथम वर्ष (६१ वा वर्ष) में पदार्पण करके अपने हीरक जयंती महोत्सवसे समस्त जैन समाजके नेत्रोंको अपनी ओर आकर्षित कर दिया है।

ज्योतिष शास्त्रके अनुसार भी छठवी कन्याराशिके सूर्यमें इसी आश्विन मासकी शरदपूर्णिमाके दिन अपनी आयुको समाप्त करके अर्थात् "जैनमित्र" छठवी दहाई (६० वर्ष) शरदपूर्णिमाके चन्द्र समान निर्मलता प्राप्त करके समाजमें सर्वप्रिय बन गया है।

बंधुओ! हमरे 'जैनमित्र' के उपरोक्त आकर्षण एवं मनमोहकताका श्रेय सेठ मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया सूरतको ही प्राप्त है कि, जिन्होंने अथक् परिश्रम और दिली लगनके साथ कार्यकुशलताके कारण एक आदर्श स्थापित करके 'मित्र' को उन्नतिके शिखर पर पहुंचाया है और यदि समझा जाय तो उन्होंने अपने 'मित्र' मिलापके अतिरिक्त प्रेमी ग्राहकोंको 'मित्र'

की लगभग ज्योत्स्नामें ही चतुर्गुणे मूल्यसे भी अधिक साहित्य दान किया है। जिसके कारण आज कई मुझ जैसे 'मित्र' प्रेमीके घर साहित्यका एक अच्छा संग्रह होकर लायब्रेरी हो गई है।

स्वामाभावके भयसे केवल इतना ही लिखना पर्याप्त समझता हूं कि श्री मूलचन्द्रजी जिसका शाब्दिक अर्थ है, मूलचन्द्र अर्थात् दोजका दर्शनीय सूक्ष्म चन्द्रमा जो दिन प्रतिदिन उन्नतिकी ओर अग्रसर होता हुआ श्री परमेष्ठीके ध्यानाग्र होकर परमेष्ठीदासको प्राप्त करके 'मित्र' का भली प्रकार पालनपोषण किया है। और इस समय ज्ञानचन्द्र यानी ज्ञानरूपी चन्द्रमाको पाकर पूर्ण स्वतन्त्रताको प्राप्त किया है। और वास्तविक ज्ञान प्राप्त करके 'मित्र' को निर्मल शरद्चन्द्रके समान प्रकाशित करनेका श्रेय श्री कापड़ियाजीको ही प्राप्त है।

अतएव 'जैनमित्र' के हीरक जयंती महोत्सवके लिये मेरी शुभ कामना उसके साथ है, और श्री वीरप्रभुसे भी यही प्रार्थना है कि भविष्यमें 'मित्र' के प्रकाशनमें दिन प्रति दिन उन्नति होती रहे। इसके लिये उसके समस्त कार्यकर्ताओंको सद्बुद्धि प्रदान करें।

जय "जैनमित्र" तेरी जय हो!

[देवेन्द्रकुमार जैन "शांत", बी० कोम, झांसी]

स्वच्छंद तुम्हारे अङ्कोंसे—
है नयी लेखनी कवियोंकी।
तेरी उदारतासे सुपत्र—
है सजी लेखनी कवियोंकी।
सचमें ही जैनमित्र तुम ही,
जय 'जैनमित्र' तेरी जय हो॥

फरवरी अतीतके कार्डोंपर,
आवाज तुम्हारी ही गूँजी;
गजरथ विरोधपर पत्र श्रेष्ठ,
तेरे लेखोंकी थी पूंजी।
तुम साठ वर्ष पूरे करके भी,
सज्जित हो! औ सुगठित हो।
जय 'जैनमित्र' तेरी जय हो?

जल वृष्टि बाढ़में रुके नहीं,
तुम इस समाजमें झुके नहीं;
कर्तव्य पूर्ण! औ न्याय पूर्ण!
तेरी धारा अब रुके नहीं
तुम अजर रहो औ अमर रहो।
जय 'जैनमित्र' तेरी जय हो॥

[ले०-जैनरत्न, धर्मभूषण, प्रतिष्ठाचार्य,
पं० रामचन्द्रजी जैन, प्रताबगढ़

जैनमित्र दिगम्बर जैन समाजका एक मात्र श्रेष्ठ साप्ताहिक पत्र है इसमें तो दो राय हो ही नहीं सकती। क्योंकि "कर कंकणको आरसी क्या" हम देख रहे हैं कि समाजमें जैनमित्रकी जो प्रतिष्ठा है वह किसी दूसरे पत्रके लिये प्राप्त होना कठिन है। और इस पत्रको जो हीरक जयन्ती मनानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है वह ही इसकी श्रेष्ठता और सफलताका प्रबल प्रमाण है। यद्यपि जैनमित्र बम्बई प्रांतिक दि० जैन सभाका पत्र है परन्तु यह सारी समाजमें इतना लोकप्रिय हो गया है कि इसके कारण बम्बई प्रांतिक सभा भी चमकने लग गई है। एक प्रांतिक सभाका प्रतिनिधित्व करनेवाले पत्र द्वारा सारी समाजमें मान्यता प्राप्त करना कम सौभाग्यकी बात नहीं है।

यद्यपि जैनमित्रके उत्कर्षमें इसके प्रथम सम्पादक श्रीमान् पं० गोपालदासजी बरैया तथा उनके बादके सम्पादक ब्र० शीतल प्रसादजीका महान् योग रहा है, तथापि श्रीमान् श्री मूलचन्द किसनदास कापड़ियाके सम्पादकत्वमें जैनमित्रने जो उन्नति की है, स्वर्णाक्षरोंमें लिखे जाने योग्य है। श्री मूलचन्दभाई कापड़ियाने अपना सारा जीवन ही जैनमित्रको समर्पित कर दिया तभी जैनमित्र समाजका लोकप्रिय पत्र बन सका है। यह तो श्री कापड़ियाजीका ही साहस था कि अनेक प्रकारकी कौटुम्बिक तथा सामाजिक विघ्न बाधाओंमें भी जैनमित्रको कोई आंच नहीं आने दी। साथ ही जैनमित्रको ऐसी मुसीबतोंसे भी बचाया कि जिनके कारण कई समाचार पत्र बन्द हो जाते हैं।

जैनमित्र जबसे श्री कापड़ियाजीके संरक्षणमें आया तबसे अबतक कभी अनियमित नहीं हुआ। यह भी इसकी लोकप्रियता बढ़नेमें प्रमुख कारण रहा है कि यह पत्र सदा समयपर निकलता रहा। एक समाचार पत्रके लिये नियमितताका पालन करना उसकी सफलताका श्रेष्ठ प्रमाण माना जाता है। वरना एक हाथी रखना उतना कठिन नहीं है जितना कि एक समाचार-पत्रको निकालना, पत्रका जीवन मरण उसके सम्पादक पर ही निर्भर रहता है।

प्रत्येक समाजकी उन्नति उसके समाचार पत्रों पर अवलंबित रहती है। प्रत्येक आन्दोलन समाचार पत्रोंके द्वारा ही सफलता प्राप्त कर सकता है। और प्रत्येक खतरेसे बचनेके लिये समाजको जागृत करनेवाले ये सम्पादक-पत्र ही हैं। इसलिये एक सामाजिक पत्रका सम्पादन करनेके लिये कितनी विशाल योग्यता और अनुभवकी आवश्यकता होती होगी यह हम सरलतासे समझ सकते हैं। श्री कापड़ियाजी योग्य अनुभवी और अध्यवसायी सम्पादक हैं, और उन्होंने जो जैन समाजकी सेवाएँ की हैं, उसके लिये समाज सदा उनका ऋणी रहेगा। जैनमित्रकी हीरक जयंतिके अवसर पर हम हार्दिक शुभकामनाओंके साथ बधाई देते हुए श्री कापड़ियाजीके दीर्घायुष्यकी कामना करते हैं।

श्री कबूतर निवास—मारोठ (राजस्थान)

यह सुन्दर एवं सुरक्षित भवन श्री सेठ तोफानमलजी उर्फ नेमीचन्दजी पांड्या मारोठ निवासी (हाल इन्दौर) के स्व० पूज्य पिताजी श्री. सेठ बजिराजजी पांड्याने विक्रम संवत् १९८० में ३०००) रुपयेकी लागतसे बनवाया था।

इसमें सबसे ऊपरकी मंजिल पर प्रतिदिन प्रातःकाल कबूतरोंको धान डाला जाता है। हजारों ही कबूतर, मोर, चिड़ियां आदि पक्षी धान चुगते हैं। पानीका भी प्रबन्ध रहता है।

यह इमारत इस ढंगसे बनाई गई है जिसमें बिल्ली आदि कोई हिंसक जानवर कबूतरोंको मार नहीं सकता है।

धान डालनेके लिये गुप्त भण्डार ऐसा बना है जिसमें हरएक आदमी हर समय धान डाल सकता है। हरएक वर्णवाले इस संस्थाको अपनाते हैं।

सेठजीने यह भवन बनवाकर स्वयं अक्षय पुण्य संचय किया है, लेकिन गरीबसे लेकर अमीर तकके लिये दानका जो यह प्रशस्त मार्ग निकाल दिया है, वह बटके बीजके समान फलता और फूलता रहेगा।

जैन समाज अपने जीवदयाके कार्यमें सुप्रसिद्ध है, मूक पशुओंके समान ही वह पक्षियों और प्राणी मात्र पर कृपाका भाव रखती है।

अतएव इस प्रकार पक्षियोंके स्थान २ पर पक्षी निवास समाजको कायम करने चाहिये, और महात्मा बनकर अक्षय पुण्य संचय करना चाहिये।

आवेदक—नंदलाल चौधरी प्रचार मंत्री—शिवमुखराय जैन शास्त्री,
जीवदया पालक समिति, मारोठ (राजस्थान)

'जैनमित्र' के कार्य-कलापोंपर संक्षिप्त प्रकाश

(पं० [illegible] जैन शास्त्री, एम. ए. (प्रो० वि०) [illegible] विद्यालय—सागर)

अखिल जैन समाजका एकमात्र मुखपत्र "जैनमित्र" अपने जीवनके अतीत ५० वर्षोंको व्यतीत कर ५१ वें वर्षमें पदार्पण करने जा रहा है। लिखना न होगा कि यह पत्र अखिल जैन समाजका एक धार्मिक वयोवृद्ध पत्र है। इसमें सन्देह नहीं कि पत्रको धार्मिक वयोवृद्धता पत्रका लोकप्रिय होना प्रकट करती है।

पत्रका संघर्षपूर्ण जीवन—यह बात किसीसे छिपी नहीं है कि पत्रका यह दीर्घ-जीवन संघर्षपूर्ण रहा है। पत्रने अपने इस संघर्षपूर्ण जीवनका बड़ी दृढ़ता एवं धैर्यसे सामना किया है। इसे केवल सामाजिक संघर्षका ही नहीं अपितु आर्थिक संघर्षके साथ ही साथ पत्रोंके पारस्परिक संघर्षका भी सामना करना पड़ा है। यह सब होते हुये भी पत्र अपनी नियमिततासे कभी नहीं डिगा। पत्रकी इस सहनशक्तिका श्रेय इसके लिये यथासमय प्राप्त कर्मठ एवं कर्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ताओंको है।

पत्रके द्वारा दस्सा-पूजाधिकारका समर्थन—पत्रके जीवन कालमें एक ऐसा भी समय आया था जबकि समाजके हजारों राह-भूले (दस्सा) जैन बन्धु, जिन्हें कि समाज एवं धर्मके ठेकेदारोंने उनकी मानवीय भूलोंके कारण जाति-च्युत कर पूजा आदिके अधिकारोंसे सदैवके लिये वंचित कर दिया था और वे अपने इस अपमानको सहन कर समाजसे अपने अपमानका बदला लेनेके लिये मुसलमान एवं ईसाई धर्मके अनुयायी बनते जा रहे थे, ऐसे समयमें इस पत्रके दूरदर्शी, निर्भीक, कर्मठ एवं कर्तव्यनिष्ठ सम्पादक: पं० गोपालदासजी बरैया व कापड़ियाजीने अपनी निर्भीक [illegible] [illegible] लेखनी के द्वारा समाजके ठेकेदारोंसे इस जातिच्युत तथा अधिकारोंसे वंचित जैन बन्धुओंको पुनः जातिमें [illegible] करने एवं उनके अधिकारोंको पुनः लौटानेकी साग्रह अपील की। परिणामस्वरूप उन्हें अपने इस सदुद्देश्यमें सफलता मिली और हजारों जैन बन्धुओंको धर्म परिवर्तन करनेसे रोका जा सका।

अंधश्रद्धा एवं कुरीतियोंका मूलोच्छेद—हमारी समाजमें अन्धश्रद्धा एवं कुरीतियां—बालविवाह, वृद्ध-विवाह अनमेलविवाह तथा मृत्युभोज आदि (जो कि सैकड़ों वर्षोंसे अपनी विषैली जड़ें जमाये हुये समाजकी नींवको खोखला करनेपर तुली हुयी थीं) को भी जड़से उखाड़ फेंकनेका श्रेय श्री कापड़ियाजीकी निर्भीक लेखिनीको है। इन कुरीतियोंको उखाड़कर फेंकनेके सदुद्देश्यमें कापड़ियाजीने समाजकी कुटिल भृकुटियोंकी किंचित्मात्र भी चिन्ता नहीं की। यही कारण था कि उन्हें अपने इस कार्यमें महान सफलता मिली।

अन्तर्जातीय विवाह प्रचार—समाजके अन्दर घुसी हुई कुरीतियों एवं अन्ध-विश्वासोंका मूलोच्छेद करनेके उद्देश्यके साथ २ समाजको एकताके सूत्रमें बांधना भी "जैनमित्र" का महान् उद्देश्य रहा है। पत्रकी यह सद् इच्छा सदैव रही है कि समाजके अन्दर किसी प्रकारका जातीय भेदभाव न रहे। सभी जातियोंके

जैन बन्धु आतीय भेदभावको भुलाकर अपने लिये वे सब जैन समझें। और इस पुनीत उद्देश्यकी सिद्धि तभी संभव हो सकती है जबकि समाजमें अन्तर्जातीय विवाहोंका अधिकतम प्रचलन हो। अपने पुनीत उद्देश्यकी सिद्धिका एकमात्र साधन 'अन्तर्जातीय विवाह'को निश्चित कर 'जैनमित्र' विगत कई वर्षोंसे शास्त्रोक्त इस 'अंतर्जातीय विवाह' प्रथाका प्रचार करता आ रहा है। परिणामस्वरूप पत्रको अपने इस पुनीत उद्देश्यमें बहुत कुछ सफलता भी मिली है। पूर्ण सफलता तबतक प्राप्त नहीं हो सकती जबतक कि समाजके नवयुवक इस पुनीत उद्देश्यकी सिद्धिमें सक्रिय भाग नहीं लेंगे।

'जैनमित्र'का गजरथ विरोधी आंदोलन—विगत कुछ वर्षोंमें जैन समाजके गढ़ बुन्देलखण्डमें गजरथोंकी बड़ी धूम मच गई थी। किन्तु जैसे ही समाजके नवयुवकों एवं विद्वानोंने 'जैनमित्र' एवं 'जैन-सन्देश'के द्वारा अपना गजरथ विरोधी आंदोलन चलाया एवं आमसभाओंमें गजरथ विरोधी भाषण दिये तो उस समय तो नहीं किन्तु भविष्यके लिये अवश्य गजरथोंका चलना कुछ असम्भव-सा दिखाई दे रहा था। फिलहाल तो 'जैनमित्र'के इस गजरथ विरोधी आंदोलनको सफल ही समझना चाहिये।

समाजको 'जैनमित्र'की महान देन—'जैनमित्र' ने अपने दीर्घ कालके परिश्रमके द्वारा तैयार किये हुये कुछ रत्न भी समाजको प्रदान किये हैं। ये रत्न केवल निर्जीव रत्न न होकर सजीव लेखक एवं कवि हैं। इनकी संख्या एक या दो न होकर हजारों है। समाजको उपहारमें प्राप्त ये रत्न साहित्य एवं समाजकी सेवामें सतत् प्रयत्नशील हैं। इन कवियों एवं लेखकोंके तैयार करनेका श्रेय इस पत्रके उदारचेता संपादकः—श्रीमान् कापड़ियाजी एवं श्री पं० स्वतन्त्रजी सूरतको है, जिन्होंने नवोदित कवियों एवं लेखकोंकी रचनाओंको अपने पत्रमें स्थान दे उनका उत्साह संवर्धन किया तथा व्यक्तिगत पत्रोंके द्वारा उन्हें भविष्यमें लिखते रहनेकी प्रेरणा प्रदान दी। मैं नहीं सोचता कि किसी नवोदित लेखक या कविने अपनी रचना इस पत्रमें प्रकाशित करनेको भेजी हो और वह इस उदार पत्रने प्रकाशित न की हो।

जैनमित्रकी सार्थकता—जैन समाजका कोई भी ऐसा पत्र नहीं है जो अखिल जैन समाजके सुख-दुःखके समाचार एवं अन्य कार्य-कलापोंकी सूचना यथासमय सभी स्थानोंपर पहुँचाता हो, पर जैनमित्र इसके लिये अपवाद है और यही कारण है कि यह जैन समाजका यथार्थ मित्र है और इस तरह यह अपने नामको सार्थक करता है।

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता है कि आदरणीय कापड़ियाजीके संपादकत्व एवं श्री पं० स्वतन्त्रजीके कार्य सम्पादकत्वमें यह पत्र अपने जीवनके ज्योतिर्मान ६० वर्षोंको व्यतीत कर इस वर्ष अपनी हीरक जयन्ती मनाने जा रहा है।

रखती थी कि नैव के एक कुबड़े जिसका शरीर महाकुरूप, दांत बाहर निकले, विकृत मुख कुलियाके पुरुष पर आसक्त थी वह प्रतिदिन कुबड़ेसे भोगविलास द्वारा अपनी वासनाको तृप्त करती थी। उस दिन कुबड़े व रानीकी जिस प्रकार बातें हुईं जिन्हें वहां पर महाराज छुपेर सुन रहे थे।

"हे रण्डे! आज तूने इतनी देर क्यों की? प्रतिदिनकी तरह आज निश्चित समयपर क्यों नहीं आई? मैं तेरा मुख नहीं देखना चाहता हूं। कुबड़ेने ऐसा कहकर रानीको चाबुककी मार लगाई।

रानी बोली—हे स्वामी! मेरे अपराधको क्षमा करो। मेरे पति महाराज यशोधर मेरे महलमें आये हैं और रात्रिभर मेरे महलमें रहे, इस कारण मेरे आनेमें विलम्ब हुआ। अभी भी बड़ी कठिनाईसे यहांतक आ सकी हूं। हे नाथ! तुम मेरा विश्वास करो कि मेरा चित्त प्रति समय आपकी यादमें ही लगा रहता है, तुम्हारे बिना मुझे क्षणभर भी आराम नहीं।

मैं प्रतिज्ञा करती हूं कि अगर महाराजकी मृत्यु हो जाय तो मैं कात्यायिनी देवीकी बड़ी धूमधामसे पूजा करूंगी। यह कहकर कुबड़ेके चरणोंमें रानी गिड़गिड़ाने लगी।

इस प्रकार ज्यों त्यों कुबड़ेको सन्तुष्ट करने पर रानी और कुबड़ा दोनों ही भोगमें लिप्त हो गये! महाराज यशोधर इस प्रकारके कुल्टारानीके कुकृत्यको प्रत्यक्ष देख क्रोधसे म्यानसे तलवार निकाल एक ही वारसे दोनोंका काम तमाम करना ही चाहते थे कि तत्क्षण रुककर विचार करने लगे कि यह तलवार युद्धमें शूरवीर योद्धाओंको मारनेके लिये है—मैं इस तलवारसे इन नीच पापियोंको मारकर कलंकित नहीं करूंगा। यह संसार ही असार है मेरे जैसे सुन्दर वैभव युक्त राजाको पाकर भी रानी कुबड़े कुरूपीसे आसक्त है, धिक्कार है, इस स्त्री पर्यायको ईसकी विडम्बनाको, इस प्रकार विरक्त चित्त होकर महाराज चुपचाप लौटकर पलंग पर लेट गये।

कुछ समय पश्चात् पापिनी कुल्टा अमृतमती दबे पांव आकर महाराजके पास सो गई। उस समय यशोधर-युक्त विरक्त हो चुका कुल्टाके अंगका स्पर्श यशोधर महाराजको सर्पिणीके समान लगने लगा। प्रातः हुआ और आखिर उन्होंने राज्य वैभव छोड़ साधु दीक्षा लेनेका निश्चय कर लिया।

*

"हे माता! आज रात्रिको मैंने भयंकर स्वप्न देखा है, कोई भयानक शक्ति मुझे मौतके मुंहमें धकेल रही थी उससे अभी भी मेरा हृदय कांप रहा है, मुझे मेरी मृत्यु आसन्न लग रही है। मां मुझे आज्ञा दो मैं राज्य, धन, परिवार, सब त्याग दीक्षा लेकर जंगलमें तप करूं। यशोमति राजकुमारको राज्याभिषेक कर बहुत शीघ्र वनको प्रयाण कर दूंगा। राजा यशोधरने अपनी माता चन्द्रमतीसे कहा। माता बोली—

"हे पुत्र! ऐसा कभी नहीं होगा—स्वप्नकी बातें सब झूठी होती हैं। भयभीत होनेकी कोई जरूरत नहीं है। अगर कोई आपत्तिकी संभावना है तो अपनी कुलदेवी चण्डमारीकी बड़ी पूजा कराओ। अनेक युगल पशु पक्षीकी देवीको बलि दो। देवी प्रसन्न होकर हमारी सब विपदायें दूर कर देगी, मनोरथ पूरा कर देगी।

हे माता! तुम यह क्या कह रही हो, किसी निर्दोष प्राणीकी बलिसे हमारे उपद्रवोंकी शान्ति होगी? जीवका वध भयंकर पाप है, उससे कोई सुखी नहीं हो सकता, मुझसे ऐसा घोर कुकर्म नहीं होगा, मैं तो अवश्य दीक्षा ही लूंगा।

'बेटा यशोधर! धीरज रक्खो। जीवोंकी बलिदान नहीं, मेरी आत्मा तुमसे दीक्षा लेनेकी राजी नहीं, ऐसी

चण्डमारीकी पूजा बलिके साथ एकबार धूमधामसे कर लेनेके पश्चात् तुम खुशीसे दीक्षा ले लेना।" चन्द्रमतीने कहा।

"मां—तूने अभी तक धर्मको नहीं समझा है जैसा जीव हमारे शरीरमें है वैसा ही पशुओंमें है। मां दुनियामें जीवको मारनेके समान कोई दूसरा पाप व अन्याय नहीं है। मैं अपने स्वार्थके लिये जीव हिंसाका कार्य कभी नहीं करूँगा तुम नहीं मानती हो तो लो, मैं अपना मस्तक ही काटकर तुम्हें अर्पण कर देता हूँ।" यह कहकर म्यानसे तलवार निकालकर महाराज यशोधर अपने मस्तकको धड़से अलग करनेको तैयार हुये कि चन्द्रमतीने हाथ पकड़ कर रोक लिया और वह कहने लगी।

"ठहरो—यशोधर यह क्या कायरताका कार्य करते हो! तुम जीवहिंसा नहीं चाहते तो मैंने भी तुम्हारी राय मान ली, मगर एक बात तो मेरी मानना होगा—कि मैं एक आटेका कुक्कुट (मुर्गा) बनवाती हूँ उसको देवीको बलि देकर पूजन कर लेंगे। उससे न तो कोई जीव मरेगा और पूजन भी हो जायगी।

यशोधरको यह भी कार्य पसन्द नहीं था किन्तु माताकी इच्छा और अत्यन्त आग्रहसे स्वीकार कर अनुमति देदी। बस फिर क्या था चन्द्रमतीने एक अच्छे कलाकारसे चूनका मुर्गा बनवाया।

× × ×

आज चण्डमारीदेवीके मंदिरकी सजावट अपूर्व थी। सब तरहसे पंडे लोग खड़े स्तुति गान कर रहे थे कि माताकी ममतावश उसके संकेतके अनुसार यशोधर महाराज दोनों हाथ जोड़ देवीसे प्रार्थना करने लगे। "हे जगज्जननी माते! तू संसारका कल्याण करनेवाली है, त्रिलोकको तारनेवाली है—सर्व मंगलदायिनी है, हे देवी! हमारी रक्षा करो। फिर वेद-मन्त्रोंके उच्चारण हुए और यशोधर महाराजने उस नकली कुक्कुटके गलेपर खड्ग चलाकर उसकी बलि दी, फिर उसको देवीप्रसादका रूप देकर, नैवेद्यमें मिलाकर, सब ब्राह्मणोंको पितृ-तर्पणके पश्चात् भोजन कराया और स्वयं यशोधर महाराजने व चन्द्रमतीने भी उस भोजनको देवीप्रसादके रूपमें खाया।

× × ×

रानी अमृतमतीने राजाके दीक्षाके समाचार सुने तो उसे सन्देह हो गया कि महाराजने रात्रिके कुकर्मकी बात जान ली है यही कारण है कि महाराज संसारसे उदास होकर दीक्षा ले रहे हैं। उस भामिनीने अपना मायाचार फैलाकर महाराजका काम तमाम कर देनेको मनमें एक षड्यन्त्र रचा उसने सोचा कि कभी न कभी महाराजने मेरे कुकृत्यकी बात किसीसे कह दी तो मेरा भयंकर अपयश होगा, लोग मुझे घृणाकी दृष्टिसे देखेंगे यह विचारकर उस कुलटारानीने अपने कपट जालमें महाराजको फँसानेका कार्यक्रम बनाया।

× × ×

उज्जैनी नगरीमें यह समाचार तीव्र वेगसे फैल गया कि महाराज यशोधर राज्य-वैभव छोड़कर आज दीक्षा लेने वनको प्रयाण करनेवाले हैं। नगरमें शोक छा गया, राजप्रासादोंमें जितने सुना आश्चर्यान्वित होकर सब महाराजके दर्शन करने और विदाई देने एकत्रित हुए सबकी आंखोंमें अश्रुओंकी धाराएं बह रहीं थीं, यशोधर महाराज दोनों हाथ जोड़ सबसे क्षमा मांग रहे थे। अनेक राजा, सामन्त, मन्त्री-गण आदि सबसे उन्होंने अपने अपराधोंकी क्षमा मांगी। सबने महाराजका यशोगान किया, महाराज प्रासादसे नीचे उतरकर रवाना हुए।

महाराज राज भवनसे बाहर आये दोनों तरफ

लोगोंका समुदाय दर्शकोंकी प्रतीक्षामें खड़ा था। ज्योंही महाराजने आगे चलानेको कदम बढ़ाये थे कि रानी अमृतमतीको सामनेसे आते देख—उनका हृदय घृणासे भरा।

अरे ! यह पापिनी कुलटा इस समय मेरे सामने क्यों आती है, इसका मुख देखना भी अमंगलकारी है, इतना सोच ही रहे थे—कि रानी अमृतमतीने महाराजके चरणोंमें मस्तक रख दिया, और रोनेका ढोंग करने लगी। बोली—हे प्राणनाथ ! आप मुझ दासीको छोड़ कहां जा रहे हो, आपने यह क्या सोचा—मेरे प्राण आपके बिना इस शरीरमें कैसे रुकेंगे। तनिक ठहरिये महाराज, एकबार इस दासीके हाथका भोजन ग्रहण कर दीक्षा लेने का प्रयाण कीजियेगा। नाथ ! मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिये। रानीके इस प्रकार करुणाजनक वचनोंको सुन महाराज यशोधर महारानीके कुकृत्योंको भूल गये और रानीके कपट-जालमें फँसकर सरल परिणामी—क्षमा भाव धारण करनेवाले राजाने रानीकी प्रार्थनाको स्वीकार कर और दीक्षाका कार्य अगले दिनके लिये स्थगित रक्खा।

× × ×

रानी अमृतमतीके प्रासादमें आज अनेक लोगोंको ब्राह्मणों आदिके भोजनकी तैयारी हो रही थी। भोजनका समय हुआ, रानीने सर्व प्रथम महाराजसे प्रार्थना की कि—

हे महाराज ! और सब तो पीछे भोजन करेंगे सबसे पहले मैं षट्‌रस व्यंजनोंसे युक्त अनेक प्रकारके सुस्वादु भोजन आपको करा दूँ ऐसा कहकर महाराजको भोजनशालामें ले जाकर रानीने उच्चासन पर बिठाकर स्वर्ण थालमें नाना तरहके व्यंजनोंको परोसा, राजा यशोधर महारानीके इस कृत्रिम आदर आतिथ्यमें अपने आपको सर्वथा भूल गये और रानीकी प्रेममयी बातोंमें आगये।

महाराज भोजन प्रारम्भ करने ही वाले थे कि महारानीने दो मोदक बहुत सुन्दर [illegible] महाराजके थालमें परोसे, और बोली—

हे स्वामिन् ! ये मोदक अत्यन्त मधुर कई तरहके बहुमूल्य व्यंजनोंसे युक्त मेरे पितृगृहसे आये हैं। मैंने इन्हें केवल आपके लिये ही सुरक्षित रक्खे थे। आज अहोभाग्य मेरा कि ये आपके आहारके काम आरहे हैं। महाराज सबसे पहले आप इन मधुर सुस्वादु मोदकोंको ग्रहण कीजिये।

"बहुत अच्छा" महाराज बोले—महाराज ! आज मेरा धन्यभाग्य है कि आप दीक्षा लेनेके पूर्व मुझ दासीके हाथके बनाये भोजनको स्वीकार कर रहे हैं रानी बोली—

"एक बात बता ओ कि तुम आज इतना स्नेहभरा आतिथ्य क्यों कर रही हो ?" राजाने कहा—

महाराज ! आज मेरी पति-भक्ति जागृत हो उठी है रानीने कहा।

महाराज यशोधर सबसे पहले उन्हीं मोदकोंको रुचिसे खाने लगे जिनकी महिमाके गुणगान रानीने किये थे। किन्तु यशोधर महाराज अभी उनमेंसे एक लड्डूको पूरा कर नहीं पाये थे कि उनके दिमागमें चक्कर आने लगे, आखोंपर अंधियारा छाने लगा, चित्त सहसा घबराने लगा, राजाको रानीके कपटजालका आभास लगने लगा। रानीकी कुटिलताका पता लगते ही राजाने चिल्लाया वैद्य ! वैद्य ! वैद्य ! इतना कहते ही हलाहल विषभरे लड्डूने राजापर अपना प्रभाव जमाया और वे बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

पहरेदारोंने महाराजकी आवाज सुनी तो वे इधर उधर दौड़कर वैद्योंको बुलाने गये। रानीने [illegible] आगर

[illegible] तो पापका घड़ा फूट न जाय यह विचार कर वह राजाके गले पर प्रेमके बहाने गिर पड़ी और अपने तीखे दांतोंसे महाराजके गले पर इस प्रकार काटा कि राजाके प्राणपखेरू उड़ गये फिर उनके मरनेपर "हाय ! प्राणनाथ अचानक आपको यह क्या हो गया." हे नाथ ! मुझे छोड़कर आप क्यों चले गये । इस प्रकार नाना तरहके दीन वचनोंसे रुदन कर विलाप करने लगी । सब लोग एकत्रित हुए सबने महाराजकी अचानक मृत्युसे शोकके आंसू बहाये । इस प्रकार रानीने अपने पाप, व्यभिचार, वासनाके रोड़ेको हटाके लिये दूर कर दिया ।

× × ×

उपसंहार

यशोधर महाराजकी मां चन्द्रमती भी पुत्र वियोगसे मृत्युको प्राप्त हुई, यशोधर व चन्द्रमती दोनोंने चूनके कुक्कुटकी बलि दी, इस संकल्पी हिंसासे अनेक भवोंतक तिर्यंच गतिमें जन्म लेकर भयानक दुःख सहे और कुल्टा रानी अमृतमती जब कोढ़के कुबड़ेसे भोग करने लगी । अन्तमें उसका सब शरीर सड़ गया, भयानक रोगोंका घर हो गया, दुर्ध्यानसे मरकर वह अपने पापोंका फल भोगने नरकमें चली गई ।

शुभ कामना

"जैनमित्र" के हीरक जयन्ती महोत्सवके शुभ अवसरपर अपनी शुभ कामना भेजते हुए अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है । जैनमित्र अपने जन्मसे आजतक समाजकी सेवा करते हुए जो इस समाजका उपकार कर रहा है, वह [illegible] है ।

—[illegible] कोमलचन्द जैन, [illegible]पुर ।

मित्रको बधाई !

[रच०-वीरचन्द्र सीवनकर [illegible]]

मित्र ! तुझे 'हीरक' कहूं मैं,
इस तरह स्वागत करूँ मैं,
दीप जलते जा रहे थे,
जन प्रकाश पाकर बढ़ रहे थे,
यही तेरी [illegible] थी ।
यही तेरी माया है ॥ १ ॥

मित्र हमारे थे हजारों,
एक भी नहीं कामका;
पर "मित्र" तू ऐसा यही,
सारा गगन गुंजारता,
यही तेरी काया है ।
यही तेरी प्रीत है ॥ २ ॥

आज है हीरक जयन्ती,
मित्रकी या सद्धर्मकी,
व्यवहारकी या जागृतिकी,
प्रेमकी या एकताकी,
हमें तूने चेतन दिया ।
धन्य हो ! बधाई हो ॥ ३ ॥

जैनमित्र एक उत्तम वैद्य

[लेखक—बाबू सुमेरचन्द 'कौशल' बी. ए. एल एल. बी. प्लीडर (सिवनी)]

परम प्रसन्नताकी बात है कि "जैनमित्र" को सन् १९५० के सुवर्ण जयन्ती अङ्क निकालनेके पश्चात्

अपनी 'हीरक जयन्ती' मनानेका सुअवसर प्राप्त हुआ है। समाज सुधार तथा धर्म सेवामें जितना योग "जैनमित्र" का रहा है, उतना किसी अन्य जैन पत्रका नहीं। इसपर तारीफ यह है कि "जैनमित्र" ने जिन २ सुधारोंकी आवाज उठाई, वे सुधार होकर रहे। इससे स्पष्ट है कि जैन समाजकी गति विधि तथा वास्तविक स्थितिका जितना ज्ञान "जैनमित्र" को रहा है; उतना अन्यको नहीं। इसलिये परंपरागत अनावश्यक रूढ़ियोंको जितनी सफल ठेस इसने पहुँचाई है वैसी औरने नहीं। वस्तुतः जैन समाज जिस पथका पथिक होकर सर्वाङ्गीण उन्नति कर सकता है, "जैनमित्र" उसे सदा प्रदर्शित करता रहा है। दूसरे शब्दोंमें "जैनमित्र" वह वैद्य है जो जैन समाजकी नाड़ीको ठीक २ पहचान कर, उसका योग्य उपचार करता है।

"जैनमित्र" की इस सफलताका श्रेय मुख्यतया उसके अनेक वर्षोंसे सम्पादक तथा श्री मूलचन्दजी कापड़ियाको है। जिन्होंने अपने अथक परिश्रम, अनवरत सेवा भाव तथा त्याग से उसे अनेक विघ्न बाधाओं—जैसे दि० जैन महासभा द्वारा "जैनमित्र" का बहिष्कारका सामना कर, उसे ६० वर्षकी दीर्घ आयु प्रदान की। श्री 'स्वतंत्र' के सहयोगने उसमें चार चांद लगा दिये।

जैन समाज 'जैनमित्र' का एक और प्रकारसे आभारी है कि उसने अनेक उत्तम जैन कवि और लेखक उत्पन्न किये हैं उनकी प्रथम कृतियोंको स्थान देकर; जिससे वे उत्साह पाकर आगे बढ़ सके हैं।

हम श्री जीसे प्रार्थना करते हुए आशा करते हैं कि वर्तमान सम्पादनमें "जैनमित्र" अपनी शताब्दि भी इससे अधिक सफलताके साथ मनायेगा तथा चिरकाल तक मानव समाज ही नहीं जीव मात्रकी सेवा करता रहेगा क्योंकि जैन धर्म कोई व्यक्ति या जाति विशेषका धर्म नहीं; वह सार्व धर्म है।

शुभ कामना

जैनमित्र समाजका क्रांतिकारी अग्रदूत है और युवकोंका सहारा बनकर उनके पथका प्रदर्शन करता है। निर्भीकताका डंका बजाता हुआ सावधान करता है और कुरीतियोंका गढ़ तोड़नेमें हथौड़ेका काम करता है। उसने समाजके हर वर्गको उठानेमें पूरा सहयोग दिया है, अतः मैं ऐसे पत्रकी हृदयसे उन्नति चाहता हूँ और वीर प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ कि यह पत्र समाजको सावधान करनेमें अग्रसर हो।

—पातीराम जैन शास्त्री अहारन, आगरा।

जैन संस्कृतिमें "जैनमित्र"

ले०—पं० भैयालालजी 'कौशल' काव्यतीर्थ, आयुर्वेदाचार्य, मुहारी।

हीरक जयन्ति अंकके लिए कुछ लिखूं ऐसी प्रेरणा जैनमित्र सम्पादक महोदयकी उस समय प्राप्त हुई जबकि दीपक ज्योतिसे प्रासादोंको जगमगा रहे थे। एक प्रासादके अन्धकारमय पृष्ठ भागको एक तरुण दीपककी ज्योतिसे अगणित दीप समूहोंको प्रकाश दान दे रहा था। देखते ही स्मृतिके प्रकाश पुंजसे हृदय आनन्द विभोर होकर विचारने लगा कि संस्कृतके संरक्षणमें अज्ञान अन्धकारको दूर करनेके लिए एक ही व्यक्तिका सफल प्रयत्न कितना अर्थ पूर्ण होसकता है वह विफल नहीं होता। ठीक उसी प्रकार एक "जैनमित्र" ने अपने साठ वर्षके निरन्तर प्रयत्नसे समाजके अज्ञान अन्धकारको दूर करनेका जो दीप शिखाकी भांति सफल प्रयत्न किया है वह उसकी व्यापकताका सबल प्रमाण है, "जैनमित्र" ने जैन संस्कृतिकी रक्षाके हेतु समय २ पर समाज सुधारक तत्वोंका निर्माण कर दस्सापूजनाधिकार, अन्तर्जातीय विवाह प्रचार, बाल-वृद्ध अनमेल विवाह, मृत्युभोजन, दहेज प्रथा आदि भयंकर कुरीति निवारण, अजैनोंको जैन बनानेका साहित्य प्रचार, भाईको भाई बतानेका सांस्कृतिक व्यापार, लेखक और कवियोंको जीवन शक्तिका दान, प्राणी मात्रमें सांस्कृतिक सुरुचि जागृतकर समाजमें चेतना शक्तिका संचार करना एक मात्र "जैनमित्र" का कलापूर्ण जीवन शक्तिका समन्वय, समाजके सुधारक मानवोंसे छिपा नहीं है। "जैनमित्र" ने समय २ पर संस्कृतिकी रक्षाके लिए सृजनका कार्य किया इतना ही नहीं समाज विरोधी तत्वोंका विरोधकर संस्कृतिकी दशा किन तत्वोंसे बनती है इन साठ वर्षोंमें समाज संस्कृतिकी सृष्टि की है। जिसका यह "हीरक जयंति अंक" पाठकोंकी सेवामें गतिशील होता हुआ प्रस्तुत है।

मैं इस अवसर पर मित्रवत 'जैनमित्र'को श्री कापड़िया-जीको एवं यशस्वी लेखक श्री स्वतंत्रजीको अगणित श्रद्धांजलि प्रस्तुत करता हुआ उज्वल कामना करता हूं कि मित्र सांस्कृतिक दिशामें समाज नेतृत्व करनेमें समर्थ रहे।

शुभ कामना व सिंहावलोकन

[ले०: बाबूलाल हँसराज पहाड़े राजापुर।]

दिगम्बर जैन समाजकी अनवरत सेवा करनेवाला, बंबई दि० जैन प्रांतिक सभाका एक मात्र साप्ताहिक है "जैनमित्र"!

इस पत्रको कार्तिक सं० २४८५ को पूरे ६० वर्ष हो गये, अतः 'हीरक जयंती' मनानेके उपलक्षमें डायमंड ज्युबिलि अंक, बड़े ठाटबाटके साथ समाजकी सेवामें प्रस्तुत हुआ, अतः हर्ष ही है।

प्रथमबार स्व० पं० गुरु गोपालदासजी बरैयाजीने यह पत्र मासिक रूपसे प्रगट करके समाजोन्नति करनेवाला यह पौधा लगाया। जिसे क्रमशः पं० नाथूरामजी तथा ब्र० सीतलप्रसादजी इन्होंने अपनी सेवाएं देकर उस पौधेको हराभरा किया, और विशेषतः उन्हींकी प्रतिज्ञाको निभाते हुए अपनी लगन तथा तन, मन, धनसे सेवाएं

प्रदान करके आजतक चलाया है श्रीमान्जी एम० पे० कापडियाजी और पं० स्वतंत्रजीने । इनके द्वारा समाज उन्नति पथपर अग्रेसर है, आप सरल स्वभावी होनेसे पत्र द्वारा अर्थात् कलहदायक बातोंका अभाव है । एतदर्थ जैनमित्र लोकप्रिय हो गया है और भी मेरी समझसे निम्न बातें पायी जाती हैं ।

(१) नयेर उत्साह लेखक और कवियोंके लेख तथा रचनाओंमें त्रुटियां सुधारकर आप जहां तक हो सके लेख रचना प्रकाशित करते ही हैं जिससे नयेर लेखकोंका उत्साह बढ़ता है और रुचि भी बढ़ती है ।

(२) अंधश्रद्धा तथा कुरीतियोंके शिकार होनेसे धर्मभ्रष्ट होनेवाले भाई बहनोंके लिये पं० स्वतंत्रजीके आगम अनुसार आनेवाला सुविचार ।

(३) खाली नाम पर मर मिटनेवाले गजरथ पर लाखों रुपया व्यय करके नाहककी अर्थ हानि पर समय समय पर सम्पादक महोदयने समाजकी पर्वाह न करते हुवे सुझाये हुए ठोस विचार ।

(४) 'जैनमित्र' हर वर्ष समाप्ति पर कोई न कोई धर्मोपयोगी ग्रंथ ग्राहकोंको अवश्य भेंट देते हैं जिससे ग्राहकोंका बहुत आकर्षण ।

(५) डाकके उस भारके बाद भी अल्प मूल्यमें जैनमित्र नये २ ग्राहकोंको मिलनेकी सुविधा ।

(६) प्रतिवर्ष निकलनेवाला आकर्षक विशेषांक; तथा अन्तमें ।

(७) 'मानव, मानव बनें !!' इस प्रकारके और भी विषयोंपर जो पंडित स्वतंत्रजीकी ओरसे लेखमालाएं प्रकाशित होती हैं वह पढ़कर मनुष्य सचमुच अंधकारसे हटकर, उसके जीवनमें नया संचार पैदा हुवे बिना नहीं रहता !

जैनमित्रसे हमेशा प्रकाश मिलता रहे !

(स्व० [illegible] जैन '[illegible]' [illegible])

जै—न धर्मके मर्म प्रचारक, तुमसे पाकर अनुपम ज्ञान ।
न—ष्ट प्राय है जैन जगतकी, अज्ञकालिमाकी चट्टान ॥
मि—ष्ट मधुर संदेश लिए तू मौन दूत जन जनके पास ।
त्र—स्त मानवोंको पहुँचाता, तुष्ट किरणका नव उल्लास ॥
से—वा में सर्वत्र सदा रत हो चाहे दिन हो या रैन ।
ह—रदम व्याकुल तुम दर्श को सदा प्रतीक्षित रहते नैन ॥
मे—ल संगठनका समाजको, तुमसे मिला प्रबल उत्साह ।
शा—स्त्र पठनपाठन चिंतनको, तुमसे मिली सदा सराह ॥
प्र—थम पत्र तू जैन जगतके पत्रोंमें पत्रोंकी शान ।
का—लकी तमचादर निशिमें, चमक चन्द्रमा सम निर्मान ॥
श—रण गहे जिनपदमें हित है, इसका दिया सतत संदेश ।
मि—ष्ट परस्पर वीर क्षीरसम, इसका रखता ध्यान विशेष ॥
ल—हर क्रांतिकी मिटा कालिमा, खिलाया तूने रस बार ।
ता—राव लिसे दमक रहे हैं, तब अनुप्रेरित कवि कलाकार ॥
र—जत रश्मिसम जैनाचकका, करो प्रकाशित मानसलोक
हे—मित्रोंके जैनमित्र तुम, बिखरा क्षितिपर नव आलोक ॥

—:◇:—

जैनमित्रकी महान सेवा

[पं० पूर्णचन्द्र जैन, सुमन काव्यतीर्थ, दुग]

आजके नवोन्नतिके युगमें, जब कि सारे विश्वमें एक तरहका अशांत वातावरण चल रहा है शस्त्रोंकी होड़में दुनियाके इन्सानोंको पीसा जा रहा है, आकस्मिक बमों एवं राकेटोंके निर्माणने दुनियाको तबाह करनेका आमंत्रण दिया है। बरबस इन शस्त्रोंकी महाग्निमें झोंकनेके लिये लोगोंको मजबूर किया जा रहा है। ऐसे युगमें

भारतवर्ष एक ऐसा राष्ट्र है जो इन विक्षुब्ध युद्ध लोलुपी लोगोंको बारबार इस तबाहीसे बचाना चाहता है लेकिन मजबूरीकी भी हद होती है। कहीं विपरीत परिणाम भी हो सकता है कि युद्धाग्नि भारत-चीनसे प्रज्वलित हो, और कुछ भी हो, फिर भी भारत शान्तिका उपासक है सिद्धान्ततः यह सिद्धान्त बापूका है, कांग्रेस पार्टीका है।

शान्तिका अर्थ है सच्ची अहिंसाका पालन यह देन महात्मा गांधीको महावीर भगवानके संदेशसे प्राप्त हुई। उन महावीरकी अहिंसाके कुछ संकेतसे इतनी दुष्प्राप्य आजादी प्राप्त हुई। तब पूर्ण सिद्धांत पर चलनेवाला राष्ट्र कितना सुखी समृद्धिवान नहीं हो सकता! भारतवर्षमें इस सिद्धांतके पालनेवाले जैन हैं। जैन समाजने राष्ट्रोत्थानमें सदैव महान हाथ बटाया है। जैन समाजकी कुछ पत्रोंका काम भले ही लीपेपोत उठाते रहे हों, लेकिन जैन पत्रोंने जैन समाजको अद्भुत एवं सराहनीय बनानेमें कसर बाकी नहीं रखी। हम जैन पत्रोंमें जैनमित्रका ही इतिहास उठाकर देखें, हमारे जैन पत्रोंमें सबसे अधिक प्राचीन पत्र "जैनमित्र" ही है। इसने समय समयपर जैन समाजको नवयुग प्रदान किया।

जैन समाजमें फैली कुरीतियोंको तथा अंध विश्वास, दलबन्दीको मिटाकर शादी सुधार, मंदिर सुधार, दस्साधिकार, जाति सुधार आदि कार्य बड़ी सावधानी एवं जिम्मेदारीसे किया है। इसके लिये प्रमुख प्रशंसाके पात्र कापड़ियाजी ही है।

आज जो समाजमें लेखक, कवि नजर आते हैं उनको आगे बढ़ानेका श्रेय भी जैनमित्रको ही है साथ ही इसके सम्पादकोंको कापड़ियाजी, ब्र. शीतलप्रसादजी, पं० परमेष्ठीदासजी एवं स्वतंत्रजी आदिको है। वर्तमानमें स्वतंत्रजीकी तत्परता: कार्यकुशलतासे कितना महान कार्य हो रहा, यह निस्वार्थ सेवाभाव ही है।

अन्तमें बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाका यह प्रमुख पत्र है, उसके हम बहुत आभारी हैं जिसके द्वारा यह महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है।

जिनेन्द्रदेवसे प्रार्थना है कि "जैनमित्र" इसी तरह समाजकी सेवा करता हुआ कई हीरक जयंतियां मनावें।

श्रद्धाञ्जलि

यह जानकर हर्ष हुआ कि आप मित्रका हीरक जयन्ती अंक निकाल रहे हैं इसके प्रति मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि है जैन समाजमें मित्र सरीखा दूसरा कोई निर्भीक पत्र नहीं है। मैं इसका कई साल पहीसे ग्राहक हूं।

भगवानदास जैन शिवपुरी

शारीरिक स्वास्थ्य-संरक्षण

—: ले० :—
राजकुमार जैन म.रोह्ड शास्त्री

संसारके समस्त प्राणि जगत्में मनुष्यको एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। मानवकी यह विशेषता किसी अन्य कारणसे नहीं है, अपितु अन्य प्राणियोंकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ एवं विकसित मस्तिष्क ही उसकी विशेषताका प्रमुख कारण है। विज्ञानके भौतिकवादी एवं प्रगतिशील इस युगमें प्रकृति तथा भौतिकतापर विजय प्राप्त करनेका श्रेय मानवके उस विकसित मस्तिष्कको ही है जिसने उसे व उसके व्यक्तित्वको विशिष्ट महत्व प्रदान किया है। स्वस्थ एवं विकसित मस्तिष्कके अभावमें मनुष्यका जीवन पशुवत् पराधीन अथवा यन्त्र चलित पुर्जेके समान हो जाता है जिसके जीवनका न कोई निश्चित लक्ष्य रहता है और न ही उद्देश्यपूर्तिका कोई प्रयास। उसका जीवन उस बरसाती नालेके समान होता है जो निरुद्देश्य बहकर किसी बृहत्काय नदीके गर्भमें विलीन हो जाता है और हमेशाके लिए उसका अस्तित्व उसी नदीमें अन्तर्हित हो जाता है। अतः उपर्युक्त आधारपर यदि यह कहा जाय कि "मस्तिष्कका विकास ही मानवका विकास है" तो अत्युक्ति न होगी।

यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि "स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मस्तिष्क रह सकता है, अन्यत्र नहीं।" अतः मस्तिष्कके विकास एवं स्वस्थताके लिए शारीरिक स्वास्थ्य संरक्षण अपेक्षित है। क्योंकि शरीरकी विकृतिका प्रभाव मस्तिष्क-पटल पर पड़े बिना नहीं रह सकता और कुप्रभाव पड़ने पर उसके विकास एवं स्वास्थ्य-संरक्षणमें व्यवधान होना स्वाभाविक है। अतः यह आवश्यक है कि मस्तिष्कको शरीरकी विकृतिके कुप्रभावसे संरक्षित किया जाय एवं उसके चारों तरफ स्वस्थ वातावरण प्रस्तुत करनेका प्रयास किया जाय। चूंकि प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है कि उसके मस्तिष्कमें किसी प्रकारकी विकृति या क्लान्ति उत्पन्न न हो। विशेषतः विद्यार्थियों एवं दिमागी कार्य करनेवालोंके लिए यह अत्यावश्यक है।

स्वस्थ मस्तिष्कके अभावमें अथवा मस्तिष्कमें किसी प्रकारकी विकृति उत्पन्न हो जाने पर विद्यार्थियोंके अध्ययनमें तथा दिमागी कार्य करनेवालोंके कार्यमें एक प्रकारका व्यवधान आजाता है, कार्य करनेमें रुचि नहीं रहती एवं मस्तिष्क शीघ्र ही क्लान्तिका अनुभव करने लगता है। ऐसी स्थितिमें यह आवश्यक है कि शारीरिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया जाय। क्योंकि "स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ मस्तिष्कका आधार है।

यदि आप चाहते हैं कि आपका शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम रहे, शारीरिक शक्तिमें भी निरन्तर वृद्धि होती रहे एवं आपका शरीर स्वस्थ, सुन्दर, सुगठित व निरोग रहे तो आपको चाहिए कि आप प्राकृतिक देन स्वरूप इस शरीरको प्रकृतिके नियम विरुद्ध आचरण न करने दें। नैसर्गिक नियमोंके अनुरूप ही इसे प्रकृतिके ढांचेमें ढलनेका प्रयास करें। आहार-विहारका पूर्ण ध्यान रखें तथा

आहार-विहारके साथ ही साथ समय एवं तदनुसार परिवर्तित तात्कालीन प्रयुज्यमान तत्तत् द्रव्योंका ध्यान रखना भी अत्यावश्यक है। क्योंकि समयके साथ-साथ पदार्थ एवं आहार-विहार भी परिवर्तित होता रहता है। प्रकृतिकी यह अनुपम व्यवस्था मानव समाज एवं उसके स्वास्थ्य-निर्माण तथा सुरक्षाके लिये अद्वितीय है।

हमारे दैनिक जीवनमें कुछ ऐसे कारण आते हैं जो शरीरमें विकृति उत्पन्न कर उसे अस्वस्थ बना देते हैं, जिसका कुप्रभाव मस्तिष्क पर पड़े बिना नहीं रहता। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे कारण भी हैं जो सीधे मस्तिष्कको प्रभावित करते हैं। इनमेंसे कुछ कारण निम्न हैं—

हमारी दिनचर्याकी अव्यवस्था, प्रकृति तथा स्वास्थ्यके अनुकूल खाद्यान्नका अभाव, पर्याप्त यथोचित प्राकृतिक क्रियाओं (व्यायाम, आतप सेवन, शुद्ध वायु सेवन, मालिश आदि) का सम्यक् रूपेण प्रतिपादन न करना तथा स्वास्थ्य एवं शरीर रक्षा सम्बन्धी नियमोंसे अनभिज्ञ रहना आदि।

इसके अतिरिक्त दूषित वातावरणमें विचरण, दूषित भावनाओंसे व्याप्त मस्तिष्क, दूषित विचारोंका चिन्तन तथा उत्तेजक एवं स्नायु मण्डलको हानि पहुँचानेवाले पदार्थोंका अतिमात्रामें सेवन करना आदि। उपर्युक्त कारणोंसे शरीर और मस्तिष्क दोनों ही प्रभावित होते हैं। अतः शारीरिक स्वास्थ्य एवं मस्तिष्कके विकासके लिए आवश्यक है कि उपर्युक्त कारणोंमें यथोचित संशोधन कर त्याज्य कारणोंका परित्याग किया जाय।

स्वास्थ्यका ज्ञान—स्वास्थ्य-संरक्षणके लिये यह भी अत्यावश्यक है कि स्वास्थ्यके मानदण्डका सम्यक् ज्ञान हो। अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं जो मात्र केवल शारीरिक स्थूलताको ही स्वास्थ्य एवं कृशताको अस्वास्थ्य समझ बैठते हैं। किन्तु वस्तुस्थितितः वे स्वास्थ्य-ज्ञानसे सर्वथा अनभिज्ञ हैं। वे नहीं जानते कि स्वस्थ पुरुष कौन, अस्वस्थ पुरुष कौन है? तथा स्वास्थ्यकी क्या परिभाषा है? मात्र केवल शरीरकी स्थूलता अथवा कृशता ही शरीरकी स्वस्थता या अस्वस्थताकी द्योतक नहीं है। स्वस्थ पुरुष तो वह है जिसकी पाचन क्रिया सम हो, भोजन निर्विघ्नरूपसे पच जाता हो क्योंकि भोजनके ही सम्यक् परिपाकसे शरीर स्थित रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा तथा शुक्र इन सात धातुओंकी क्रमशः पुष्टि होती है।

भुक्त पदार्थका पाक होनेके पश्चात् वह दो भागोंमें विभाजित हो जाता है। सार एवं मल। सार भाग द्वारा शरीरमें क्रमशः सातों धातुओंकी पुष्टि होती है एवं मल भाग शरीर स्थित नौ महास्रोतों व रोम छिद्रोंसे शरीरके बाहर निकाल दिया जाता है।

इस प्रकार यह क्रम प्रतिदिन चलता रहता है। इसके अतिरिक्त जिसका मन सदैव पुष्प सदृश विकसित एवं प्रसन्न रहता हो, जिसकी मलमूत्र आदिकी विसर्जन क्रिया निर्विघ्नरूपसे होती हो, जिसकी रस, रक्तादि सातों धातुएं स्वास्थ्य एवं परिपुष्टि हों, जिसकी दैनिक चर्यामें किसी प्रकारकी अव्यवस्था न हो, जो व्यक्ति नित्यप्रति प्रातःकाल व्यायाम, आतप-सेवन, शुद्ध वायु सेवन, तैल मर्दन आदि क्रियाएं करता हो तथा जिसका आहार विहार प्रकृतिके अनुकूल हो, वही व्यक्ति स्वस्थ एवं निरोग है।

आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें स्वस्थ पुरुषका बहुत अच्छा वर्णन है! महर्षि सुश्रुताचार्यजीने एक स्थान पर लिखा है—

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥

अर्थात्-जिसके दोष (वात, पित्त, कफ) सम हों। किसी भी दोषका क्षय अथवा प्रकोप न हो। जठराग्नि-

सम हो तथा जिसके आत्मा, इन्द्रिय और मन प्रसन्न हो वही स्वस्थ कहलाता है।

स्वास्थ्यकी नियमित स्थिति तथा उसमें किसी भी प्रकारकी विकृतिकी अनुत्पन्नताके लिए स्वस्थ पुरुषको चाहिए कि वह नित्य प्रति शास्त्रोक्त विधिसे दिनचर्या, निशाचर्या तथा ऋतुचर्या आदिका दृढ़-कृतया आचरण करें। एक स्थान पर लिखा भी है—

दिनचर्यां निशाचर्यामृतुचर्यां यथोदिताम्।
आचरन् पुरुषः स्वस्थः सदा तिष्ठति नान्यथा॥

"शास्त्रोक्त दिनचर्या, निशाचर्या और ऋतुचर्याका आचरण करते हुए ही पुरुष स्वस्थ रह सकता है, इसके विपरीत आचरणसे नहीं।"

कभी आपने यह भी सोचा कि आप शीघ्र ही अस्वस्थ क्यों हो जाते हैं? यदि इस विषय पर सूक्ष्मतासे विचार किया होता तो सम्भवतः अस्वस्थताको पुनः आपके शरीरमें प्रवेश करनेका अवसर न मिलता। यह तो एक स्वाभाविक तथ्य है कि मनुष्य आजकल अच्छी आदतोंकी अपेक्षा बुरी आदतोंका शिकार बड़ा जल्दीसे हो जाता है, यही बात आपके स्वास्थ्यके विषयमें भी चरितार्थ होती है। स्वस्थता एक अच्छी वस्तु है अतः उसका प्रभाव शरीर पर कुछ विलम्बसे होता है किन्तु अस्वस्थता एक हेय एवं अहितकर वस्तु है, अतः उसका प्रभाव शरीर पर शीघ्र ही दृष्टिगत होता है।

इसके अतिरिक्त किसी वस्तुके विकासमें उतना समय नहीं लगता, जितना कि उसके निर्माणमें लगता है। मानवीय शारीरिक स्वास्थ्य भी ठीक इसी तरह होता है। एकबार स्वास्थ्य नष्ट हो जानेपर उसके नव-निर्माणमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है, इसके विपरीत स्वास्थ्य विनाशमें इतना समय नहीं लगता। क्योंकि मिथ्या आहार विहारके सेवन मात्रका कुप्रभाव जठराग्नि पर होता है तथा जठराग्निकी विषमावस्था ही रोगका प्रमुख कारण है। अतः आवश्यक है कि जठराग्निकी साम्यताके लिए उचित आहार विहारका सेवन किया जाय। तब ही सुस्वास्थ्यकी उपलब्धि हो सकती है, अन्यथा नहीं. और सुस्वास्थ्योपलब्धिके अनंतर ही हम अपने मस्तिष्कको स्वस्थ एवं विकासोन्मुख रख सकते हैं।

बधाई!

सन् १९६० के वर्षारम्भमें "जैनमित्र" ६० वर्ष व्यतीत होनेके उपलक्षमें "हीरक जयन्ती" अंक निकल रहा यह सोनेमें सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ हुई। सन् ६० में ६० वर्षके हीरक जयन्ती अंककी मैं पूर्ण सफलता चाहता हूँ। आपने अपनी अनुभव पूर्ण शैलीसे मित्रके द्वारा जो सेवायें की उसके लिये समाज ऋणी रहेगा। स्वतंत्र जैसे सपाही व अपूर्व सेवकने तो चार चांद लगा दिये। आपकी लेखनीको पाठकोंको सुरुचिपूर्ण। है हम "जैनमित्र" चिरायु रहे तथा भविष्यमें दोजके चन्द्रमाकी भाँति वृद्धिको प्राप्त हो ऐसी बारम्बार प्रार्थना करते हुये—मंगल कामना करते हैं। —सुमतलाल जैन सा० त्रिलोकचन्द मि० बांदोल (बांसवाड़ा)

'जैनमित्र'का सार्थक नाम क्यों?

पं० कपूरचन्द जैन
बरैया, एम. ए. लश्कर

'दिगम्बर जैन'में ज्यौंही यह समाचार पढ़नेको मिला कि 'जैनमित्र'की 'हीरक जयन्ती' मनाई जानेवाली है त्योंही हृदयमें एक अद्भुत आश्चर्य तथा आनन्दका ठिकाना न रहा। आश्चर्य तो इस बातका हुआ कि जैन जगतमें शायद यह प्रथम ही अवसर है जबकि आज एक पत्र अपने ६० वर्षके जीवनमें तमाम कठिनाइयोंके बावजूद भी अपना अस्तित्व बनाए हुये है और आनन्द यों हुआ कि आखिर वह चिर प्रतीक्षित समय आ ही गया जबकि एक योग्य पत्रको उसके योग्य पुरस्कार मिलना ही चाहिये, जो बहुत कम पत्रोंको नसीब हो पाता है।

इसका कारण, जहांतक मैं समझता हूं, समय २ पर उसके योग्य संपादकका होना है। स्वनामधन्य आज पंडित गोपालदासजी बरैयासे ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी, श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया तक जैनमित्रकी अनवरत सेवा किसी भी हालतमें भुलाई नहीं जा सकती। दि० जैन समाजका सही मायनोंमें सच्चा प्रतिनिधित्व करनेवाला यह एक निर्भीक पत्र आज भी समाज सेवाके क्षेत्रमें अपनी अनूठी शान लिये हुये सजग व प्रगतिशील है।

जैनमित्र समाजका प्राचीन पत्र है। जैनोंका मित्र वही हो सकता है जो समाज तथा धर्मकी पवित्र भावनाओंको हृदयमें संजोये हुये हो, जो एक कदम आगेकी ओर बढ़ना जानता हो, पीछेकी ओर मुड़ना उसका काम न हो। इस कसौटीपर जैनमित्र' खरा उतरता है। जैन समाजमें होनेवाले सभी तरहके सामाजिक तथा सामयिक समाचार यदि कहीं एक जगह पढ़नेको मिल सकते हैं तो इसका एक उत्तर होगा 'जैनमित्र।' छोटेसे छोटे लेखकसे लेकर बड़े लेखक तककी रचनायें इस पत्रमें आपको कभी न कभी पढ़नेको मिल जायेंगी।

इस तरह इस पत्रने आरम्भसे लेकर आजतक न मालूम कितने कुशल लेखकों, कवियों व कलाकारोंको जीवन दिया है जिसका लेखा जोखा करना वर्तमानमें असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। समाजका शायद ही कोई ऐसा लेखक बचा हो जिसकी कुछ न कुछ रचनाएं इस पत्रमें प्रकाशित न हुई हों।

प्रत्येक वर्ष अपने ग्राहकोंको लाभान्वित करना 'जैनमित्र'की विशेषता रही है। उपहार ग्रंथ भेजकर ग्राहकोंकी संख्या बढ़ाना, पत्रको नियमितरूपसे प्रकाशित करके उसे ग्राहकोंके हाथमें पहुँचाना तथा इस बढ़ती हुई मँहगाईके युगमें भी वार्षिक मूल्य वही कायम रखना इसकी लोकप्रियताके प्रतीक हैं। इसका अधिकांश श्रेय पत्रके वर्तमान संपादक श्रीयुत् कापड़ियाजीको है जो वयोवृद्ध होते हुये भी पत्रको प्रगतिशील बनानेमें सदैव सचेष्ट दिखाई पड़ते हैं जिसके लिये आपको जितना धन्यवाद दिया जाय थोड़ा है।

'हीरक जयन्ती'के इस पुनीत अवसरपर हम पत्रकी हार्दिक उन्नति चाहते हैं तथा आशा करते हैं कि भविष्यमें भी वह इस तरह ही राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक दलबन्दीसे दूर रहकर, देश, धर्म, समाज और साहित्यसेवाके क्षेत्रमें अग्रणी रहे, इसी शुभ कामनाके साथ यह लघु काय लेख आपकी सेवामें प्रेषित करते हैं।

समस्त जैन समाजको

हार्दिक अभिनन्दन

समयपर कपड़ा तैयार मिलना, उत्तम सिलाई होना, मनुष्यकी आकृतिके माफक बराबर फिटिंग होना

प्रॉ. सज्जनलाल जैन
घांघोलवाला

और भी सिलाईकी हर प्रकारकी सुविधाओंके लिये

—: हर प्रसंगपर याद रखें :—

शेठ एन्ड कंपनी

जेन्टस् टैलर्स

६६ दादी शेठ इग्यारीलेन, मनहर बिल्डिंग, बम्बई नं० २.

प्रभावनाका प्रहरी

लेखक—पं० सुमेरुचन्द्र दिवाकर, न्यायतीर्थ शास्त्री, धर्मदिवाकर B A LL B. सिवनी (म० प्र०

जैनमित्रके सञ्चालक, सम्पादक, प्रचारक अथवा प्राणस्वरूप वृद्ध भद्र परिणाम कापड़ियाजीने कहा कि पत्रकी हीरक जयंती है, उसमें कुछ सन्देश और शुभ कामना तो अवश्य भेजें।

मैं सोचमें पड़ गया, जैनमित्र है क्या? वह कुछ कागजोंका समुदाय है, जिस पर प्रायः श्यामवर्णकी स्याही द्वारा कुछ बातें छापा करती हैं। साठ वर्ष पूर्व जैन समाजके महाविद्वान, परम उपकारी, वादिगज केशरी, स्याद्वाद-वारिधि गुरु गोपालदासजीने इस जैनमित्रको जन्म दिया था। उन महाज्ञानी पंडितराजने सोचा था कि धर्मकी प्रभावनाके लिए वाणीके सिवाय लेखनीका भी समुचित उपयोग आवश्यक है। अकबरने लिखा है-

खिंचो न कमानोंको न तीर निकालो।

गर तोप है मुकाबिल तो अखबार निकालो॥

प्रत्येक व्यक्तिके पास पहुंचकर धर्मकी तथा कल्याणकी बात सुनानेका इस यांत्रिक युगमें सुसम्पादित समाचार पत्र सुन्दर साधन है।

गुरुजीने इस पत्रके माध्यमसे वीतराग धर्मकी ध्वजा फहराई थी। आजके युगमें बहुत बड़े पत्र विपुल धनराशिके द्वारा चलाए जाते हैं। वे पत्र प्रायः काम, क्रोध, हिंसा, प्रचुर आर्तध्यान तथा रौद्रध्यानकी वृद्धि करते हैं। उनका पठन पाठन मनको मोक्ष मार्गसे विमुख बनाता है। वे पत्र यह नहीं जानते कि जन्म, जरा तथा मृत्यु जनित तापसे बचानेका एक मात्र उपाय आत्मदर्शन, आत्मबोध, तथा आत्मनिमग्नता है।

इस आत्म स्वरूप तथा आत्मगुणोंकी चर्चा एवं चर्चाका सन्देश-वाहक कौन है? इस प्रश्नका उत्तर साठ वर्षकी वयवाला जैनमित्र देता हुआ आपसे विनय-पूर्वक कहता है, कि कभी "विचारपूर्ण और कभी कषाय अथवा मोहवश भूलभरे भी कार्य मुझसे बने हैं, मेरे अनेक सार्थीपत्र पैदा हुए और मृत्युकी गोदमें समा गए। मैं भगवान जिनेन्द्रके सन्देशको यथा शक्ति, यथा साधन, तथा यथामति समाजके समक्ष उपस्थित करता रहा हूं।

भूल किससे नहीं होती। मैं भी भूलोंका भंडार रहा हूं। मुझे अपना प्रेम, आशीर्वाद तथा सहयोग दीजिए कि मैं धर्म प्रभावनाके कार्यमें वर्धमान होकर वर्धमान प्रभुकी देशनाको मानव समाजके पास पहुंचाकर उसे उनका कर्तव्य बताता जाऊं।"

हम चाहेंगे कि जैनमित्र धर्मकी प्रभावनाका अग्रदूत बन। स्वस्थ विचार तथा स्वस्थ जीवनका सन्देश प्रेममयी भाषामें देता रहे। यह धर्मका प्रहरी युग सुलभ पाप पूर्ण प्रवृत्तियों वाले साधनोंके कुचक्रसे बचता हुआ जिनधर्मके आयतनोंकी रक्षामें सतत उद्योगी रहे। अज्ञान, अश्रद्धा और असंयमके रोगियोंको आगमानुसार औषधि देता रहे।

जैनमित्रकी हीरक जयंति मना रहे हैं यह खुशीकी बात है। जैनमित्रने जैन समाजकी बहुत सेवा की है। ब्र० जीकी सेवासे तो किसी प्रकार भी उऋण नहीं हो सकतीं। मेरी ओरसे शुभ कामनायें स्वीकार कीजिये।

पन्नालाल जैन अग्रवाल, दिल्ली।

जैन पत्रोंमें "जैनमित्र" का स्थान

पं० [illegible] जैन,
न्यायतीर्थ [illegible]।

जैन समाज एक शिक्षित समाज तथा औरोंकी अपेक्षा अब भी धनिक समाजमें गिना जाता है, किन्तु इस समाजमें पत्रोंकी दशा अति दयनीय है। आज तक इस समाजमें कोई दैनिक पत्र प्रकाशित नहीं हो सका। आजका युग पत्रोंका युग है, नगर और ग्राम सब जगह पत्र पहुंच रहे हैं। लोगोंको भोजन चाहे न मिले पर पत्र अवश्य मिलना चाहिये।

कुछ साप्ताहिक पत्र और मासिक पत्र अवश्य निकल रहे हैं, पर उन्हें भी सन्तोषदायक नहीं कह सकते। क्योंकि मासिकपत्र या तो जाति सम्बन्धी होते हैं, सर्व साधारणसे उनका कोई लगाव नहीं होता या केवल विज्ञापन मात्र होते हैं।

श्री पं० नाथूरामजी प्रेमीके कालमें अवश्य जैन हितैषी अच्छा पत्र निकलता था, जिसमें कुछ सर्व साधारणके भी पढ़ने योग्य सामग्री रहती थी।

साप्ताहिक पत्रोंमें दि० जैन समाजमें १—जैनमित्र, २—जैन दर्शन ३—जैन संदेश, ४—वीर, ५—जैन गजट पत्र दि० जैन समाजमें साप्ताहिक निकल रहे हैं। पर इनका यदि विश्लेषण किया जाय तो वीर तो कभी २ ही दर्शन देता है यद्यपि इसके संपादक मण्डलमें बड़े विद्वान हैं किन्तु धर्मप्रचारकी भावना न होनेसे खर्च ही अधिक रहता है जिससे यह बंद ही रहता है।

(२) जैन गजट समय पर तो निकल जाता है किन्तु उसमें पौराणिक या एकाध गूढ़ लेखके सिवाय सर्व-साधारण योग्य पठन सामग्री कुछ नहीं रहती।

(३) जैन दर्शनके भी संपादक आदरणीय विद्वान महोदय हैं किन्तु आपकी विद्वानोंके मनोमालिन्य और उनका येनकेन प्रकारेण उत्तर देना ही इसका लक्ष्य रहता है।

(४) जैन संदेश औरोंसे अच्छा है किन्तु अब उसमें भी प्रायः प्राप्ति-स्वीकार, शंका समाधान, भ्रमण व देशक आदि बहुतसी बातें ऐसी होती हैं कि सर्व-साधारण की कहे विद्वान भी पढ़नेका कष्ट नहीं करते।

(५) जैनमित्र एक ऐसा पत्र है कि उसके आरम्भके ४ पेजोंमें कुछ जैन समाजका दिग्दर्शन भले हो जाय वह भी नामको केवल रथयात्रा वेदीप्रतिष्ठा आदिकोंके समाचार भरे रहते हैं जैसे जैन समाजमें इनके सिवाय और कोई काम न हो, सबका ठीक रोजगार हो, कोई पीड़ित न हो रहा हो। इसके लेखोंमें इतनी गूढ़ता तो नहीं रहती, कुछ कुछ सामयिक रहते हैं किन्तु जो आदर्श और जैन समाजका सच्चा चित्र पं० गोपाल-दासजी और ब्र०जीके समयमें था वह अब नहीं दिखाई दे रहा है। कोई अजैन इन पत्रोंको लेकर क्या करेगा। पढ़ेगा तो जैन समाजके विकृत रूपके ही दर्शन होंगे यदि जैनमित्र कुछ आवश्यक सुधारकी ओर ध्यान दे तो वह जैन समाजका आदर्श पत्र बन सकता है।

(१) प्रत्येक जिलेमें कमसे कम एक एक संवाददाता नियत करे उसके लिये पोस्टेजकी सुविधा दे तथा वह भेजे तो शायद इसमें सफल हो सके।

(२) पत्रमें लम्बे लेखोंको स्थान न दे किन्तु सम्पादक स्वयं टिप्पणियोंका निर्माण करे।

(३) पत्रमें अधिकांश पृष्ठ समाचारोंसे भरे हों और उन समाचारोंके आधारसे योग्य सम्पादक आवश्यक और छोटी टिप्पणियोंको लिखा करें। कोई एक संपादकीय स्तंभ 'लेख' भी हो सकता है जो बहुत बड़ा न हो उपयोगी हो समाजकी दशा बतानेवाला और उसका मार्गदर्शक हो।

जिस प्रकार अन्य दैनिक पत्र समाचारों, लेखों, टिप्पणियों, संपादकीय वक्तव्यों, मुख्य शीर्षकोंका निर्माण करते हैं उस ही प्रकार छपें।

(४) पत्रमें उन बातोंको जो अन्य पत्रोंमें होती है, या शास्त्रीय चर्चासे भरी रहती हैं बिलकुल न छापें तो स्वाध्याय प्रेमियोंके ही लिये रहने दें।

(५) जहां तक हो आपसकी विवादकी बातें न छापें कभी छाप भी दें तो उत्तर प्रत्युत्तरके झगड़ेमें न पड़ें।

(६) दीपावलि, दशहरा, रक्षा बन्धन आदिपर जिन्हें सर्वसाधारण जानता है, लेख न लिखें जबतक आवश्यक नहीं एकाध टिप्पणी दे दें।

तात्पर्य लिखनेका यही है कि जैनमित्रमें वह जीवन शक्ति अब भी है और आगे बढ़ सकती है, यदि वह सर्वसाधारण ग्राम शहर, निर्धन धनी, विद्वान सबके पढ़ने योग्य सामग्री दे। देशके समाचार विदेशके समाचारोंके साथ आधा पत्र जैन समाचारोंसे भरा हो। वह भी केवल रथयात्राके नहीं जैन समाजकी असली दशाको दिखानेवाले हों। जिससे जैन समाजको जीवन-दान मिल सके, तथा अन्य अजैन लोग भी उसे अपना सकें।

जैनमित्रकी लोकप्रिय सेवा

[ले०—पं० मनोहरलालजी प्रतिष्ठाचार्य, बम्बई]

मुझे यह जानकर हर्ष होता है, कि जैनमित्रकी समाजसेवा योजना स्वरूप ६० वर्ष पूर्ण पर डायमंड जुबलीअंक श्री दि० जैन बम्बई प्रांतिक सभा द्वारा प्रकाशित हो रहा है। समाजमें बढ़े हुवे मिथ्यात्व और अज्ञान अन्धकारको नष्ट करनेके लिये श्री दानवीर सेठ मा० माणकचन्दजीकी सत प्रेरणा से सबसे प्रथम जैन पत्रोंमें जैनमित्रका ही मासिकरूपमें जन्म हुआ था। जिसके प्रथम सम्पादक प्रकाण्ड विद्वान पं० गोपालदासजी बरैयाजी थे। जिनकी लेखनी द्वारा समाजको तत्वबोध प्राप्त होता था। समाजमें इसकी चाहना बढ़ने लगी जिसके फल-स्वरूप मासिकरूपसे परिवर्तन होकर पाक्षिक रूपमें अनेक ग्रन्थोंके टीकाकार विद्वान ब्र० शीतल-प्रसादजी द्वारा सम्पादन हुआ। जिनकी विशुद्ध लेखनीने समाजके घोर अज्ञान रूढ़ियोंका मर्दन कर सन्मार्ग प्रकाशित किया और भी विद्वानों द्वारा सम्पादन कार्य हुआ इससे समाजमें दिन प्रतिदिन जैनमित्र लोकप्रिय बनता गया और फल स्वरूप पाक्षिक से साप्ताहिक रूपमें समाजके सामने उपस्थित हुआ वर्तमान कालमें भी वयो-वृद्ध श्री सेठ मूलचन्दजी किसनदासजी कापड़िया सूरतके सम्पादकत्वमें श्रीयुत पं० ज्ञानचन्दजी स्वतन्त्रजीकी मार्मिक लेखनी द्वारा समाजको लाभ मिल रहा है, समाजकी हलचल, धर्मसे सावधान, राष्ट्रीय समाचार आदि सभी सामग्रियोंसे परिपूर्ण नियमित रूपसे समाजको लाभ कारी प्राप्त करता रहता है, इन्हीं कारणोंसे समाजमें प्रिय बना हुआ है, सभी लोग भाई-बहनें नये अंक पढ़नेके इच्छुक रहते हैं। इस कलिकालमें धर्म प्रचार

जैनमित्रके प्रति....

पं० बा[illegible]लाल जैन, काव्यतीर्थ,
सा[illegible]मल।

जैनमित्रकी सेवाओंका वर्णन करना मुझसे बहुत ही कठिन है परन्तु मेरे अनुभवसे जब मैं केवल १२ वर्षका लड़का था। कुलसे शिक्षा लेकर अपने यहांकी प्रसिद्ध संस्था श्री महावीर दि० जैन पाठशालामें अध्ययनके हेतु आने लगा तो कुछ मेरे भाई अपना परीक्षाफल देखने महावार प्रति शनिवारको जाया करते थे और अपने फलको देखकर बड़े प्रसन्न होते थे तब मेरे दिलमें भी संकल्प हुआ करते थे कि अगले वर्ष मेरा नाम भी जैनमित्रमें छपेगा तबसे मेरे लिये जैनमित्रके विषयमें कुछ जानकारी हुई थी।

इसके बाद मैं जब कभी पाठशालामें जैनमित्र आता था उसको कभी२ देखा करता था। एक दिन जैनमित्र पढ़ते२ मैंने 'जैन नित्य पाठ गुटका' जो कि द्वारा सेठ ओंकारमल बैजनाथजी सरावगी कलकत्ताकी ओरसे वितरण किये गये थे उसकी विज्ञप्ति मैंने देखी और देख कर मैंने एक पोष्ट-कार्ड डाला तो मेरे नामसे गुटका शीघ्र ही आ गया तब मेरा दिल फूला नहीं समाया और जैनमित्रके प्रत्येक अंकको भलीभांति पढ़ने लगा और पढ़ते २ आज मेरी जैनमित्रके प्रति इतनी अधिक अभिलाषा रहती है कि अगर कोई अंक पढ़नेको न मिले तो मैं उसको कहींसे खोजकर अवश्य ही पढ़कर फेर दूंगा।

इसके संपादक श्रीमान् कापड़ियाजी एवं इनके सहयोगी श्री पं० स्वतन्त्रजी (जिनसे मेरा साक्षात् परिचय तो नहीं है) किन्तु इनकी चतुर्मुखी सेवायें जैन संसारमें चारों ओर विस्तृत है इसीसे मैं केवल नामसे ही परिचित हूं इनके ही प्रबल कन्धों पर जैनमित्रका विशाल भार है यही कारण है कि यह आज अपने ६० वर्ष पूर्ण करके अपनी जयन्ति मनानेमें सफल हो रहा है उन्हींके अनवरत परिश्रम अटूट सेवाभाव और अविश्रांत लगनने इसे इतनी लम्बी अवधि तक अनेक विघ्न बाधाओंको सहन करते हुये भी जीवित रक्खा और इतनी लम्बी ६० वर्षकी आयु पर पहुंचाया, अपने निजी प्रेस पुस्तक गजट आदिका कार्य करते हुये जैनमित्रके ऊपर आजतक वह आपत्ति नहीं देखी गई जैसे कि अन्य जैनपत्र चालू होते हैं और कुछ दिन बाद बन्द हो जाते हैं अथवा समय पर नहीं निकलते या आश्चर्यजनक कायापलट कर लेते हैं।

जब कभी समाजमें कोई धर्म, जाति, तीर्थ या मंदिर संस्था पर आपत्ति खड़ी हुई जैनमित्रने अपना बिगुल बजाया सबको सचेत किया यही नहीं जैनागमके

करनेके दोही तरीके सिद्ध हुये हैं, प्रथम विद्वानों द्वारा सदुपदेश और दूसरे पत्रों द्वारा बिना कष्टके थोड़े खर्चमें धर्म प्रचार होता है, महिला शिक्षणका भी जैनमित्र द्वारा काफी प्रचार हुआ है। जिसके फल स्वरूप बहुतसी बहनें सुशिक्षित दृष्टिगोचर होती हैं, अतः जैनमित्रकी उपकारताके लिये समाज ऋणी है, और रहेगी, अतः श्री वीर प्रभूसे प्रार्थना है कि सदैव जैनमित्र समाजका मित्र रह कर सेवा करता रहे, और समाज भी लाभ उठाती रहे। जयवीर॥
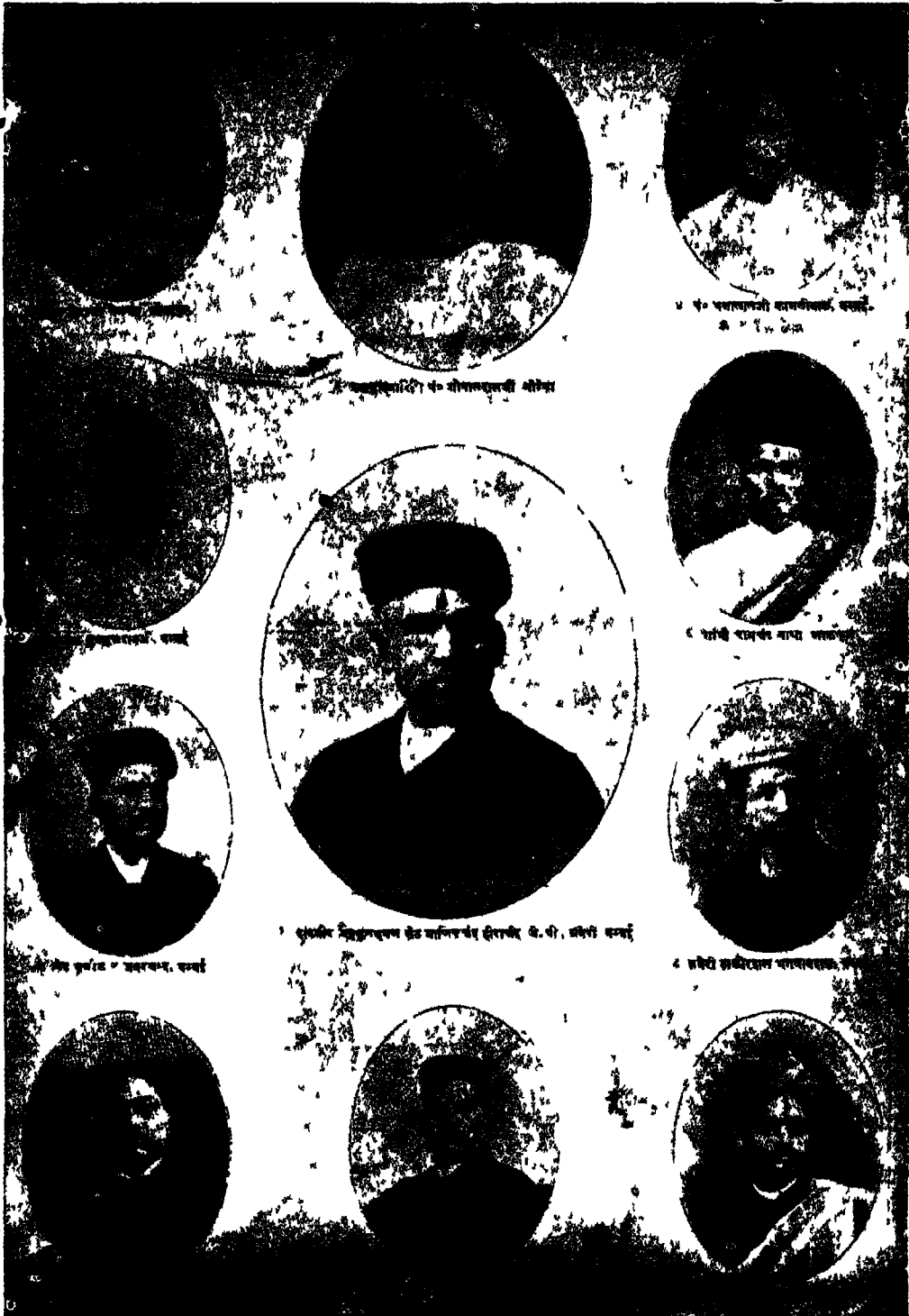
दिगम्बर जैन प्रांतिक सभा-बम्बईके भूतपूर्व कार्यकर्तागण।

'जैनमित्र' के ग्राहकोंको ६० वर्षोंमें जो छोटे बड़े ग्रन्थ उपहारमें दिये जा चुके हैं उनकी नामावलि। एक ग्राहक और उसकी वास्कटमें उसका दिग्दर्शन कराया गया है। इन ६० ग्रन्थोंका मूल्य २००) से कम नहीं है।

विरुद्ध बाली ग्रन्थोंका भण्डाफोड़-दस्सापूजाधिकार, अन्तर्जातीय विवाहका प्रचार, मरणभोज जैसी कुप्रथाओंका विरोध और गजरथ आदि प्रथाओंका डटकर विरोध किया है। यह कारण है कि बहुतसी कुप्रथायें आधुनिक युगमें धीरे२ बंद होती जा रही हैं इस तरहसे जैनमित्र जैनधर्म व जैन समाजका प्रिय पत्र है, इसकी सेवायें अधिक व अमूल्य वर्णनातीत है।

अन्तमें इसकी हीरक जयंति पर मैं जिनेन्द्रदेवसे प्रार्थना करता हूं कि मित्रकी उन्नति दिनदूनी रात चौगुनी हो और इसके सेवाभावी निःस्वार्थ सम्पादक श्री कापड़ियाजी चिरायु होकर देश व समाजकी भलाई करते हुये जैनमित्रकी उन्नति और अधिक करें।

—: जैनमित्रके प्रति :—

जैनमित्रके उपकारोंको मत भूलो।
इसके साथ बढ़ो अम्बरको भी छू लो॥
यह मानवको कुछ प्यार सिखाने आया है।
यह मानवताका पाठ पढ़ाने आया है॥
घर घरमें होने लगे अहिंसाकी पूजा—
यह ऐसा ही कुछ भला सिखाने आया है॥
श्री 'स्वतन्त्र' की सेवाओंको मत भूलो।
इनके साथ बढ़ो अम्बरको भी छू लो॥
कितनी कुरीतियोंसे लड़ता रहा सदा,
कितनी विपत्तियोंमें भी बढ़ता रहा सदा।
अन्यायके आगे हार नहीं इसने मानी,
भाई भाईमें प्यार बढ़ाता रहा सदा॥
'कापड़िया' का त्याग कभी न तुम भूलो।
उनसे शिक्षा लो ह्रेषता तुम भूलो॥
दुनियामें यह प्यार बसा देगा इक दिन—
जैन जातिको पुनः जगा देगा इक दिन।
भेद भावकी बुरी रूढ़ियां तोड़कर,
इस धरतीको स्वर्ग बना देगा इक दिन॥
जबलपुरके उन कांडोंको मत भूलो।
उनसे शिक्षा लो, नींवको तुम भूलो॥

—"प्रभात" जैन, सिरोंज।

'जैनमित्र' चला है आज, स्व-हीरक जयन्ती मनानेको

(रच० श्री सुलतानसिंह जैन, एम. ए. शामली)

'जैनमित्र' चला है आज,
स्व-हीरक जयन्ती मनानेको।
प्रेमी हृदयोंमें महावीरका,
साम्य भाव उपजानेको ॥जैनमित्र०॥

प्रकट होकर गुरुवारको,
घर घर यह जाता है।
जगके कोने कोनेके,
सन्देशोंके सुनानेको ॥ जैनमि० ॥
मित्रोंके अन्तर्भावोंको,
समादर यह प्रकट करता है।
तत्पर सदैव रहता पथ भ्रष्ट—
को, सुपथ पर लगानेको ॥जैन०॥
सामाजिक कुरीतियों-कुटेवोंको,
मिटाना ध्येय इसका है।
उपहार ग्रंथ भेंट करता प्रतिवर्ष,
घर घर ग्रन्थालय स्थापनको ॥जैन०॥
स्व-पाठकोंके हृदयोंमें,
नव-स्फूर्ति नव-जीवन भरता है।
जबसे आया 'कापड़िया' जी,
'स्वतंत्र' द्वारा सम्पादनको ॥जैन०॥

युग पुरुष श्री बरैयाजी

लेखक—
पं० ज्ञानचन्द्र जैन
'स्वतंत्र'—सूरत

[आज मैं एक ऐसे युग पुरुषकी ×जीवनी लिखने बैठा हूँ जिनका सम्पूर्ण जीवन जैन धर्मके निष्पक्ष प्रचार एवं प्रसारमें ही व्यतीत हुआ, और जनता क्षमताकी ढल छोड़कर अपने कर्तव्य पथसे अणुमात्र भी च्युत नहीं हुआ। जिसने जैन शिक्षण जो प्रसारमें एक प्रकारसे बुनियादी (पायाका) काम किया, जो जीवनभर कष्टों एवं मुसीबतोंसे झूझते रहे फिर भी वे शुद्ध स्वर्ण छकी तरह चमान बने रहे। अगर एक वाक्यमें कहा दिया जाये तो इसप्रकार कहा जा सकता है नैतिकता, प्रमाणिकता, निष्पक्षता एवं निर्भीकतासे जीनेके लिये जीवनको साधनकी खरी कसौटी पर ही कसते रहना उनके जीवनका सर्वांगीण प्रमुख उद्देश्य था। वे थे हमारे समाजके उज्ज्वल एवं चमकते सितारे—स्याद्वादवारिधि वादीगज-केसरी न्याय-वाचस्पति स्व० पं० गोपालदासजी बरैया] लेखक।

बरैया शब्दकी विशेषता

जिस प्रकार मुझे गांधी शब्दके सुननेसे स्व० राष्ट्र-पिता महात्मा गांधीजीका स्मरण हो जाता है, उसी प्रकार "बरैया" शब्दके सुननेसे पूज्य पं० गोपाल-दासजीका स्मरण हो जाता है। अन्तर इतना है कि गांधीजी और बरैयाजी दोनोंके क्षेत्र भिन्न२ थे। बरैया समाज पं० गोपालदासजीके कारण ही विशेष ख्यातिमें आयी और विश्रुत हुयी। हमारे युग पुरुष चरित-नायकका जन्म विक्रम सं० १९२३ के चैत्र मासमें आगरेमें हुआ था और आपका नाम "एछिया" था। आपके पिताजीका नाम लक्ष्मणदासजी और जाति "बरैया" थी। आपके पिताजीकी मृत्यु आपके बाल्य-कालमें ही हो गयी थी और आपकी माताजीने आपको हिंदी मिडिल एवं अंग्रेजी ६ वीं क्लास तक पढ़ाया था। इतना पढ़ लेना भी उस जमानेमें बहुत कुछ माना जाता था, यह तबका इतिहास है जिसे लगभग १०० वर्ष होने जा रहे हैं। तब और अब इन दोनोंमें उतना ही अन्तर है, जितना कि आकाश और पातालमें है। तब और अबके विषयमें मैं जान बूझकर अन्तर प्रदर्शन नहीं करना चाहता।

आप किसी भी भाषाको पढ़िये उस भाषाकी जो संस्कृति है उसका प्रभाव मन पर हुये बिना नहीं रहता, क्या किया जाये संस्कृतिका ऐसा ही प्रभाव होता है। अंग्रेजी पढ़े लिखे जिस पथके पथिक होते हैं उसी पथके पथिक हमारे पंडितजी थे। मौजशौक, खेलकूद, धूम्र-पान, गाना ये सभी कार्य पंडितजीकी दैनिक चर्यामें थे। आपने कौमार्य अवस्थाको पारकर युवावस्थाकी देहलीमें कदम बढ़ाया ही था कि (१९ वर्षकी अवस्थामें) अजमेरमें रेल्वे आफिसमें नौकरी कर ली तब आपको केवल १५) मासिक वेतन मिलता था तबके १५) आजके १००) के बराबर होते हैं।

पंडितजी यद्यपि युवा थे, पर वे नहीं जानते थे कि—

× धर्मोन्नति और जैन जागरणके आधार पर।

जैनधर्म क्या है? मंदिरमें दर्शन करने क्यों जाना चाहिये? और न उन्हें जैनधर्मसे इतना प्रेम ही था कि वे प्रतिदिन मंदिरमें दर्शनार्थ जाते। एकबार पं० मनोहरलालजी जो कि अजमेरमें ही रहते थे और जैनधर्मके अच्छे विद्वान थे उनसे पं०जीका परिचय होगया और पं० मनोहरलालजीने आपको जैनधर्मकी ओर आकर्षित किया। परिणाम यह हुआ कि बरैयाजीकी रुचि जैनधर्मकी ओर हुयी और इस रुचिके कारण ही आपने अनेक जैन ग्रन्थोंका स्वाध्याय किया और स्वाध्यायके द्वारा जैन धर्मकी वास्तविक जानकारी प्राप्त की। तब आपको लगा कि मैं पहिले अंधकारमें था। दो वर्ष रेल्वे ओफिसमें नौकरी की फिर छोड़ दी, और रायबहादुर सेठ मूलचन्दजी नेमीचन्दजी सोनीके यहां २०) माहवार पर नौकरी करली।

पंडितजीके जीवनकी अनेक विशेषतायें हैं, पर उनके जीवनकी प्रमुख विशेषता एक ही थी और वह यह थी कि वे हमेशा ईमानदारी एवं सचाईके लिये जीते थे। जहां सत्यताका निर्वाह नहीं होता था वहांसे बड़ेसे बड़ा पद भी ठुकरा देते थे, कल क्या होगा इसकी उन्हें चिंता नहीं रहती थी। पर वे सत्यका निर्वाह करनेमें वज्रसे भी अधिक कठोर थे। आपकी ईमानदारी और सत्यताका प्रभाव सेठजीके ऊपर विशेष पड़ा और वे बरैयाजी पर विशेष प्रसन्न रहते थे। इस प्रकार बरैयाजीने ७ वर्ष अजमेरमें ही नौकरी करते हुये व्यतीत किये और इधर आपकी स्वाध्याय प्रवृत्ति सतत् चालू ही रहती थी। स्वाध्यायके साथ आपने संस्कृतका थोड़ा ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था। अजमेरकी पाठशालामें आपने जैनेन्द्र व्याकरण, लघु सिद्धांत कौमुदी व्याकरणके ऐसे२ ग्रंथ और न्यायदीपिका (न्याय ग्रंथ) ये ३ ग्रंथ पढ़ लिये। गोम्मटसारका अध्ययन भी आपने यहीं प्रारंभ किया था, अजमेरके ख्याति प्राप्त पं० मथुरादासजी और जैन प्रभाकरके सम्पादक बाबू सेवारामजीसे आपका खूब ही मेलजोल रहता था।

कसौटी पर बरैयाजी

यह तो मैं पहिले ही लिख चुका हूं कि पूज्य पं०जी किसी भी मूल्य पर बेईमान बनकर नहीं जीना चाहते थे वे सत्यकी सुरक्षाके लिये अपना सब कुछ न्योछावर कर तो सकते थे, पर सत्यका गला नहीं घोट सकते थे। एकबार पं०जी एक प्रख्यात धनिक श्रीमानके साथ दक्षिण प्रांतकी जैन यात्रार्थ गये। फिर क्या! श्रीमानजी स्वयं ही पंडितजीकी विद्वत्ता एवं सत्यतासे प्रभावित थे और पं०जीको अपने साथ ले गये, यह घटना वि० सं० १९४८ की है। शास्त्र प्रवचनके साथ पं०जीको मुनीमीका कार्य व ऊपरकी देखरेख भी करना पड़ती थी। पं०जी जितने सत्यके उपासक थे उतने ही अचौर्य व्रतके भी।

एक टिकिटके साथ जितना सामान जा सकता था उतने सामानको छोड़कर और इसी हिसाबसे अतिरिक्त सामानका लगेज करवा लेते थे। साथके सभी यात्रियोंको बराबर सुविधा देते थे, कुली तांगेवालोंसे रुकर झिकर न कर उन्हें उचित किराया देते थे। पं०जी सतयुगकी मूर्ति भोले और सरल थे, कूटनीति और अवसरवादियोंकी निपुणतासे वे सर्वथा दूर रहते थे।

ईमानदार बरैयाजी

एकदिन किसी साथी चुगलखोरने सेठ सा० से शिकायत करदी कि, मालिक! आपके सामानका पं०जी लगेज करवाते हैं, यह तो ठीक नहीं है। श्रीमानको भी यह अच्छा नहीं लगा—मेरा सामान और तुल जाये यह तो मेरा अपमान है! सेठजीने पं०जीसे कहा—सामानका लगेज करवानेके लिये आपसे किसने कहा था, पं०ने कहा, कहेगा कौन! मेरी ईमानदारीने

कहाँ था। हमें ऐसी ईमानदारी नहीं चाहिये। तो आप अपनी नौकरी वापिस लेलीजिये। मैं अचौर्याणुव्रती राज्यकी या अन्य किसी प्रकारकी चोरी नहीं कर सकता। पं०जीने तत्काल नौकरीसे राम राम करली और नौकरी छोड़नेका उन्हें रंच मात्र भी रंज या गम नहीं हुआ।

कुशल व्यापारी बरैयाजी

इसके बाद बरैयाजी बम्बई आये और इधर उधर तलाश करनेपर आपको ४५) मं हवार पर ए० जे० टैंकरी नामकी यूरोपियन कं०में जगह मिल गयी। मुम्बईमें आपकी तबियत अच्छी तरह लग गयी और आपको यह स्थान अनुकूल हुआ। पं०जी कोरे पंडितजी ही नहीं थे पर हिसाब किताब रखनेमें भी अत्यन्त निपुण थे। जहां कतरब्योंतका काम चलता था वह स्थान आपके विचारोंके अनुसार अनुकूल नहीं हो सकता था। यूरोपियन कम्पनियोंमें एक २ पाईकी ईमानदारी आज भी बरती जाती है। हां, भारतीय कम्पनियोंमें यह चीज नहीं पायी जाती इसीलिये वे विदेशोंमें भी बदनाम रहती हैं। कम्पनीके मालिक आपके कामसे इतने प्रसन्न हुये कि आपका वेतन ४५) की जगह ६०) कर दिया। इसी बीच आपकी पूज्य मातेश्वरीका स्वर्गवास हो गया और आप बगैर छुट्टी लिये ही चले गये, परिणाम यह आया कि बरैयाजीको सब तरहकी सुविधाजनक नौकरीसे हाथ धोना पड़ा। लगी आजिविका छूट जानेसे मनुष्यको स्वाभाविक खेद होता ही है, पर ऐसी परिस्थितिमें भी बरैयाजी अपनी मनस्थितिको समान बनाये रहे थे।

आप पुनः बम्बई आये और सेठ गुलाबमल मूलचन्दजीकी फर्म पर नौकरी कर ली, कुछ समय बाद फिर आपको उसी यूरोपियन कं०में नौकरी मिल गयी जहां कि पहिले काम करते थे, पर अबकी बार आपने केवल १ वर्ष तक ही काम किया।

वि० सं० १९५१ में श्यामलालजी जौहरीके साथ जवाहरातकी कमीशन एजेन्टीका काम करने लगे। पर यह काम आपके अनुकूल नहीं हुआ कारण कि सत्य अचौर्य व्रतकी सुरक्षा न होते देख आप इस कमीशन एजेन्टीसे पृथक् हो गये! फिर गोपालदास लक्ष्मणदासके नामसे गल्लेका व्यापार किया, इसमें भी यथेष्ठ काम नहीं हुआ अतः यह व्यापार भी छोड़ दिया। उक्त दोनों कार्य बरैयाजीने छह२ मास ही किये थे। वि० सं० १९५२ में प० पन्नालालजी काशलीवाल (बरैया और काशलीवालकी जोड़ी प्रख्यात ही है) के साथ भागीदारीमें दलालीका काम करने लगे जोकि चार वर्ष तक बराबर चलता रहा, इसके बाद आप भागीदारीके बन्धनसे मुक्त होकर स्वतंत्र व्यवसाय करने लगे जो बराबर दो वर्षतक किया।

वि० सं० १९५८ में मोरेनामें बरैयाजीने आढ़तकी दुकान खोली, इसके पूर्व बम्बईके सेठ रामचन्द नाथाजी मालिक फर्म नाथारंगजी गांधीसे बहुत अच्छा परिचय हो गया और आपके साथ इनकी अच्छी प्रगाढ़ मैत्री थी, सेठजी धर्मात्मा सज्जन एवं सरल स्वभावी थे। ठीक ही है जहां आचार विचारोंकी समानता है वहीं मेल-जोल बाता है। अब बरैयाजी बम्बई छोड़कर मोरेना ही रहने लगे और ४ वर्ष तक आढ़तका काम किया। बरैयाजीने मोरेनामें जो आढ़तकी दुकान खोली थी वह सेठ नाथारंगजी गांधीकी भागीदारीमें ही खोली गयी थी, जब मोरेनामें उक्त दूकानसे कोई काम नहीं दिखा तो फिर नाथारंगजीने पं०जीको शोलापुर बुला लिया यह घटना सं० १९६२ की है। वहांपर पं०जी दो वर्ष

तक काम करते रहे, और बादमें मोरेना चले गये।

यहां पर बरैयाजीने गोपालदास माणिकचन्दके नामसे एक स्वतन्त्र आढ़तकी दूकान खोली। जहांतक मुझे स्मरण है कि माणिकचन्दजी पूज्य बरैयाजीके सुपुत्रका नाम है। इधर आढ़तकी दूकान चलती रही तो दूसरी ओर आपने यहीं पर "माधव जीनिंग" फेक्टरी लिमिटेड संस्थाकी स्थापना की। इस लिमिटेड कं० में बरैयाजीको बहुत भारी श्रम करना पड़ा। दो वर्ष बाद कई अनिवार्य कारणों वश आपने इस लिमिटेड संस्थासे भी सम्बन्ध छोड़ दिया और फिर सेठ नाथारंगजी गांधीके साथ काम करने लगे। वि० सं० १९७०–७१ में रायबहादुर सेठ कल्याणमलजी और इसके बाद रायबहादुर सेठ कस्तूरचन्दजीकी भागीदारीमें काम किया।

मैं पहिले यह लिखना भूल ही गया कि पूज्य बरैयाजीका सार्वजनिक जीवन बंबईसे प्रारंभ होता है। उपर्युक्त लेखमें तो मात्र यह बतलाया गया है कि पूज्य पं०जीने अपनी १९ वर्षकी अवस्थासे लगाकर ५१ वर्षकी अवस्था तक आजीविकाके लिये कहां २ व्यापार किया, कहां २ नौकरी की, किनकी भागीदारीमें काम किया आदि २ किन्तु पंडितजीके जीवनका जो उत्तरार्ध है वही विशेषतया महत्वपूर्ण है।

इसी उत्तरार्धमें आपने गोपाल सिद्धांत दि० जैन विद्यालय (मोरेना) की स्थापना की, 'जैनमित्र'के आ० सम्पादक रहे, दिगम्बर जैनसभा की स्थापना की, अनेक ग्रन्थोंका निर्माण किया, अनेक संस्थाओंकी और सभाओंकी ओरसे अनेक उपाधियां मिलीं यह सब क्रमशः ही बतलाया जायगा। मुझे आशा है, कि पूज्य बरैयाजीकी जीवनी साधारण जनताको और खासकर हमारे विद्वान बन्धुओंके लिये उपयोगी होगी।

पूज्य बरैयाजी अपने युगके माने हुवे निष्पक्ष प्रकांड विद्वान् थे, समाज सुधारक थे, सत्य बात कहनेमें वे चूकते नहीं थे, समाज सेवक थे, जैनमित्रके द्वारा अमुक२ आंदोलनोंको हाथमें लेकर उन्होंने राष्ट्रकी भी सेवा की थी। आपका वक्तृत्व और पांडित्य प्रशंसनीय था। किसी विषय पर बोलते तो घण्टों बोला करते थे। और धाराप्रवाही बोलते थे।

आप कुशल लेखक भी थे, आपका चारित्र, विचारशीलता एवं विद्वत्ता आदि सभी कुछ स्पर्धाके विषय थे। पंडितजीकी सरलता भद्रता जितनी प्रशंसनीय थी उससे कहीं अधिक उनकी निरीहवृत्ति। विक्रमकी २० वीं शताब्दिमें हमारे जैन समाजको पूज्य बरैयाजी जैसी एक अनर्घ निधि मिली जिसे पाकर समाज कृतार्थ हो गया था इन्हीं सब घटनाओं (प्रसंग) का उल्लेख, मैं पाठकोंकी सेवामें लिख रहा हूं।

बरैयाजी और कासलीवालकी जोड़ी

वि० सं० १९४९ मार्गशीर्ष शु० १४ को पं० धन्नालालजी कासलीवाल और आप (बरैयाजी) के सतत उद्योगसे दिगम्बर जैन सभाकी स्थापना बम्बईमें हुयी। पं० कासलीवालजी बरैयाजीके और बरैयाजी कासलीवालके अनन्य मित्र थे और इनकी जोड़को देखकर लोग कहते थे कि ये दोनों शरीरसे भिन्न हैं पर प्राण एक हैं। कासलीवालजी बरैयाजीके प्रत्येक कार्यमें सहायक और सहयोगी रहे हैं इतना ही क्यों ये बरैयाजीके दाहिने हाथ थे।

इस वर्ष माघ मासमें बुन्देलखण्ड प्रांतके प्रख्यात धनकुबेर श्री० श्रीमन्त सेठ मोहनलालजी खुरईकी ओरसे एक विशाल गजरथ प्रतिष्ठा हुयी। इस प्रतिष्ठाको आज भी हमारे बुजुर्ग लोग याद कर बहुमुखे प्रशंसा करते हैं। कहा जाता है कि ऐसी प्रतिष्ठा पिछले ३६–३७ वर्षसे नहीं हुयी। इतना विशाल जन समुदाय

किसी भी मेला या प्रतिष्ठा में उपस्थित नहीं हुआ था जितना कि श्रीमन्त सेठजीकी प्रतिष्ठा में था। श्रीमन्त सेठ मोहनलालजी इस प्रतिष्ठा के द्वारा जैन समाजमें बहु विख्यात हो गये थे।

मेलेमें भारतके कोने२ से सभी श्रीमान, विद्वान आये थे। इस मेलेमें बम्बईकी सभाने बरैयाजी और काशलीवालजीको इसलिये भेजा था कि यहां समस्त दि० जैन समाजकी एक महासमिति सभा) स्थापित की जावे, क्योंकि इससे अच्छा उपयुक्त अवसर और कौनसा आता! यहां इस युगल जोड़ीने भरसक प्रयत्न भी किया पर यह सफल न हो सकी। क्योंकि जम्बू-स्वामी मथुराके मेलेमें महासभा स्थापित करनेका निश्चय हो चुका था।

इसके बाद सं० १९५० में जम्बूस्वामी चौरासी मथुराका मेला भरा। उस समय भी बम्बई सभाने इस युगल जोड़ीको मथुरा भेजा और इनके प्रयत्न पुरुषार्थसे महासभा स्थापित हुयी, तथा महासभाका कार्य प्रारंभ हो गया। "शुभस्य शीघ्रम्" के अनुसार विलम्ब कैसा! महासभाके द्वारा एक महाविद्यालय भी स्थापित हुआ जिसका प्रारंभिक कार्य आपके ही द्वारा होता रहा।

महासभा परीक्षालयकी स्थापना

वि० सं० १९५३में महासभा दिगम्बर जैन परीक्षालय स्थापित हुआ, जिसका कार्य भी आप बड़ी कुशलता पूर्वक करते रहे। इस तरह महासभाके अन्तर्गत महाविद्यालय, दिगम्बर जैन परीक्षालय और महासभा इन तीनों संस्थाओंका कार्य श्री बरैयाजी, श्री काशलीवालजी बड़ी ही योग्यता पूर्वक सञ्चालन करते रहे। दीवाल पर चित्रकारी करनेके लिये चित्रकार चाहे जब चाहे जहां मिल सकता है, पर दिवाल बनानेवाला भाग्यसे ही क्वचित् कदाचित् मिलता है, जिसे कि आप इस अनुभवके आधार पर जानते ही हैं।

बरैयाजी जैनमित्रके पहलेकी सम्पादक

दिगम्बर जैन सभा—बम्बईकी ओरसे जनवरी १९०० वि० सं० १९५६ में पूज्य बरैयाजीने जैनमित्रका प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। तब इसका प्रारम्भिक रूप मासिकपत्रके रूपमें था और बरैयाजी स्वयं सम्पादक थे। ६ वर्ष तक यह मासिकपत्रिकाके रूपमें प्रगट हुआ, फिर पाक्षिक रूपमें बरैयाजीके सम्पादकत्वमें प्रगट होता रहा।

वि० सं० १९६२ कार्तिक शु० २ से पाक्षिकके रूपमें प्रगट हुआ और वि० सं० १९६५ के १८ वें अँक तक श्री बरैयाजीने जैनमित्रका सफल सम्पादन किया। सच पूछा जाये तो पण्डितजीका कीर्तिस्तंभ जैनमित्र ही है। पं०जी जिन आन्दोलनोंको अपने हाथमें लेते थे उनमें उन्हें पूर्ण सफलता मिलती थी, और सफलता मिलनेका एक ही कारण था, वह था पं०जीकी निस्वार्थ सेवा और निर्दोष आत्माकी निष्पक्ष पवित्र बुलन्द आवाज।

आप किसी भी कामको अपने हाथमें लीजिये अगर आपकी आत्मा पवित्र है निर्दोष है और स्वार्थयुक्त भावनासे रहित है तो निश्चित् ही आपको सफलता मिलेगी ऐसा अनुभव और मत वृद्ध महानुभावोंका है, उस जमानेमें बरैयाजी और जैनमित्र दो चीजें भिन्न २ होते हुये भी एकाकार थी। बरैयाजीको जैनमित्रकी और जैनमित्रको बरैयाजीकी महती आवश्यकता थी। यदि जैनमित्रको आरंभिक कालमें बरैयाजी जैसे निष्पक्ष सुयोग्य विद्वानकी छत्र छाया नहीं मिलती तो जैन समाजकी क्या गति होती, नहीं कहा जा सकता। यदि ऐसे विद्वानके हाथमें आ जाता जो शिथिल चार आचारको

अंग्रेजी शासन देखा तो जैनमित्र-साप्ताहिकका जन्म न हो पाता। यह जैनमित्र आपकाकी था और हमें गौरव है कि उसको बैरयाजी जैसे कुशल सम्पादक मिले, जिसके कारण जैनमित्र पिछले ६० वर्षोंसे अबाधित रूपमें नियमित निकल रहा है।

पूज्य बैरयाजीके बाद युग प्रवर्तक श्री ब्र० शीतलप्रसादजीने जैनमित्रका सम्पादन किया, ब्र०जीके बाद वर्तमानमें पिछले २४–२५ वर्षसे श्री कापड़ियाजी सम्पादन कर रहे हैं। मतलब यह है कि जैनमित्र जिनके हाथों गया उनके हृदयमें समाज सेवाकी भावना रही और साथमें मित्रके द्वारा अपने लिये आर्थिक लाभकी इच्छा न रखी। यानी निस्वार्थ वृत्ति-पूर्वक उत्साह एवं लगनके साथ सम्पादन किया। यही वे सब कारण हैं कि जैनमित्र अपनी नियमितता एवं समाज सेवाके लिये प्रख्यात है। आज जैनमित्र' की जितनी ग्राहक संख्या है वह किसी भी जैनपत्रकी नहीं है। जैनमित्रको समाजमें बहुमान प्राप्त है।

जैनमित्रकी उन्नतिमें और समाजमें नये प्राण फूंकने द्वारा समाजके लिये सत्पथ प्रदर्शन करनेमें श्री बैरयाजी, श्री ब्र० जी (शीतल), श्री कापड़ियाजी इन तीनोंकी त्रिपुटी सदा अविस्मरणीय रहेगी। आप बैरयाजीके संपादन कालकी जैनमित्रकी पुरानी फाइलें देखें उन्हें पढ़ें और फिर पता लगायें कि पूज्य बैरयाजीने किस अटूट अथक परिश्रम पूर्वक जैनमित्रकी सेवा की है। मैं श्री बैरयाजीके विषयमें जो कुछ लिख रहा हूं उस पर आप विश्वास करेंगे ऐसा मैं मानता हूं पर मैं यह भी निवेदन करना चाहता हूं कि आप जैनमित्रकी पुरानी फाइलें (वर्ष १ से १० वर्ष तक) अवश्य देख जायें तब बैरयाजीके विचारोंसे आप और भी अधिक सुपरिचित होंगे।

दि० जैन मुम्बई प्रांतिक सभा—

की स्थापना वि० सं० १९५८में आसोज (आश्विन) मासमें हुयी थी, और इसका प्रथम अधिवेशन माघ सुदी ८ को आष्टा (शोलापुर) में हुआ था। इस मुम्बई प्रांतिक सभाके बैरयाजी बराबर १० वर्ष तक मंत्रीपदके नाते सुचारुरीत्या काम करते रहे।

इसी प्रांतिक सभाके अन्तर्गत संस्कृत विद्यालय बंबई, माणिकचन्द परीक्षालय तीर्थक्षेत्र, उपदेशकों द्वारा प्रचार आदि और कार्य होते रहे वे सब सभाकी समाजसे छिपे हुए नहीं हैं। वर्तमानमें बम्बई प्रांतिक सभाके दो ही कीर्तिस्तम्भ रह गये हैं—१–जैनमित्र २–माणिकचन्द परीक्षालय। ये दोनों ही स्तंभ ऐसे हैं कि जिन्हें समाजके आबाल वृद्ध पिछले ५०-५५ वर्षसे अच्छी तरह जानते हैं। बम्बई प्रांतिक सभाके अन्तर्गत जो अन्य विभाग थे वे सब बंद ही हैं, जो चालू होनेकी आवश्यकता है।

गोपाल दि० जैन सिद्धांत विद्यालय मोरेना

बम्बईमें सं० १९५० में दि० जैन संस्कृत पाठशालाकी स्थापना हुयी तब बैरयाजीने पं० श्री जीवराम ललूरामजी शास्त्रीके पास परीक्षामुख, चन्द्रप्रभ काव्य कातंत्र व्याकरण ऐसी ३ ग्रन्थ पढ़ लिये थे। कुण्डलपुरमें महासभाका अधिवेशन हुआ, उसमें यह निर्णय [illegible] गया कि महाविद्यालयको सहारनपुरसे बैरयाजीके [illegible] मोरेना भेज दिया जाये। परंतु बैरयाजी और [illegible] [illegible] जीके बीच विचारोंकी गहरी खाई थी, और [illegible] [illegible] कि साथीन रहकर काम करना नहीं [illegible] थे, फलतः बैरयाजीने महाविद्यालयकी बात अस्वीकार कर दी, पर उसी समय बैरयाजीका यह विचार हुआ कि एक स्वतंत्र पाठशाला ही क्यों न खोल दी जाये?

आपके पास पं० बंशीधरजी सिद्धांत महोदधि

(वर्तमानमें स्व० गु० महाविद्यालयके आचार्य) पहिलेसे ही पढ़ते थे। अब ३-४ छात्र मोरेना आकर रहने लगे और वहीं पर विद्याध्ययन करने लगे, इन छात्राओंको छात्रवृत्तियां मिलती थीं जिसके द्वारा अपना काम चलाते थे, और पूज्य बरैया इन्हें पढ़ाते थे। इसके बाद इस पाठशालाकी थोड़ीसी ख्याति हुयी और कुछ समय बाद और भी विद्यार्थी बाहरसे आ गये, फिर एक व्याकरण अध्यापक रखनेकी आवश्यकता हुयी, जिसके लिये सर्व प्रथम सेठ सूरचन्द शिवरामजीने ३०) मासिककी सहायता देना स्वीकार किया।

धीरे२ छात्रोंकी संख्यामें वृद्धि होने लगी और इतनी वृद्धि हुयी कि छात्रालयकी स्थापना की गई। फिर "इसी पाठशालाका बृहद् रूप 'गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धांत विद्यालय'ने ले लिया।" जो आज भारतीय दि० जैन समाजमें प्रख्यात है। जैन सिद्धांत विद्यालयकी जड़ें मजबूत करनेमें पूज्य बरैयाजीको दिनरात अथक और अकल्पनीय श्रम करना पड़ा है, इस श्रम और सेवाको योंही नहीं समझा जा सकेगा और न उसे शब्दोंमें ही बांधा जा सकता है पर उसका मूल्यांकन अनुभव गाँ ही कर सकता है पूज्य बरैजी 'जैन सिद्धांत विद्यालय''की स्थापना कर और उसके द्वारा ज्ञान प्रदीप प्रज्वलित कर अमर हो गये हैं, आपका यह वह कीर्तिस्तम्भ है जिसे भविष्यकी पीढ़ी दर पीढ़ी भूला नहीं सकेगी।

पूज्य बरैयाजी जैन धर्मके उदार और गूढ़ सिद्धांतोंका रहस्य अच्छी तरह जानते थे। एकबार आपने खतोलीमें दस्सा बीसा अग्रवालोंके बीच दस्सा पूजाधिकार विषयका केस अदालतमें चल रहा था तब आपने दस्सा पूजाधिकार समर्थनमें निर्भीक होकर साक्षी दी थी जब कि उस समयकी और वहांकी जैन जनता इससे उल्टा ही मानती थी। इससे पता लगाया जा सकता है कि बरैयाजीकी जैन धर्मके उदार सिद्धांतोंके प्रति कितनी आत्मनिष्ठा एवं आत्मश्रद्धा थी। वे भ्रष्टाचार एवं शिथिलाचार पोषक ग्रन्थोंके सर्वथा विरोधमें थे। जैन धर्म जैसे पवित्र और कल्याणकारी धर्ममें शिथिलाचार एवं भ्रष्टाचारको स्थान नहीं है, वह तो इसका प्रबल विरोधी है।

बरैयाजीकी उपाधियां

पूज्य पं० गोपालदासजी बरैयाको ग्वालियर स्टेटकी ओरसे मोरेनामें आनरेरी मजिस्ट्रेटका पद मिला था। इटावेकी जैन तत्व प्रकाशिनी संस्थाने पंडितजीको "वादिगज-केसरी" पदसे विभूषित किया था। कलकत्तेके गवर्नमेन्ट संस्कृत कॉलेजके विद्वानोंने आपको 'न्याय-वाचस्पति'की पदवी प्रदान कर अपने आपको भाग्यशाली समझा था।

सन् १९१२ में बरैयाजीको दक्षिण महाराष्ट्र जैन सभाने बेलगाममें वार्षिक अधिवेशनके मनोनीत अध्यक्ष निर्वाचित कर आपका विशाल रूपमें बहुत सुन्दर सम्मान किया था जोकि महाराष्ट्र जैन सभाका एक स्मरणीय प्रसंग माना जाता है। चेम्बर ऑफ कॉमर्स और पंचायत बोर्ड मोरेनाके भी आप सदस्य थे। पंडितजीको जो उपाधियां समाजिक संस्था एवं सभाओंकी ओरसे मिलीं वो तो ठीक है, पर पंडितजीकी योग्यता इन उपाधियोंसे भी अधिक थी। पं० जी स्वयं अनेक गुणों एवं उपाधियोंसे विभूषित थे।

बरैयाजीकी विद्यालयके प्रति ममता

बरैयाजीको विद्यालयसे उतनी ही ममता वात्सल्य एवं प्रेम था जितना कि एक सुयोग्य पिताको अपनी सुयोग्य संतानसे होता है। वे विद्यालयको अपना सर्वस्व समझते थे और उनका तन, मन, धन सभी कुछ विद्यालयकी उन्नति पर न्योछावर था।

बरैयाजी बड़े ही स्वाभिमानी थे। विद्यालयके लिये एक भी पैसा किसीसे मांगना यह उनके स्वभावके अनुकूल नहीं था। विद्यालयके प्रारंभिक कालसे जब पं० नाथूरामजी प्रेमी (हिन्दी जैन साहित्यके महान उद्धारक प्रचारक प्रकाशक, तपे तपाये साहित्य-सेवी सुधारक विद्वान) मन्त्री थे तब बरैयाजी सभाओंमें धाराप्रवाही भाषण देते थे, पर विद्यालयके लिये किसीसे एक पाई भी नहीं मांगते थे। इतना ही नहीं वे मांगनेके सख्त विरोधी थे। पर पं०जीका यह स्वाभिमान बादमें विद्यालयकी ममता और वात्सल्यकी धारामें (चन्द्रकांत मणीकी तरह जो कि चन्द्रकी किरणोंके द्वारा गलकर कर बहने लगती हैं,) गलकर कर बहने लगा और विद्यालयके लिये "भिक्षा देहि" कहनेमें भी उन्होंने रंचमात्र संकोच नहीं किया।

बरैयाजीका अगाध पांडित्य

पूज्य बरैयाजी अपने बाल्य जीवन कालमें बहुत थोड़ा पढ़े थे और वे आजकलके विद्वान् जैसी डिग्री होल्डर भी नहीं थे। गुरुमुखसे तो उनने थोड़ा ही (नाम मात्र) पढ़ा था। जिस संस्कृत विद्या के वे महान् पंडित कहलाये उसी संस्कृतका व्याकरण उनने अच्छी तरह नहीं पढ़ा था पर वे इतने बड़े विद्वान् कैसे हो गये! यहां ऐसा प्रश्न होना स्वाभाविक है।

हमारे आदर्शचरित नायक विद्यार्थी शब्दके अर्थकी दृष्टिसे जन्मभर ही विद्यार्थी रहे हैं, उनका अध्ययन तेतारटंत नहीं था। वे जो कुछ अध्ययन करते थे उसे बारम्बार समझकर अनुभवमें लेते थे यही कारण था कि उनका ज्ञान और अध्ययनकी सूझबूझ बहुत ही बढ़ी चढ़ी थी। उनने जो अगाध पांडित्य प्राप्त किया वह अपनी निरन्तर अध्ययनशीलताके आधार पर प्राप्त किया था। बरैयाजी न तो तर्कतीर्थ उत्तीर्ण थे और न न्यायाचार्य ही, फिर भी न्यायाचार्य एवं तर्कतीर्थके प्रौढ़ विद्यार्थियोंको पढ़ाया है व उनकी शङ्काओंका घण्टों तक समाधान किया है।

पाठकगण! इतनेसे ही पता लगा सकेंगे कि हमारे आदर्श चरित्रनायकका अगाध पांडित्य कितना विशद और महत्वपूर्ण होगा और उनका अनुभव कितना बढ़ा-बढ़ा होगा। जैन सिद्धांतके अनेक ग्रन्थोंको उनको कारणवश पढ़ना पड़ा जिसका परिणाम यह हुआ कि उनका पांडित्य, उनकी विद्वत्ता असाधारण हो गयी। बरैयाजी न्यायशास्त्र एवं धर्मशास्त्रके अपने युगमें असाधारण विद्वान थे इस तथ्यको जैन पंडितोंने ही नहीं, किंतु कलकत्तेके महामहोपाध्याय तर्कतीर्थ तर्कवाचस्पतियोंने भी माना है, सराहा है।

संक्षिप्तमें यह कहा जा सकता है कि पूज्य बरैयाजी २० वीं सदीके सबसे बड़े पंडित थे, बेजोड़ पंडित थे, आपकी स्मरणशक्ति और प्रतिभा बहुत ही विलक्षण थी। विद्यालयमें १० वर्ष तक हमारे पंडितजीने उच्च श्रेणिके विद्यार्थियोंके लिये (तर्कतीर्थ, न्यायाचार्य) पढ़ाया था। बरैयाजी क्या थे विद्वत्ताकी खानि थे।

बरैयाजी कुशल व्याख्याता

बरैयाजीकी व्याख्यान देनेकी शक्ति बहुत अच्छी थी। आप व्याख्यान देने खड़े होते थे तब आप लगातार ३ घँटे तक व्याख्यान दे सकते थे। आपके व्याख्यानोंमें मनोरंजकता न होकर जैन धर्मके गूढ़ सिद्धांतोंपर भाषण देते थे, अन्य विषयोंपर तो आप बहुत ही कम कहते थे। वाद शास्त्रार्थ करनेकी योग्यता बहुत चढ़ी बढ़ी थी। आर्यसमाजके धुरन्धर विद्वान भी आपकी विद्वत्ता की प्रशंसा करते पाये गये हैं। इटावेकी जैन तत्त्वप्रकाशिनी सभाने आपको अपना मुखिया (अगुआ) बनाया। तब बरैयाजीकी वक्तृत्व शक्ति खूब खुलकर खिलकर निखर रही थी। आर्यसमाजके साथ

शास्त्रार्थ कर आप विजयी हुये और आपकी विजयको विरोध पक्षने भी सहर्ष स्वीकार किया था। आपके समक्ष बड़ेसे बड़ा विद्वान बहुत समयतक टिक नहीं सकता था। बरैयाजीने आर्यसमाजियोंसे शास्त्रार्थ कर जैनधर्मका खूब प्रचार किया था।

बरैयाजीकी रचनायें

बरैयाजी वक्ता थे, पत्रकार थे और विद्वान थे, पर आप लेखक भी थे और लेखनशक्तिका आपमें अच्छा विकास था। उस समय बरैयाजी जैन समाजके अच्छे लेखक माने जाते थे यह सबकी चर्चा है। बरैयाजीके बनाये हुये ३ ग्रन्थ हैं–१ जैनसिद्धांत प्रवेशिका, २–जैनसिद्धांत दर्पण, ३–सुशीला उपन्यास। जैनसिद्धांत दर्पण केवल पहला ही भाग लिखा गया है, यदि इससे आगेके भाग लिखे जाते तो जैन साहित्यकी ठोस सामग्री समाजको मिलती।

बरैयाजीके उक्त तीनों ग्रन्थोंको जिन्होंने पढ़ा है वे ही उनका रसास्वाद एवं अनुभव कर सकते हैं। जैन सि० प्र० तो तीनों परीक्षालयोंके पाठ्यक्रममें निर्धारित है। सुशीला उपन्यास उस समय लिखा गया था जब हिन्दी साहित्यमें अच्छे उपन्यासोंका अभाव था। उसके उपन्यासोंमें (चन्द्रकान्ता, भूतनाथ, पुतली महल आदि) चमत्कार आश्चर्य एवं कौतुहल दर्शक घटनाओंका चित्रण रहता था। उस समयकी दृष्टिसे बरैयाजीका सुशीला उपन्यास अच्छा उपन्यास माना गया है। उपन्यासोंमें सैद्धान्तिक चर्चा नहीं होती ऐसा मैं अनेक उपन्यासोंके पढ़नेके आधार पर लिख रहा हूं, पर बरैयाजीका सुशीला उपन्यास इस जगह अपवाद है क्योंकि उसमें अनेक जगह जैनधर्मके गम्भीर विषयों पर भी कथन है। बरैयाजीने आर्यधर्म, जैन जागरफी आदि छोटे२ ट्रैक्ट भी लिखे हैं।

बरैयाजीका चारित्र और उनकी निर्भीकता—

पूज्य बरैयाजी अपने जीवनमें सादगीको बहुत महत्व देते थे। शुद्ध सात्विक सादा भोजन, सादा पहिनावा सादा कपड़े पहिनते थे। उनके कपड़े और वेषभूषा देखकर अपरिचित नहीं जान सकते थे कि इस वेष-भूषामें हमारे समाजका दिग्गज विद्वान् एवं असाधारण पंडित छिपा हुआ है। उज्ज्वल चारित्रकी तो आप प्रत्यक्ष मूर्ति थे। सत्य और अचौर्य व्रतको आपने इतना दृढ़ कर रक्खा था कि वह अनेक लालच और प्रलोभनोंके मिलनेपर भी नहीं डिग सका था और इन व्रतोंकी दृढ़तामें आपको कहीं२ असफलता भी मिली, पर व्रतोंकी रक्षा आजीवन और अन्तिम दम तक करते रहे। इस जगह बरैयाजी सच्चे कर्मयोगी और कठोर कर्तव्यनिष्ठ थे।

आपने अनेक जगह नौकरी की थी, पर रिश्वत देने और लेनेसे आपको बहुत घृणा थी, एक कौड़ी भी अधिक लेना आप पाप समझते थे। कहीं२ रिश्वत न देनेसे आपको यातनायें भी उठानी पड़ीं, फिर भी आप प्रसन्न चित्त रहे। धार्मिक कार्योंमें कभी आपने भेंट नहीं ली, भेंट तो क्या विदाई स्वरूप एक दुपट्टा भी नहीं लिया। भेंट न लेनेसे कभी२ आपके प्रेमी दुःखी हो जाते थे। हां! आने जानेका मार्ग व्यय अवश्य लेते थे।

बरैयाजी शास्त्राधारसे जिस बातको समझ चुके थे, उसके कहनेमें संकोच या भय नहीं करते थे, अपितु आप उस जगह निर्भीकता पूर्वक कहते थे। जब बरैयाजीने दस्सापूजाधिकारके समर्थनमें एक शुद्धदस्सेको साक्षी दी थी तब कुछ श्रीमानों एवं धार्मिक सज्जनोंने बरैयाजीके विरोधमें खूब तूफान मचा रक्खा था, किन्तु

स्मरण हो जाता है। सुकरात भी अपनी पत्नीके बर्ताबसे बड़े दुःखी रहते थे। भयंकर शीतकालमें ठण्डे पानीका बड़ा सुकरातकी पत्नीने सुकरात पर उंडेल दिया, तब सुकरातने कहा "मेघ गरजनेके बाद बरसते हैं।" इस प्रकरणमें बैयाजी और सुकरात महोदय समान हैं।

बैयाजीकी स्मरणशक्ति बहुत ही उत्तम थी वे बर्षोंकी बातें अक्षरशः याद रखते थे। आपको हिंदीसे जितनी रुचि थी उतनी ही अरुचि अंग्रेज औ विदेशी रीतिरिवाजोंसे थी।

पूज्य बरैयाजी अपने जीवनकालमें समाजके लिये जो कुछ दे गये, और आत्मजतुल्य अपने विद्यालयके प्रति जो कुछ भी कर गये, यह वह ऋण है कि जिसके द्वारा समाज ऋणमुक्त नहीं हो सकता। पूज्य बरैयाजी सन्मार्ग-प्रदर्शक थे, निष्पक्ष निर्भीक विद्वान थे, जैन धर्मके ज्ञाता थे और केवल सत्यत के लिये जीये थे, ऐसे युगपुरुष आदर्श विद्वान पंडित बरैयाजीके चरणोंमें लेखक अनेक नमन वंदना करता है।

आभार—

मैंने जो पूज्य बरैयाजीकी जीवनी लिखी है, उसमें मेरा अपना कुछ नहीं है। हां! कहीं २ शब्दोंका परिवर्तन अवश्य किया है जैनहितैषी पत्रके "सम्पादक पं० नाथूरामजी प्रेमी जो कि जैन हिन्दी साहित्यके २० वीं सदीके महान् प्रचारक, प्रसारक, उद्धारक हैं और समाज सेवकके साथ२ साहित्यिक एवं ऐतिहासिक विद्वान भी हैं" के आधार पर ही लिखी है। अतः सारा श्रेय पूज्य प्रेमीजीको मिलता है।

—स्वतन्त्र।

जैनमित्र समाज सेवा कर रहा दिन रात है।
मूल ज्ञानकी लेखनीसे, हो रहा प्रकाश है॥
जैन पत्रोंमें प्रथम, चमका दिया है मित्रको।
लख चांदकी मित्रकी, झुलसा दिया समाजको॥
मोह निद्रामें पड़ा सोता रहा समाज था।
हटा दी मोह निद्राको किया मित्रने प्रकाश था॥
बहाया ज्ञानने दरिया मित्रने झेला उसे।
मूलचंदकी लेखनीने, कर दिया अमर उसे॥
साठ वर्ष बिता चुका फिर भी नहीं आराम है।
कर रहा धर्म प्रचार, हो रहा उत्थान है॥
जैनमित्र कर रहा है पुकार यही।
नर जन्म बार बार मिलता है कहीं॥

कर्तव्यसे च्युत नहीं तुम हो कहीं।
पाठ सिखलाता हमें सुखकर यही॥

हो रहा उत्सव महोत्सव हीरक अंकका।
क्या ठाठ लेकर निकला सही मित्र हीरक अंकका

नारियोंका पथ प्रदर्शक है यही।
सीख लेवो सीख लेवो कह रही प्रेमा यही॥
वीर प्रभुसे प्रार्थना है सुखकर यही।
जैनमित्र सदा फलता फूलता रहे इस मही।

—कु० प्रेमलता देवी-औरंगाबाद।

उद्बोधन ! [पं० हजारीलाल जैन, साहित्यभूषण विशारद, जतारा

तू समझ रहा कुछ और, जीवन और है प्यारे ।
तू साध रहा कुछ और, साधना और है प्यारे ॥

(१)

तू भूले मोह मोह मायामें, मरते हुआ जिसकी छायामें ।
सुख ढूँढता जिस छायामें, उसका जाहिर और बातिन और है प्यारे ॥

(२)

तनकी खातिर तनता है तावे, निज आतमका रूप न जाने ।
भूल गया तू अरे दिवाने पुद्गल शाप एक और चेतन और है प्यारे ॥

(३)

मनुष जन्म अनमोल था पाया, पेशमें पड़कर वृथा गँवाया ।
कभी हृदयमें ध्यान न लाया, जीना है कुछ और जीवन और है प्यारे ॥

(४)

तुझमें भी ईश्वरका बल है, किन्तु कर्म वश तू निर्बल है ।
फिर इसी बातका क्यों कायल है, आतम है कुछ और भगवन् और है प्यारे ॥

(५)

कुफ्फेमें वो भगवान नहीं है कैदमें वो शक्तिवान नहीं है ।
जहाँ पे वहां ध्यान नहीं है, खोज कहींकी और मकिन और है प्यारे ॥

(६)

काँच, रत्नका ज्ञान नहीं है, निज-परकी पहिचान नहीं है ।
वीरका क्या फरमान नहीं है? बूँद चन्दन और चन्दन और है प्यारे ॥

(७)

बीच भंवर जब आयेगी नैया, धर्म बनेगा अन्त खिवैया ।
झूठा जगकी प्रीति रे भैया, स्वरथ संगी और साजन और है प्यारे ॥

जैनमित्रके प्रति कामना ! [राजकुंवार जैन, हुमार

दोहे—"जैनमित्र"के नामको, जाने सब संसार । इससे उत्तम है नहीं, और कोई अखबार ॥ १ ॥
साठ वर्षसे कर रहा, यह सबका उद्धार । क्यों न इसे अपनाइये, तन मनसे बलिहार ॥ २ ॥
इसने दर्शाया हमें, जो धर्मका सार । भूल कभी सकते नहीं, हम इसका उपकार ॥ ३ ॥
राजकुंवारकी कामना, है ये बारम्बार । दिन दिन दुनियामें बढ़े 'जैनमित्र' प्रचार ॥ ४ ॥

जैन समाचार-पत्रोंका इतिहास

(ले० पं० भागचन्द्र जैन 'भास्कर' स्या० महाविद्यालय वाराणसी।)

समाचार पत्रोंका मानव जीवनके लिए एक नवीनतम देन है। जीवनकी रक्षाके लिए जो भोजनका स्थान है, मानसिक सन्तुष्टि और अभिनव ज्ञानवर्धनके लिए समाचार पत्रोंका उससे कम नहीं। इससे शून्य व्यक्ति कूपमण्डूक कहे जा सकते हैं। उसे तो अपने आस-पासके ही समाचार पर्याप्त हैं। परन्तु वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है। दिन पर दिन नई नई खोजें हो रही हैं, नये२ वातावरण उपस्थित होते हैं। ऐसे समयमें उनसे अपरीचित रहना अपने साथ ही विश्वासघात करना है। आजके जीवनमें तो वस्तुतः समाचार-पत्र एक दीपकका काम कर रहे हैं। उनके बिना हम अंधे और पंगु हो जायेंगे। परतंत्रताकी लोह शृङ्खलाओंको तोड़नेके लिए इनका महत्वपूर्ण स्थान है। राजनीति और संस्कृति आदिके सम्बन्धमें जानकारी करनेके लिए ये दर्पण हैं। शासनका उलटना भी इनके हाथ है। इस तरह हर क्षेत्रमें समाचार पत्रोंका अपना स्थान है उसे कोई भेद नहीं सकता।

समाचार पत्रोंका जन्म बहुत पुराना नहीं है। प्रेस होनेके बाद ही इनका जन्म होता है। प्रेसके जन्मके पूर्व राजाओंके दरबारमें 'अखबार-नवीस' आदि रहा करते थे जो प्रतिदिनका अपने ही स्थानका समाचार देते थे। मुगल शासनकालमें तो ऐसे ही पत्रोंकी नकल कर ग्राहकोंको भी बेचे जाते थे। चीनमें सर्व प्रथम ११ वीं सदीमें ऐसे ही समाचार पत्र प्रकाशित हुए। जिनका प्रथम पत्र १५०० वर्षों तक लगातार जनताकी सेवा करता रहा।

इसके बाद यूरोपमें पहला प्रेस जर्मनीके मेन्ज नगरमें गोटेनवर्ग द्वारा सन् १४४० में स्थापित किया गया। वह ईसाई था और उसका उद्देश्य धर्म प्रचारार्थ साहित्य प्रकाशन करनेका था। बादमें इंग्लैण्डमें १४७७ में कैक्सटनने प्रेस खोला। श्री अंबिकाप्रसाद वाजपेयीने लिखा है—पहले पहल हालैण्डमें १५२६ में समाचार-पत्र प्रकाशित हुआ। इसके बाद १६१० में जर्मनीमें, १६२२ में इंग्लैण्डमें, १६९० में अमेरिकामें, १७०३ में रूसमें और १७३७ में फ्रान्समें पहला पत्र निकला। इससे हम जान सकते हैं कि समाचार पत्र और प्रेसका कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है।

हमारे भारतमें भी लगभग इसी समय पत्र निकलना प्रारम्भ हो गया था। सर्व प्रथम पत्र कलकत्तेमें १७८० में निकाला गया था। ज्ञातव्य है कि इन समाचार-पत्रोंका जन्म हमारे यहां अंग्रेजोंके आनेके बाद ही हुआ है विलियम केरी नामक पादरीने ही सर्वप्रथम हिंदीमें १८१७ में पत्र निकाला। वह मासिक पत्र था और नाम दिग्दर्शन था। वस्तुतः समाचार पत्रोंकी जन्मभूमि कलकत्ता कही जा सकती है क्योंकि अंग्रेजोंका आवागमन यहां अधिक होता रहा और उन्हें स्थापना

पं० परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ भी स० संपादक थे। सन् १९०२ में एक 'जैन' साप्ताहिक पत्र भी निकला जो देवचन्द्रजी द्वारा सम्पादित भावनगर काठियावाड़से प्रकाशित होता था। यह हिंदी और गुजरातीमें अभी तक निकलता है।

सन् १९०० के बाद तो पत्रोंकी धूम मच गई। श्री मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने 'दिगम्बर जैन' मासिक पत्र १९०७ में निकाला जो आज भी हमारे सामने हिन्दी व गुजरातीमें प्रत्यक्ष है। कुछ ही दिन हुए जब हम इसकी स्वर्ण जयन्ती मना चुके हैं। यह इसकी सेवाका परिचायक है। इसी समय 'जैन-पताका' भी कलकत्तेसे निकाला गया था।

सम्भवतः १९१४ में 'जैनसिद्धांत-भास्कर' त्रैमासिक पत्र पहले कलकत्तेसे बादमें आरासे निकला। श्री के० भुजबली शास्त्री और नेमिचन्द्रजी शास्त्री इसके सम्पादक रहे। जैनसिद्धान्त और संस्कृतिका यह पत्र एक प्रचारकके रूपमें काम करता रहा है इसी समय तीन पत्र और निकले। 'जैनप्रदीप' की तो कोई विशेष जानकारी मिलती नहीं। 'जैनप्रभात' नामके दो पत्र निकले। इसे आकवा दि० जैन प्रांतिक सभाने बम्बई और सूरतसे श्री सूरजमल जैनके सम्पादकत्वमें निकाले सन् १९१४ में। सन् १९१५ में एक पाक्षिक पत्र श्री रामवल्लभ जमोरियाके सम्पादकत्वमें 'खंडेल-वाल जैन हितैषी' निकला और दूसरा त्रैमासिक पत्र 'जैन हितेच्छु' निकला।

सन् १९१८में जैनोंके सात पत्र निकले। इनमें 'खण्डेलवाल जैन' इन्दौरसे, 'जैसवाल जैन' आगरेसे श्री महेन्द्रके सम्पादकत्वमें, 'जैन पथ प्रदर्शक' आगरेसे श्री शीतलके सम्पादकत्वमें, 'मारवाड़ी व ओसवाल' जोधपुरसे, 'ओसवाल' भी जोधपुरसे, 'पद्मावती पुरवाल' कलकत्तासे और परवार हितैषी' भी कलकत्तासे श्री दुलीचन्द परवारने प्रकाशित किया था। सन् १९१९में 'श्री अग्रवाल' और 'अग्रवालबंधु' कलकत्ता और आगरेसे तथा 'जैन समाचार' बम्बईके जैन सरस्वति भवनसे निकला करता था।

इसके बाद सन् १९२० में पांच पत्र निकले। मण्डीश्वरा भागसे श्री पं० मुन्नालाल रांधेलीयके सम्पादकत्वमें 'गोलापूर्व जैन' सिवनीसे श्री कस्तूरचंद्र वकीलकी सम्पादकत्वमें 'परवार' दिल्लीसे चाणसी गुलाबचन्द्र संघीके सम्पादकत्वमें 'जैन जगत', इन्दौरसे नन्दबाई द्वारा 'जैन दिवाकर' तथा दिल्लीसे रतनलाल कचेरवाल द्वारा 'जैन बन्धु' प्रकाशित हुआ था। सन् १९२१ में एक साप्ताहिक पत्र 'खण्डेलवाल जैन हितेच्छु' शोलापुरसे, और मासिक पत्र 'जैन विजय' श्री ग्यानमल कासलीवालके सम्पादकत्वमें बम्बईसे तथा दूसरा 'खण्डेलवाल हितेच्छु' अलीगढ़से श्री पन्नालाल सोनीकी सम्पादकतामें निकला था। हमारे महिलासमाज भी इस क्षेत्रमें पीछे नहीं रही। सूरतसे ही ब्र० पं० चन्दाबाईकी सम्पादकतामें 'जैन महिलादर्श' दिगम्बर जैन महिला परिषदने १९७८ से प्रकाशित किया है।

१९२२ में जबलपुरसे सन् १९२३ में श्री दरबारीलाल न्यायतीर्थकी सम्पादकतामें एक मासिक पत्र 'परवार बंधु' प्रकाशित हुआ। इसके बाद सन् १९२४ में अखिल भारतीय दि० जैन परिषदका मुख-पत्र 'वीर' श्री ब्र० शीतलप्रसादजीके सम्पादकत्वमें निकला बिजनौरसे। बादमें श्री परमेष्ठीदास और कामताप्रसादजी भी सम्पादक रहे। आज तो यह बन्द रहा है। इसी समय श्वे० स्थानकवासी जैन कान्फरेन्सका मुखपत्र 'कान्फ्रेन्स' अजमेर और बम्बईसे प्रकाशित हुआ। इसके संपादक थे श्री सूरजमल लल्लूभाई जौहरी।

सन् १९२५में श्री कपूरचन्द पाटनीकी सम्पादकत्वमें अजमेरसे 'जैन जगत' पत्र निकला। इसी वर्ष एक और पत्र 'श्री मारवाड़ जैन सुधारक पत्र' मारवाड़ जैन सुधारक सभाने सी० पी० सिंघीकी सम्पादकतामें निकाला। सन् १९३०में श्री मुख्तारजीके सम्पादकत्वमें वीरसेवा मंदिर दिल्लीसे 'अनेकान्त' प्रकाशित हुआ। इसमें बहुत ही शोधपूर्ण लेख निकला करते थे। 'जैन संदेश' आजके पत्रोंमें एक क्रांतिकारी पत्र कहा जा सकता है। श्री कपूरचंद द्वारा पहले यह आगरासे प्रकाशित हुआ था, बादमें सन् '३९में इसे चौरासी संघ मथुराने खरीद लिया। आजकल इसके सम्पादक पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री और पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री हैं। श्री पं० कैलाशचन्द्रजी एवं अजितप्रसादजीने एक पाक्षिक पत्र 'जैन दर्शन' भी निकाला था। सत्यभक्तजीने भी अजमेरसे 'जैन जगत' प्रकाशित किया था। सन् १९४६ में सर्वोदय तीर्थका प्रतीक, भारत जैन महामण्डलका मासिक पत्र 'जैन जगत' निकला। इसके सम्पादक श्री रिषभदास रांका हैं।

इसके बाद सन् १९४८ में भारतीय ज्ञानपीठने 'ज्ञानोदय' पत्र निकाला। जैन संस्कृतिका शोधक यह पत्र आज समुन्नत रूपमें श्री लक्ष्मीचन्द्र जैनकी सम्पादकतामें निकल रहा है। जैनदर्शन भी एक मुखपत्र है। इसके सम्पादक जैन समाजके माने हुए विद्वान पं. मक्खनलालजी हैं। सन् ५२ से यह सोलापुरसे प्रकाशित हो रहा है। तेरापंथी समाज सं० से भी इसी वर्ष 'जैन भारती' पत्र निकाला गया। गुरुबीगणीका यह मुख पत्र है। 'जैन प्रकाश' अ० भा० श्वे० स्थानकवासीका साप्ताहिक पत्र यह सन् १९११ से प्रकाशित है। 'जैनयुग' भी अच्छा पत्र है। इसके सं० मोहनलाल कोठारी हैं। यह गुजराती पत्र है। जैनधर्म, तत्त्वज्ञान, साहित्य, कला, स्थापत्य, इतिहास और जीवनचरित्रसे परिपूर्ण लिखाई इसकी विशेषता है। 'अहिंसा' जयपुरसे पं. इन्द्रलालजीने सन् १९५२ से प्रकाशित किया है। यह पत्र पाक्षिक है।

"तरुण जैन" भी इसी वर्ष जोधपुरसे श्री सागरमल चेलावतकी सम्पादकतामें निकला। जो आज भी दिखनेमें आ रहा है। इसी तरह जैन प्रचारक, वीरवाणी, अणुव्रत, जिनवाणी, अहिंसावाणी, जैन सिद्धांत, जैनसंदेश आदि भी पत्र हमारे सामने हैं जो समाजके पूर्णतः सेवा कर रहे हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि जैन समाज समाचार पत्रोंके भी क्षेत्रमें पीछे नहीं रही। इसमें भी 'जैनमित्र' सबसे पुराना पत्र है जिसकी आज हम हीरक जयन्ती मनाने जा रहे हैं। इसके लिए वयोवृद्ध तपस्वी श्री मूलचन्द किसनदास कापड़ियाके लिए समाज आभारी है, जिन्होंने अनवरत ६० वर्ष तक सेवा की और तन मन सब कुछ निछावर कर दिया। हमारी शुभ कामना है कि जैनमित्र और उसके साथी सदा समाजकी सेवामें लगे रहें।

"जैनमित्र" अपने ६० वर्ष पूर्ण कर ६१ वें वर्षमें प्रवेश कर रहा है। इस साप्ताहिक पत्रने किस उत्तम रीतिसे जैन समाजकी सेवा की है यह सर्व विदित है। मैं मित्रकी हार्दिक सफलता चाहता हूं साथ ही इस पत्रके यशस्वी संपादक श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाके दीर्घायुकी कामना करता हूं।

डॉ० जयहरलाल जैन,
B. P. M. S. M. Sc. A.
जन स्वास्थ्य विभाग, उत्तरप्रदेश।

सर्वगुण सम्पन्न जैनमित्र

ले०—
मनोरमा रानी जैन, [illegible]

जैनमित्र समाजके प्रायः सभी पत्रोंमें प्रमुख एवं लोकप्रिय है। इसकी प्रभावक शैली एवं नियमितता सहज ही पाठकोंको अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। समय२ पर समाजके सभी पत्रोंको जहां समाजकी उपेक्षताके मारे बन्द रहना पड़ा, वहां जैनमित्र एक सजग प्रहरीके समान अनवरत जैन समाजकी सेवा कर रहा है।

जैनमित्रके पाठक, जरा भी देर होने पर जैनमित्र पानेके लिए व्याकुल हो उठते हैं तथा जब तक पत्रको पूरा पढ़ नहीं लेते तब तक चैन नहीं लेते। न जाने कौनसा अद्भुत आकर्षण जैनमित्रमें निहित है जो जैन समाजके मन पर इस प्रकार छा रहा है—शायद है कापड़ियाजीने कोई वशीकरण मंत्र सीख रखा है। शिक्षाप्रद कहानियां, भावपूर्ण कविताएं, धार्मिक एवं [illegible] लेख, [illegible] समाचार [illegible] हैं जो जैनमित्र पाठकोंको प्रभावित कर [illegible] रही है।

समाजके कलुषित वातावरणसे दूर, धर्म वृक्षकी सुखद एवं शीतल छायामें जैनमित्र अनेक वर्षोंसे समाजको शांतिका सन्देश दे रहा है। यह एक ऐसा वृक्ष है जो कापड़ियाजीके प्रेमजलसे सिंचित होकर पुष्पित, पल्लवित [illegible] एवं फलित होता हुआ सभी मानवोंको शांति प्रदान कर रहा है। इसके माली श्री कापड़ियाजी एवं स्वतन्त्रजी भी [illegible] धूप, भूख, प्यासकी भी चिन्ता न करते हुए इसे सिंचित ही करते जा रहे हैं।

समाजमें बढ़ती हुई अशांति, कलह, अनीति, पाप एवं स्वार्थपूर्ण भावनाओंको दूर करनेमें जैनमित्र एक धर्मोपदेशकका कार्य कर रहा है। अनेक वर्षों पुराना होनेके नाते यद्यपि यह बूढ़ा हो गया है परन्तु फिर भी प्राचीन अनिष्टकारक प्रथाओंका विरोध कर नवीन भावनाओंका प्रचार करनेके कारण यह किसी भी तरुणसे कम नहीं है। शारीरिक शक्तिके कारण यह किसी पहुंचे हुए सन्तसे भी बढ़कर है। समाजके स्वार्थपूर्ण समूहोंके विरुद्ध आवाज उठानेमें यह किसी भी क्रांतिकारी नेतासे बहुत ऊपर है। सत्य पथ पर अग्रसर होते हुये समाजके किसी भी दलकी चिन्ता न करके जिस निर्भीकतासे जैनमित्र आगे बढ़ता है—उसे देख कर बड़े-बड़े निर्भीक—सेनापति भी दंग रह जाते हैं। इधर,उधर बिखरे हुए विचार रत्नोंको एकत्र कर उन्हें संगठित करनेमें जैनमित्र दूतोंका भी कार्य कर रहा है।

जैनमित्र शांतिदूत है जो इधर उधर फैली हुई, सभी खबरोंको कार्यालयमें ज्योंकी त्यों पहुँचाकर समाजकी शांतिका संरक्षण करता है। और यहां तक कि यह एक कल्पवृक्ष है जो सभीकी मनोकामनाएं पूर्ण करता है। भगवानसे प्रार्थना है कि यह पत्र चिरायु हो।

वीर वाणी

[कविरत्न सुरेन्द्रसागर प्रचण्डिया, कुरावली ।

विपुलाचल पर देव-विनिर्मित, गंधकुटीमें प्रवर विराज ।
हितमित प्रिय वाणी बोले प्रभु सम्बोधित कर सकल समाज ॥
"सघन तिमिरको चीर जीवको, होना ही खलु अब निर्भय ।
सुन्दर जीवन लक्ष्य पूर्ति है, ये ही है आनन्द चिन्मय ॥
साध्य एक है, अमर तत्वमें, अमर रमणता हो चिरकाल ।
शाश्वत शिवताकी परिणति है, जहां उदित होती तत्काल !!
लक्ष्य पूर्तिके लिए हमें जो, अपनाना है मार्ग विशिष्ट—
सत् श्रद्धा विज्ञान आचरणका, त्रियोग पाना वह इष्ट !!
हम क्या हैं ? यह आत्म द्रव्य क्या ? और द्रव्य कितने जग व्याप्त ?
इनकी क्या सत्ता ? उत्पादन ? क्या व्यय ? इन्हें ध्रौव्यता प्राप्त ?
इनका मर्म जानना विधिवत, कहलाता है सम्यक् ज्ञान ।
छूँछा तदपि ज्ञान है वह भी, जबतक हो न सके श्रद्धान ॥
सत्श्रद्धा विज्ञान युक्त ही, सम्यक् हो आचरण त्रिकाल ।
तभी प्राप्त हो पाता पूर्ण, मानवताका लक्ष्य विशाल ॥
अहो ! हमारा जीव युगोंसे, पा अजीवका भौतिक योग—
भटक रहा है कर्म जालमें, उलझ भोगता नाना भोग ॥
अपना चेतन अरे ! अचेतनसे मूर्छित हो रहा विशेष ।
अपने पनकी याद न करता, पता नहीं आप स्वमेव ॥
समाचरण अपना कर पाता नहीं, पराश्रित हो लाचार ।
सत् श्रद्धा विज्ञान हीन हो, अपनाए हैं मिथ्याचार ॥
यही अज्ञान सघन तिमिर है, जिसको करना है विच्छिन्न ।
ताकी हमें सुस्पष्ट दिखे यह, चेतन और अचेतन भिन्न ॥

चेतन शुद्ध बुद्ध हो अपना, रत्नत्रय पर हो आरूढ़ ।
अनुशीलन कर सके स्वयंका, हो न सके मूर्छित व्यामूढ़ ॥
संस्कृतिका है भला इसीमें, हो न सकेगा फिर अभिचार ।
यही सत्य है यही अहिंसा, यहां नहीं कुछ अत्याचार ॥
यही शांतिका मूल स्रोत है, समता सलिलाकी जलधार ।
बहती सतत अजस्र वेगसे, आनंदकी कल्लोल अपार ॥
परम निराकुलताका चेतन, पालेता स्वाधीन स्वराज ।
शाश्वत शिवताकी परिणति है, होती रहती सब निर्व्याज ॥
निखिल चराचर विश्व दीखता, समदर्शी हो जाती दृष्टि ।
आत्म द्रव्यसे अक्षय सुखकी, हो उठती है अक्षय सृष्टि ॥

—: जैनमित्रश्चिरं जयतात् :—

[रचयिता ऋषभदेव सरस्वतः महेन्द्रकुमारो "महेशः"]

जै—न धर्मस्य यो लोके, निर्भयेन प्रचारकः ।
न—वं नवं समाचारं सप्ताहान्ते प्रदायकः ॥ १ ॥
मि—त्रो यः सर्वलोकानां, तेन ख्यातोऽस्ति भारते ।
त्रस्—तान् सामाजिकान् बंधून्, सदा सन्मार्गदर्शकः ॥ २ ॥
चि—रकालेन मित्रोऽयं, सूरतात् हि प्रकाश्यते ।
रम्—येऽस्ति जैन पत्रेषु, 'जैनमित्र' न संशयः ॥ ३ ॥
ज—मानंद करो नित्यं, काव्यलेखादिना मुदा ।
य—त्पुरस्कार बाहुल्यं, समाजोत्थानकर्मणे ॥ ४ ॥
ता—रागणे यथाचन्द्रः तद्वत्पत्रेषु राजते ।
त्—वं जैनमित्र ! धन्योऽसि, चिरंजीव भवेर्भुवि ॥ ५ ॥

धर्मकी महिमा

[लेखक—पं० ताराचन्द जैन दर्शनशास्त्री, न्यायतीर्थ, नागपुर]

मनुष्य जन्मका साफल्य और श्रेय क्या है। मनुष्य जीवनका लक्ष्य क्या है? लक्ष्यकी प्राप्तिका प्रमुख साधन क्या है? इस प्रकारके महत्वपूर्ण प्रश्न उत्तम विचार और उच्च वृत्तियोंके धारण करनेवालोंके हृदयमें ही उत्पन्न हुआ करते हैं। इन ऊपर निर्दिष्ट प्रश्नोंका समाधान हमारे पूर्वज विचारक तपस्वी महात्माओंने स्वानुभूत प्रयोगोंसे साक्षात्कार किया था। उन आचार्योंने जीवनको सफल बनानेवाले उन प्रयोगों और समाधानोंको अपने ग्रन्थोंमें विशदरूपसे लिखा है। समस्त आकुलताओं और सब प्रकारके दुःखोंसे मुक्त होना ही मनुष्य जन्म धारण करनेका सर्वोपरि लक्ष्य है।

इस लक्ष्यकी प्राप्तिका माध्यम (साधन) धर्म है। धर्म धारण करनेमें ही मनुष्य जन्मकी सफलता और श्रेय है। धर्म ही जीवोंको शारीरिक मानसिक और अन्य सभी प्रकारके दुखों और बाधाओंसे निकालकर उत्कृष्ट निराबाध सुखका पात्र बनाता है। धर्मसे ही उदारता, सहिष्णुता, विनय, सौजन्य और मैत्री–भाव आदि सद्गुण उत्पन्न और संवर्धित होते हैं। इन धार्मिक संस्कारोंसे ही कौटुम्बिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और सब ही तरहके भेद-भाव और कलह सफलतासे मिटाये जा सकते हैं। जिस क्षेत्रमें यह विरोध मिटते नहीं हैं अपितु कलहकी भावना विकराल रूप धारण करती है तो समझना चाहिये वहांके लोगोंके मस्तिष्क और हृदय पर धार्मिक संस्कारोंका अणुमात्र भी प्रभाव नहीं है। धार्मिक संस्कार नियमतः हृदयकी कालिमा धोकर मन और बुद्धिको निर्मल बना देते हैं।

आत्मसंयम, सदाचार, इन्द्रिय दमन, क्षमाभाव, परोपकार, सादा रहन-सहन, भद्रता और क्रोधादि कषायोंकी अतिशय मंदता आदि धर्मके बाह्यस्वरूप हैं। आत्माका सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूपसे परिणमन होना ही यथार्थमें धर्म है। चिंतनशील उदाशय महर्षियोंने कठोर श्रमके अनंतर अपने विशुद्ध आत्माओंमें धर्मके अनुपम प्रकाशका अनुभव किया। उस पवित्र धर्मसे केवल अपना ही उद्धार नहीं किया। स्वानुभूत प्रयोगोंका समस्त जीवोंके कल्याणके लिये अपनी अमृतमयी वाणीसे प्रचार किया।

इतना ही नहीं लाखों वर्ष तक इनसे लोग आत्महित साधते रहें इस कल्याणमयी भावनासे उनने बड़े२ ग्रन्थ भी लिखे। जिनसे आत्महितैषी लोग सतत अपना आत्महित साधते आ रहे हैं। भगवान् आदिनाथ और वीर जिनेश्वर एवं उनके अनेक विवेकी उदार अनुयायी महात्माओंने समाज और राष्ट्रमें उत्पन्न हुई उलझने, अत्याचार, पापवृत्ति और बुराईयोंको उससमय इस धर्मसे ही दूर की थी। परहितमें भी स्वहित देखनेवाले उदार निस्वार्थी धर्मात्माओंने मनुष्य समाजमें धर्म-संस्कारोंको पनपाने और परिवर्धनार्थ घोर श्रम किया है! आत्म संयमादि धार्मिक चिन्ह जिन महानुभावोंमें दृष्टिगोचर नहीं होते उन्हें महात्मा या महापुरुष कैसे कहा जा सकता है!

आज सर्वत्र अनाचारके विरुद्ध मनुष्योंकी व जनताओंकी कुत्सित रूपसे उत्तेजित करनेके लिए प्रचुर साधन उपलब्ध हो रहे हैं। जिस ओर दृष्टिपात कीजिये प्रायः सभी स्त्री-पुरुष, जवान-बूढ़े और बालक-बालिकायें कुवासनाओंके चक्रमें फँसे हुए हैं। सभी स्त्री और पुरुष अपनी इंद्रियोंके इतने गुलाम हो गये हैं, कि इंद्रियोंकी मांगके विरुद्ध वे एक क्षण भी नहीं टिक सकते हैं। ज्योंही किसी बलवान् इंद्रियकी अपने अभिलाषित विषयकी चाह हुई, कि इंद्रिय दासको वह विषय विवश होकर उपस्थित करना ही पड़ता है। इसीलिये आजके युगमें लोगोंको जो विषय इंद्रियोंके अनुरंजक हैं, वे ही पथ्य लगते हैं। जो शृङ्गारादि वेशभूषा और पंचेन्द्रियोंके लुभावने विषय उन्हें प्रिय है, वे ही श्रेय हैं।

इसीलिये लोग धन-वैभव और इन्द्रियोंको तृप्त करनेवाले विषयोंका अधिकाधिक रूपमें संग्रह करना ही अपने जीवनका चरम लक्ष्य मान रहे हैं। जिसके पास जितना अधिक धन-वैभव एवं इन्द्रिय-संतर्पक सामग्रीका संग्रह होता है, वह उतना ही अधिक सुखी और श्रेष्ठ माना जाता है। धनोपार्जन और इन्द्रियवासनाओंकी लगनने मनुष्यको उसके कर्तव्य-पथसे विमुख कर दिया है। इसीलिये आजके शिक्षित-अशिक्षित स्त्री व पुरुष समाजको महान् हितकारी धर्म और नीतिकी बातें अहितकारी लगती हैं। अपनी वासनाओंके विरुद्ध विचार करना तो दूर लोग एक शब्द भी सुनना पसन्द नहीं करते हैं।

वीर जिनेश्वरने स्नेहसे समझाते हुए निम्न प्रकार संबोधन किया—

जह इंधणेहिं अग्गी लवण समुद्दो नदी सहस्सेहिं।
तह जीवस्स न तित्ती अत्थि तिलोगेवि लद्धम्मि॥

जैसे प्रचुर ईंधनसे अग्निकी तृप्ति नहीं होती है और लवण समुद्र हजारों नदियोंके मिल जाने पर भी तृप्त नहीं होता है, उसी प्रकार तीनलोककी सम्पत्तिके मिलनेपर भी इस जीवकी इच्छाओंकी कभी तृप्ति नहीं हो सकती है। यह श्रवण वीर प्रभुने बड़े ही हृदयग्राही ढंगसे परिग्रह और वासनाओंका दुखद परिणाम एवं असारताका भान समस्त मानव समाजको कराया। लोगोंने उनके हितकारी उपदेशको श्रवण कर भोग-लालसा और परिग्रहासक्तिकी निस्सारताको अच्छी तरह जान लिया। असंख्य जनताने उनके बतलाये धर्म-मार्गका अनुसरण कर अपने भवभवके पापों और आकुलताओंका नाश कर अविनश्वर अचल मोक्ष-सुखकी सदाके लिये प्राप्ति की थी।

इस समय भी जो भी आत्महितैषी मानव उनके हितकारी उपदेशको जानकर धारण करेगा वह अति शीघ्र समस्त सांसारिक संकटोंसे पार हुए बिना न रहेगा। भगवान् महावीरके धर्ममें अनुपम प्रभाव है। वह जन जनके हृदयोंमें मैत्री प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ्यताकी अपूर्व छटा भरकर उनकी हृदयोंकी अनादि-कालीन कालिमाको धो देता है और परम विशुद्ध बनाकर अनंतज्ञान, निराबाध सुखादिकी उन्हीं चमकती हुई चैतन्यमयी मूर्ति बना देता है। यह है, भगवान महावीरके धर्मकी महिमा।

" जनमित्र " द्वारा समाजमें कैसी जागृति हुई ?

[ले०—मानचन्द जैन 'राजेश' कवि शिरोमणि, सहजपुर]

जैन समाज देशकी अल्पसंख्यक समाज है, मगर साम्प्रदायिकताकी आधारशिला होनेपर भी भयभीत नहीं है। जैन समाजमें धर्मके प्रचारकी बहुत कमी रही है, हम अपने साहित्यको प्रचार करनेमें उदासीन रहे हैं। धर्मकी इस प्रकारकी हालतको देखकर हमारे नामी धार्मिक विशेषज्ञोंने धर्मका प्रचार करने हेतु कई उपाय किये। समाचार पत्रों द्वारा प्रचार करना उन उपायोंमेंसे एक था। जिससे अनेक पत्रोंका उदय हुआ और कुछ काल चलकर अकालमें ही काल कवलित हुए। जैन समाजके प्राचीन व नवीन जितने भी पत्र हैं या थे उन सबमें जैनमित्रका सर्वोच्च स्थान है। यही एक ऐसा पत्र है जो अनेक विघ्न बाधाओं व विरोधोंके बावजूद सदैव निर्भीकताके साथ अचल हो अपने लक्ष्यके साधनमें संलग्न रहा है।

जैनमित्रके द्वारा जो जैनसमाजमें जागृति हुई है वह किसीसे छुपी हुई नहीं है। पक्षपात खींचातानीकी नीतिसे बचते हुए समाज हित कामनासे इस पत्रने बहुत काम किया है। पूज्य स्व० पं० गोपालदासजी बरैया और श्री ब्र० शीतलप्रसादजीके समयमें समाजमें अनेकों बालविवाहके विषय उपस्थित हुए किन्तु जैनमित्रने कोई ऐसी नीति ग्रहण नहीं कि जिससे कि समाजमें कटुता या विद्वेष बढ़े।

सामाजिक व देश विदेशोंके समाचारोंका संकलन, विद्वानोंकी सार बातें और धर्म-समाजकी उन्नतिके लिए सुन्दर२ योजनायें प्रकाशित कर आगे लाना जैनमित्रकी विशेषता भी और है। जो भी योजना सर्व सम्मत हुई एवं धर्म व समाजके हितमें ऊँची उसे बड़ी निर्भीकताके साथ रखना, समाजमें कुचाल और कुरूढ़ियोंके खिलाफ जिहाद बोलना और उससे अनेक प्रकारकी हानि व बदनामी सहते हुए भी आगे बढ़े जाना जैनमित्रकी विशेषता है। देश विदेशोंमें जैन धर्मका प्रचार भी इसी पत्रसे शुरू हुआ।

जैनमित्रने पुरुष समाजके साथ ही साथ स्त्री समाजको भी आगे बढ़ानेमें कुछ कम कदम नहीं उठाया है, यही कारण है कि ३०-३५ वर्ष पूर्व जो स्त्रियां पूजन करनेमें हिचकती थीं, वे प्रभु पूजन पुरुषोंके साथ कंधेसे कंधा मिलाकर करने लगीं। महिलाओंके लिए महिलाश्रम खुल चुके हैं, स्थानीय महिला समाजने भी मण्डल स्थापित किये हैं। भारतकी नारियोंकी गौरव गाथायें वर्तमान नारी समाजका कर्तव्य अथवा तत्सम्बन्धी लेख, कहानियां, कवितायें जैनमित्र हमेशासे ही प्रकाशित करता आ रहा है।

बालविवाह, वृद्धविवाह, अनमेल विवाह, पशु-भोजका जैनमित्रने डटकर विरोध किया और समाजको सजग किया। आदर्श विवाह प्रचलित किया गया, जैनमित्रका जैनियोंके लिए वरदान स्वरूप है।

जब जब धर्म तथा समाज पर आघात आये हैं, जैनमित्रने निर्भीक वृत्ति धारण कर समाजमें नवीन जागृति उत्पन्न कर उन्नतकी ओर मार्ग दिखाया है। जो भी सेवायें इस पत्र द्वारा की गई हैं, वे सराहनीय हैं। हर्ष है यह पत्र अपनी हीरक जयन्ती मना रहा है। इस पत्रकी उन्नतिकी मैं हार्दिक कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि समाज इसे अपना समझकर अपनायेगा।

जैनं जयतु जिनशासनम्

"जैनं जयतु जिनशासनम्"—यह हमारा मुख्य और निश्चयात्मिक रूपसे जैनधर्म व उनके अनुयायीयों का "नारा" है कि—जैनधर्म जिन भगवानके शासनकी जय हो! यह मंत्र ही हमारे लिए एक आत्म शोधके लिए चुनौती है लेकिन आज हम उस कल्याणकारी मार्ग-दर्शनको भूलते जा रहे हैं ठीक है यह काल दोषका यदि परिवर्तन मान लिया जाय तो यह कहनेके लिए हमारी गल्ती है जिसे हम भूलते जा रहे हैं केवल काल दोष पर कुठाराघात नहीं हमारी ही भूल है, जिस भूलको हम स्वयं भुगत रहे हैं।

जिनशासन—वह समय था जबकि सारा विश्व उन परम पावन तीर्थंकरोंके शासन कालमें उनके आदर्श मार्गदर्शनपर चलते थे व "जिनशासन" की "गंगा बह रही थी" वे तीर्थंकर आज समक्ष नहीं हैं फिर भी आज उनका पावन सन्देश व उनकी अमर वाणी यत् किंचित् धुलिसे द्योतित हो रही है।

लेकिन नक्षत्रोंकी भांति द्योतित होनेसे काम नहीं चलेगा किन्तु फिरसे हमको जागना होगा तभी 'जयतु जिन शासनं' का नारा व झण्डा फहर सकता है। वह है उन पावन तीर्थंकरोंकी अमृतमयी वाणीको संसारमें सीधी सादी सरल सुबोध भाषाओंमें प्रकाशित कर जन जन मानवके की आत्मामें पहुंचाये तो ही 'जिओ और जीने दो' का नारा व संदेश विश्व शांतिके लिए कल्याण-कारी हो सकता है।

सरल उपाय—यदि आत्मका सरल उपाय हमको प्राप्त करना है तो यह जैनधर्मके द्वारा हो सकता है। इस भौतिक और अशान्तमयी दुनियाको कुछ देना है तो वह है उन महापुरुषोंकी अमरवाणी जिसको प्रकाशित कर विश्वमें फैलाना है। उस अमर संदेशोंको विधान बनाकर स्वयं चलना होगा तभी पर आत्मायें उससे ओतप्रोत हो सकती है। प्रथम हमको ही स्वयं उस विधानकी वेदी पर मर मिटना होगा।

सह अस्तित्व—वह है संगठन और मित्रत्वकी भावना जो एक सूत्रमें बन्ध कर मानवको हितका उपदेश पहुंचाये।

धर्म—धर्म वही है जो मानवको सही मार्ग पर ले चले और संसारके भूले भटके मानवको कदाग्रहसे निकाल कर उत्तम सुखमें धारण करा देवे "जहां कदाग्रह है वहां धर्म नहीं होता।" "शांतिका बढ़ाना, विषयेच्छाका कम होना, न्यायनीतिका पालन, और दुनियाके समस्त जीवोंके साथ प्रेम होना इसीका नाम धर्म है" जो ऐसी भावनाके बल पर उसकी अन्तरात्मा निष्कलंक बनती है वही ऐसी धर्मकी कसौटी है! महावीरकी वाणीमें लिखा है—

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसन्ति, जस्स धम्मे सया मणो॥

धर्म सर्व श्रेष्ठ मंगल है, धर्मका मूल अर्थ है अहिंसा संयम और तप। जिसका मन इस धर्ममें लगा रहता है देवता भी उसे नमस्कार करते हैं। किन्तु आज धर्मके मर्मको समझकर अभिशान्तिको छोड़कर अशांतिमें लग जाते हैं, और द्वेष विद्वेषकी भावना फैल जाती है।
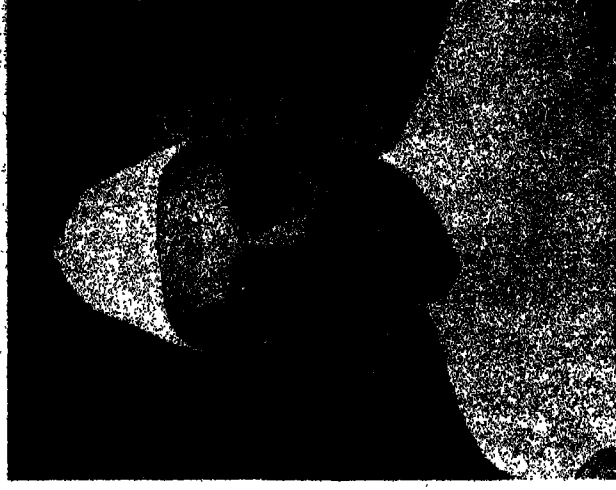
स्व० सेठ ताराचन्द नवलचन्द जौहरी

बम्बई प्रांतिक सभाके वर्षोंतक आप उपसभापति व कोषाध्यक्ष (माणिकचन्द पानाचन्द बम्बई) रहे थे।

श्री० सेठ ठाकोरदास पानाचन्द जौहरी

दिगम्बर जैन प्रान्तिक सभा, बम्बईके उपसभापति व कोषाध्यक्ष (माणिकचन्द पानाचन्द फर्म द्वारा वर्षों तक)
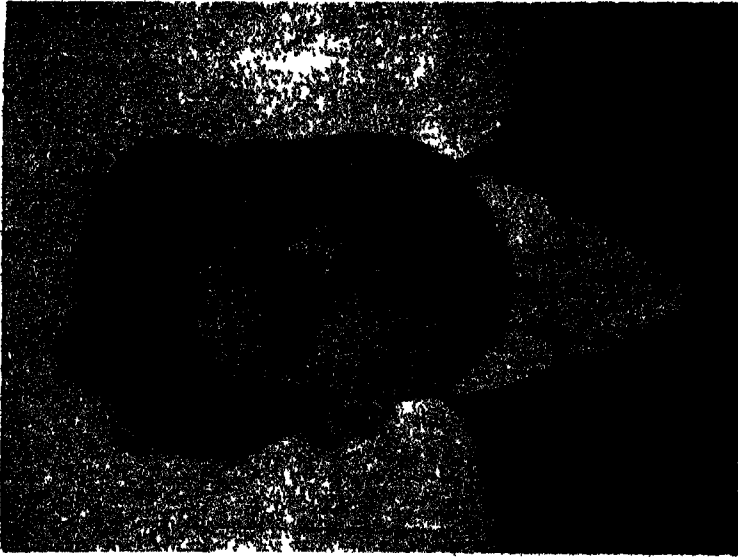
स्व० सेठ लल्लूभाई प्रेमानन्ददास परीख, बम्बई

आपने ७-८ वर्ष तक बम्बई प्रान्तिक सभाकी
मन्त्रीके रूपमें सेवा की थी।
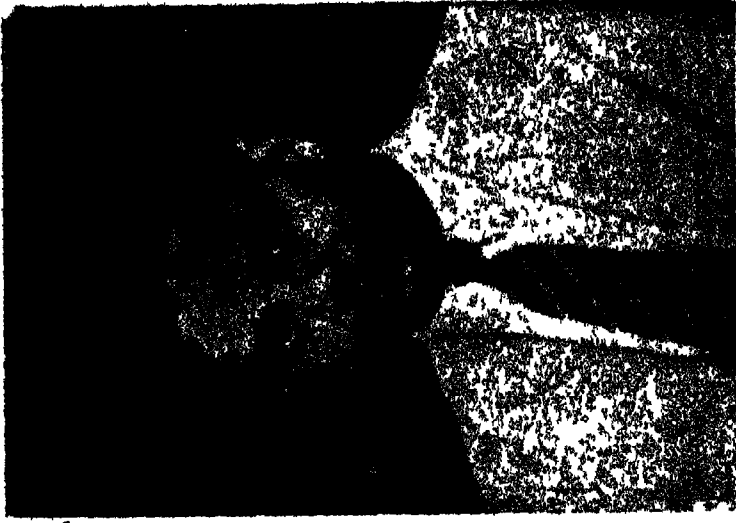
श्री० सेठ जयन्तीलाल लल्लूभाई परीख, बम्बई

बम्बई प्रांतिक सभाके वर्तमान मन्त्री व हीरक जयन्ति उत्सवके
तथा श्राविकाश्रम सुवर्ण जयन्तिके उत्साही मन्त्री।

संस्कृतिकी रक्षा—आज हमारी जैन समाज मुट्ठी-भर समाज रह चुकी फिर भी मनुष्यताके मस्तक पर हमारी संस्कृति, जैनकला उपासना महान व्याप्त है, व कणकणमें व्याप्त होकर मानवको सची राह देता है। आजके युगमें उसका ह्रास होता चला आ रहा है जिसपर हमें गर्व होना चाहिए। यदि हम वीरके सचे उपासक हैं, तो हमें सचे अहिंसक सैनिक बन कर दुनियांको सची राह बताना होगा।

अपव्यय—हर साल हमारी समाज लाखो रुपये पंचकल्याणकोंमें व्ययकर देती जब कि उन धार्मिक अधिष्ठानोंकी रक्षा भी नहीं हो सकती और नये निर्माणकी योजना बन जाती है। उन प्राचीन संस्कृति, कला, अधिष्ठानोंकी रक्षा हो, समाजके महान विद्वानोंकी आवश्यकता जो संस्कृत प्राकृत भाषाओंका शुद्ध कार्यकर अनेकानेक भाषाओंमें नये साहित्यका सृजनकर विश्वमें उन पावन तीर्थंकरोंकी वाणीकी गंगा पुनः बह उठे और जिन शासनका माहात्म्य हो सके ! ऐसे पुनीत कार्यमें यदि समाज उस द्रव्यको लगाये तो वे अनन्त गुणी फलके भागी बन सकते हैं। आज हमारे जैन मंदिरोंकी किस प्रकार स्थिति हो रही है जो जीर्णताकी ओर जा रहे हैं, उनका सुधार हो मंदिरोंमें सहस्रों हस्त लिखित शास्त्र भरे पड़े उनका अनुवाद होकर छपाकर प्रकाशित किये जावे।

मत-भेद—आज हमारी समस्त उपासनामें मत-भेद होकर धर्मके नामपर लड़ते झगड़ते रहते हैं किंतु हमें यह सोचना चाहिए कि धर्म हमें लड़ना झगड़ना नहीं सिखाता वह मानवको मानवीय गुणोंकी पराकाष्टापर ले जाता है और एक सचे सत् पथका मार्गदर्शन देता है जहां आत्मा अनन्तसुख उपलब्ध कराकर सचे सुखकी राहपर पहुँच जाता है।

जैनदर्शनमें लिखा है, सद्कर्म करनेसे सद्गति प्राप्त होती है। यदि मानव आजके विध्वंसकारी व अशांतमय युगमें शांति चाहता है तो वह जैनदर्शनके सचे गुणोंपर चलना सीखें। उन महान् आत्माओंके मार्गपर चलना तभी विश्वमें शांति मिल सकती है।

"स्मरणमें रखना चाहिए कि—कर्म किसीकी शर्म नहीं रखता जैसे कर्म किये जाते हैं वैसे ही फल मिलते हैं।"

अतः हमको सद् कार्यकर परस्पर आपसके मत-भेद मिटाकर विश्वकल्याण व शांतिमें लग जाना चाहिए। तभी हमारी संस्कृति, कला, धार्मिक उपासना जीवित रह सकती है।

आजके युगमें २०-२२ लाख जो जैन समाज है उसमें भी अनेक भेद फिरके और अन्तादृष्टि पाई जाती है। वह अन्तादृष्टि उपासनामें भले ही हो किन्तु जहां हमारी कला और महान संस्कृतिका नाश हो वहां हमे एक सूत्रमें बन्धकर अहिंसक झंडेके नीचे आ जाना चाहिए। जिससे हमारी आनेवाली पीढ़ियोंका सुधार हो।

जैनमित्र—निःस्वार्थ ६० वर्षसे सतत् येनकेन प्रकारेण कठिनाईयोंका सामना करता हुआ हुनमतिसे समाजको जैनमित्र बनाता आ रहा है, उसने अनेक महान विद्वान् बनायें, लेखक कवि सुधारक प्रचारक आलोचक आदि बनाये ! जिसका कार्य ६० वर्षसे पुष्पकी भांति पुष्पित होकर जैन समाजकी महक धरासे स्वर्ग तक महक रही है। हमारी समाजके वयोवृद्ध कर्मठ सेवाभावी श्री मूलचन्दजी कापड़ियाको श्रेय होगा जिन्होंने अनेक प्रकारकी कठिनाईयोंको पार कर जैनमित्रका सम्पादन करते आ रहे हैं एवं मित्र बनाते आ रहे हैं। ऐसे मंगल प्रभातकी वेलामें मैं शुभ मंगल कामना करता हूँ कि जैनमित्र व उसके सम्पादक युग-युगों तक फलेंफूलें तथा हम सब २०-२२ लाख जैन समाजको मिलकर जैनमित्र बनकर "जैनं जयतु शासनम्" का मार्ग लेकर विश्वके कल्याणकारी पथमें लगाना चाहिए। "धर्मात्माकी रक्षाके लिये आत्मा अर्पण कर देना यही भगवान् वीरकी शिक्षा-आज्ञा है।

'मित्र'से—

[ले०—डॉ० सौभाग्यमल दोशी अजमेर]

प्रिय 'मित्र' !

तुम मेरे ही नहीं अपितु समस्त संसारके परम हितैषी सच्चे मित्र हो। तुम्हारी स्नेह-स्निग्ध मधुमय मित्रताकी गौरवपूर्ण व्यापक गाथा इसीसे स्पष्ट झलक रही है कि तुम एक प्रांतीय सभा द्वारा जन्म धारण करके भी तदुजनित क्षेत्रीय संकीर्णताकी परिधिसे बिल्कुल परे हो समस्त जैन संसारके विषय जन-मनके परम मित्र बने हुवे हो। तुम्हारे प्रेमियोंकी संख्या न केवल बम्बई प्रांतमें हो रही है वरन भारतके कोने कोनेमें बढ़ी है, बढ़ रही है और बढ़ती भी रहेगी ऐसी दृढ़ धारणा है। क्योंकि 'होनहार बिरवानके, होत चीकने पात'' वाली जगत प्रसिद्ध कहावत तुम पर चरितार्थ हो रही है।

स्वर्गीय पंडितवर्य श्रद्धेय श्री गोपालदासजी बरैया, साहित्य संसार प्रसिद्ध वयोवृद्ध स्व० पं० नाथूरामजी प्रेमी, स्व० पू० ब्र० श्री शीतलप्रसादजी, श्री० पं० परमेष्ठीदासजी जैन, श्री० पं० सुमेरचन्दजी जैन 'स्वतंत्र' व गण्यमान विद्वानोंको तुमने अपने कोमल हृदय मंदिरमें निवास दिया है, एवं उनके शलोक्य आदर्श व निर्भीक विचारोंको समर्थन करनेमें ही नहीं वरन् प्रचार कर कार्यरूपमें परिणित करनेमें ही अनेकों विघ्न बाधाओंको अचल हिमाचलकी भांति झेलते हुवे समाजमें आगे आ कुरीतियोंको धूलिध्वस्त करनेमें निस्वार्थ सेवाभावी जागरूक प्रहरीके समान भी सिद्ध हुवे हो। अत: मैं तुम्हारा जितना भी यशोगान एवं अभिनन्दन करूँ थोड़ा है।

तुम्हारी "हीरक-जयन्ती" के पुनीत अवसर पर समाजके उच्च प्रतिष्ठित कर्मठ वीर श्री० सेठ कापड़िया-जीको भी नहीं भुला सकता, जिनने कि इससे भी कठोर पारिवारिक झटके सह कर भी कर्तव्यसे मुख नहीं मोड़ा। यह उन्हींका अपूर्व साहस है कि रूढ़िवादियोंके प्रचण्ड प्रकोप प्रहारोंसे सदैव डिक्लोत कर रहे हैं और तुम्हारा अपितु हिन्दीभाषी 'दिगम्बर जैन', 'जैन महिलादर्श' आदि पत्रोंको भी गतिके साथ जैन-पत्र, लोकमें ऊँचा उठाया है। और धर्म तथा जैन संस्कृतिका संरक्षण करते हुए निर्भय हो युगकी मांगके साथ राष्ट्रोन्नति आदिमें भी हाथ बढ़ाया है। समाज घातक प्रथाओं, अन्ध विश्वासों, आडम्बरोंका भण्डा फोड़ किया है, और दिया है मुझ जैसे अगणित अकिंचन व्यक्तिको प्रोत्साहन।

मित्र ! यदि आज तुम संसारमें नहीं होते तो यह ध्रुव सत्य था कि समाजमें इतने लेखक, कवि, कहानीकार, नाटककार आदि कभी पैदा नहीं हुवे होते। क्योंकि अखिल भारतवर्षीय सभा संस्थाओंके द्वारा संचालित कतिपय पत्र चाहे अपने अन्नदाताओंकी दिनचर्या और चित्र मुखपृष्ठ पर छापते रहें किन्तु उनमें तुमसा जनसेवाका प्रेम और समाजोत्थानका आदर्श भाव कहां ! अतः—

नील नभ पर झिलमिलाती हुयी तारिकाओंके समान बिखरती श्री भगवान महावीरके पावन निर्वाण बेला पर जगमगाती हुई शुभ दीपावलीके पावन प्रभातसे प्रारंभ होनेवाला ६१ वां वर्ष तुम्हें और तुम्हारे समस्त प्रेमी परिवारके प्रति आरोग्यतापूर्ण सुखशांति एवं समृद्ध तथा दीर्घ जीवन प्रदायक हो यही मेरी कमनीय कामना है।

मने विश्वमें सदा जयन्ती,
"मित्र" तुम्हारी सौ-सौ बार।
एक वर्षके सौ महिने हों
एक मासके दिवस हजार॥

जैनमित्रकी मित्रता समाजमें कैसे बढ़ी

(लेखक : पं० त्रिलोकचन्द्र जैन शास्त्री, कोठोर)

मित्र अपने दो शब्दोंको सार्थक करता हुआ आज हीरक अवसरको प्राप्त हुआ, एतदर्थ उसके लिए हर्ष कि बधाई तो है ही इसमें कोई संदेह नहीं। मित्रका पहलेका जीवन कैसा रहा ? किस मुहूर्तमें इसका जन्म हुआ ? तथा कौन२ महानुभावोंने इसकी उन्नति की ? यह सब मेरी जानकारीके परोक्ष है। किन्तु जबसे मैंने होश सम्हाला है, मुझे ध्यान है, कि यह बिना किसी व्यापक्षलीके समाज सेवाकी भावनासे बढ़ता ही जा रहा है।

जैन समाजमें अनेक पत्रोंका यथा समय प्रकाशन हुआ किन्तु वे सब अपने निर्देश स्वामित्वादिके अभावमें कुछ दिन "आरम्भे सूरा" की भांति निकले फिर बन्द हो गये। अब भी कई पत्र समाजमें प्रकाशित होते हैं, किन्तु उतनी अधिक धारासे नहीं जितना कि जैनमित्र। इसके मुख्य कई कारण हैं।

प्रत्येक पत्रका उत्तरदायित्व, उसकी प्रतिभा व्याप्ति और उन्नति उस पत्रके सम्पादक पर निर्भर होती है। मित्रके सम्पादक वयोवृद्ध कापड़ियाजी हैं, जो कि एक अनुभवी, धन सम्पन्न एवं व्यापार कुशल व्यक्ति हैं।

फिर "मित्र" के सम्पादनके सहायतार्थ कुछ ऐसे विद्वान रखते आये हैं जिनसे समाजकी कुरीतियोंका लोप हुआ। जैन साहित्य मिला और हुआ विकास। वे विद्वान अपनी लेखनीके निराले लेखक हैं। जैसे कुछ वर्षों पहले पं० परमेष्ठीदासजी तथा अब हैं पं० स्वतंत्रजी, लेखक, पत्रके स्तर बढ़ानेमें मुख्य कारण हैं!

लेखकके साथ२ कविताका भी होना पत्रके विकासमें कारण है। हालां कि समाजमें नामांकित कवि न थे। लेकिन "मित्र" ने भी कई नये कवि बनाए तुकान्त और अतुकान्त।

आमके आम गुठलीके दाम वाली कहावतको चरितार्थ करते हुएकी सूझ मित्रके बढ़नेमें कारण है, उसके प्रतिवर्ष दिये जानेवाले उपहार ग्रन्थ। यह कारण मित्रको बढ़ानेमें इतना सफल हुआ कि न पूछो बात। कई स्थान पर ग्रामीण भाइयोंको उपहार ग्रन्थकी बात समझ ई जाती है तो वे फौरन ही इसे मंगानेको तैयार हो जाते हैं।

आवश्यकताएं—जब कभी देखा गया है कि विद्वान् व वर कन्या इच्छुक भाई, अपनी आजीविका मिलनेके लिए व इच्छित कार्य होनेके लिए मित्रको इस तरह ध्यानसे पढ़ते हैं जैसे कि B. A LL. B. बाबू लोग "LEADER ALLAHABAD." को पढ़ते हैं। लीडर इतना स्थान मिलानेमें कामयाब न हुआ हो जितना कि मित्र हुआ है। आवश्यकताओंके छपनेसे घर बैठे विद्वान् व भाइयोंको स्थान मिलते ही रहे हैं अतः सभीकी स्वार्थसिद्धिके लिए मित्रकी मित्रता बढ़ी। सुझाव व पत्रोंका प्रचार-धार्मिक पर्वोंके मनानेका ध्यान भी जैनमित्रके कारण बढ़ा।

सुगंधदशमी, महावीर जयन्ती आदि महान पर्वोंका महत्व समझदार व्यक्तिके सिवाय प्राचीन जैन भाईयोंको नहीं था। इन पर्वोंके प्रचार व मनानेके लिए पत्रके सम्पादकीय लेखमें १०, १५ दिन पहले पर्वकी महत्ताको प्राचीन ढंगसे बताया जाता है।

संस्थाओंकी मांगें अर्थात् अपीलें प्रकाशित करना इससे अपनी जैन संस्थाओंको बढ़ाना भी "मित्र" का ध्येय रहा। वास्तवमें एडवरटाइजमेंट वह चीज है जिससे संस्थाकी जानकारी भी होती है और सहायता भी मिलती है।

मित्र जैन समाजमें नियमित रूपसे प्रकाशित होता रहा है। इसकी नीति लोग कुछ भी मानते हों लेकिन आजकी तारीखमें मित्र जैन समाजके कवियोंका, लेखकोंका, संवाददाताओंका, संस्थाके अधिकारियोंका, सभी निर्धनों सबका ही प्रेमी मित्र बना हुआ है। उपरोक्त कारणोंसे मित्रकी मित्रता बढ़ी और उसका विकास हुआ। हमारी भावना है कि "मित्र" भविष्यमें दैनिक होकर प्रगट हो।

—: शुभेच्छा :—

"जैनमित्र" जैन समाजका एक साप्ताहिक मुखपत्र है। उसमें हमेशा जैनधर्म और जैन जातिकी उन्नतिके लिये लेख, कविता एवं समाचारादि प्रगट होते रहते हैं। जैनत्वके ऊपर यदि कोई कुठाराघात करता है तो सर्वप्रथम 'जैनमित्र' उसके लिये प्रयत्न करता व दूसरोंको प्रेरणा करता है।

इसके सुयोग्य, वयोवृद्ध संपादक श्री मूलचन्द किसनदास कापड़िया तथा उनके सहयोगी श्री स्वतंत्रजीकी जितनी प्रशंसा की जाय-थोड़ी है। उनकी लेखनीमें जोश है, मनकी लगनके साथ उनके लेखोंमें स्वाभाविकपन है। हीरक जयन्ती वर्षके उपलक्ष्यमें मैं यही चाहता हूँ कि इनके प्राण समान कापड़ियाजी व स्वतंत्रजी चिरायु हों।

—कनूलाल कचरालाल गांधी, हिम्मतनगर।

"जैन मिशन" की प्रगतिका श्रेय "जैनमित्र" को

[ले०—पं० जिनेश्वरदास जैन शास्त्री, वाराणसी]

इस हीरक जयंतीके शुभावसर पर मेरी आंतरिक इच्छा यह है कि अपने भावोंकी विचार धारा 'जैनमित्र' के समक्ष विशेष रूपसे प्रस्तुत कर अपने कर्तव्यको पूर्ण करनेका प्रयत्न करूँ लेकिन जैन समाजके सुप्रसिद्ध सेवक एवं "जैनमित्र"के प्रधान सम्पादक आदरणीय श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाने इस समय भी भावोंको व्यक्त करने पर कर्फ्यू लगा दिया ! न्याय भी उचित है अनुचित नहीं ।

"जैनमित्र"ने अपनी निस्वार्थ भावना एवं सौजन्य कार्य प्रणाली द्वारा इतने अधिक व्यक्तियोंका मन अपनी ओर आकर्षित कर लिया, उन सबकी नामावली बहिरंगकी अपेक्षा अन्तरंग हृदयमें सुरक्षित रूपसे रखने योग्य है । अपने अतीतके जीवनकालमें अनेकानेक कष्टोंको सहन कर वर्तमानमें भी हमलोगोंको सत्पथ पर लानेका प्रयास कर रहा है प्रयासकी गति द्रुतगामी है । इस प्रकार 'जैनमित्र'का योगदान हमारे जीवनमें हो रहा है यह क्या सराहनीय नहीं है ? इस पत्रकी सेवाका मूल्यांकन शायद ही कोई कर सके । इस पत्रकी जितनी तारीफ की जाय उतनी ही कम है । इसने अपने जीवनके ६० वर्ष व्यतीत कर लिये । इस उपलक्षमें हीरक जयंती मनानेका निश्चय 'जैनमित्र'के परिवारने किया यह समाज और देशके कर्णधारोंके लिये बड़े हर्ष और गौरवकी बात है ।

'मित्र'ने दूसरोंसे सहयोग कर अनेक संस्थाओंकी स्थापना की है । इस पत्रके समक्ष जिन संस्थाओंकी स्थापना देश धर्म और समाजकी सेवाके लिए हुई है उन सबमें श्री अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज (एटा) उ० प्र० प्रमुख है। मिशनने अल्प समयमें ही आशातीत सफलता प्राप्त कर ली है। इसका प्रमुख कारण मिशनके अधिकारियोंकी अपेक्षा जैनमित्रको श्रेय है । मिशनकी प्रगतिमें 'मित्र'ने निस्वार्थ भावनासे सहायताकी और भविष्यमें भी कामना उसकी यही है । इस त्यागके लिए मिशन परिवार आभारी है । मिशनका मासिक विवरण एवं अन्य समाचार इस पत्रमें प्रकाशित होते ही रहते हैं । साप्ताहिक प्रकाशित होनेके लेहे जैनपत्रोंमें 'मित्रका नम्बर पहिला है ।

इस शुभावसर पर अ० विश्व जैन मिशन परिवारकी ओरसे 'जैनमित्र'के दीर्घायु होनेकी शुभ कामना प्रस्तुत करते हुए पूर्ण विश्वासके साथ आशा करते हैं कि यह पत्र भूले, भटके राहगीरोंको सत्पथ दिखानेमें सबका साथ सच्चे हृदयसे देगा । कापड़ियाजीको इस अवसर पर धन्यवाद न देना, अनुचित होगा । कापड़ियाजीका सहयोग मानव-मात्रको मिले यही अभिलाषा है ।

जैनमित्र—एक जाग्रत योगी

[लेखक—लक्ष्मीचन्द्र जैन 'सरोज' एम. ए. साहित्यरत्न-रतलाम]

"जैनमित्र" के हीरक जयन्ती मनानेका प्रसंग आना ही इस बातका प्रबल प्रमाण है कि जैनमित्र जैन समाजका एक जाग्रत योगी है और उसकी लोकप्रियता-सुहितकारिता एवं जागरूकताकी बात अब किसीसे भी छिपी नहीं है।

—:लोकप्रियताके कारण :—

(१) प्रतिवर्ष तिथिदर्पण उपहारमें देना और उसपर समाजके प्रतिष्ठित साधु, श्रीमानके चित्र देना।

(२) एक परीक्षाफलका परीक्षा पत्र प्रकाशित करना।

(३) एकसे अधिक संस्था ओंके समाचार व स्वीकार एवं सहायता व्यवस्था रूपसे छापना।

(४) मॉडर्नरिव्यू, विश्व जैन मिशन पत्रके सार विवरण छापना। अन्य पत्रोंसे भी हानिकर अंश उद्धृत करके पाठकोंका ज्ञान बढ़ाना।

(५) समाजके समाचारोंके साथ देश-विदेशकी भी संक्षेपमें ही सही, खबरें प्रकाशित करना।

(६) वीर जयन्ती, पर्यूषणपर्व, महावीर निर्वाणोत्सव, वीर शासनजयन्तीपर विशेषतया विशेषांक निकालना।

(७) व्यक्तिगत और संस्थाओंकी आवश्यकताओंको प्रकाशमें लाना और परोक्षरूपसे उनका सम्बन्ध जोड़ना।

(८) नियमित रूपसे समय पर प्रकाशित होना।

(९) कुछ समयके लिये ग्राहकोंसे आधा या इससे भी कम मूल्य लेना और पत्रके पठन-पाठनकी जिज्ञासा बढ़ाना।

(१०) प्रतिवर्ष कमसे कम एक उपहार ग्रन्थ भेंटमें देना। चूँकि जैनमित्रके ग्राहकोंकी संख्या ढाई तीन हजार है, अतएव उसकी लोकप्रियतामें कोई सन्देह नहीं रह जाता है।

—: सुहितकारिताके आधारपर :—

(१) एक समाजके संरक्षणमें प्रकाशित होकर भी स्वतंत्रता एवं उदारतापूर्वक प्रकाशित होना।

(२) प्रारम्भसे एकसे एक बढ़कर अवैतनिक सम्पादकोंका सहयोग मिलना।

(३) पत्रका एक निजी निश्चित प्रेस होना।

(४) अपने आकार प्रकारमें लगभग एक रूपता लिये रहना।

(५) समाज द्वारा, दानके विविध प्रसंगों पर आर्थिक सहायता मिलना।

(६) सोनेमें सुहागा सरीखे यथावश्यक नियमित और स्थायी विज्ञापनोंका भी मिल जाना।

(७) उदीयमान लेखकों और कवियोंको प्रोत्साहन देना।

(८) अपनी रीति-नीति और गति-विधिकी समाजके सम्मानित विचारकों द्वारा पुष्टि कराना।

(९) आचार्योंके आगमोंके अनुकूल चलकर भी अन्ध श्रद्धालु नहीं होना।

(१०) समाजको अपने श्रीमानों-विद्वानों और कार्यकर्ताओंसे सचित्र परिचित कराना।

(११) चूँकि "जैनमित्र" को प्रकाशित होते हुये साठ वर्ष समाप्त हो चुके हैं, अतएव उसकी गति—विधिमें काफी सुस्थिरता आ गई है; यह भला कौन न कहेगा!

— : जागरूकताके प्रमाण :—

(१) जीवन सूचक कार्यत्रय (जन्म, मरण, और परण या विवाह)मेंसे पिछले दो की कुरीतियोंका विरोध किया। बालविवाह, वृद्धविवाह, अनमेल विवाह, आतिशबाजी व गणिकाविहारको रोका और मरण भोज मुक्ता या तेरई छाती पीटी आदिका विरोध किया।

(२) शिक्षाके प्रचार और प्रसारके लिये समाजकी दृष्टिको मोड़ दिया और अनेक शिक्षा संस्थाओंकी स्थापना कराई और उसमें धार्मिक सांस्कृतिक शिक्षणके साथ लौकिक शिक्षण पर भी जोर दिया।

(३) जहां अन्तर्जातीय विवाहका प्रचार किया, वहां परिस्थिति विशेषमें विधवा-विवाहको निन्दनीय माना। विवाहकी व्यक्तिगत आवश्यकता समझते हुये भी समाजकी दृष्टिको ध्यानमें रखकर विधवाओंको आश्रमोंमें रह कर पढ़ लिखकर जीवन स्तर उन्नत बनाये रखनेके लिये कहा।

(४) बाबा वाक्यं प्रमाणं की नीतिको नहीं अपना बुद्धि और युक्तिसे काम लिया। सच्ची श्रद्धाको जगाया और अंध श्रद्धाको दूर भगाया तथा वस्तु स्थिति पर प्रकाश डाला।

(५) दस्सा पूजाधिकारकी बात सुदृढ़ता पूर्वक कहकर धर्मका धरातल बढ़ाया।

(६) गजरथ विरोधी आन्दोलनको छेड़ा ही नहीं बल्कि उसमें होनेवाले अनाप शनाप व्ययके प्रति समाजकी घृणा भी दृढ़ कर दी। अन्य दृष्टि-कोणसे 'जैनमित्र'ने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावको दृष्टिमें रखकर समाजको काम करनेकी सलाह दी।

(७) इस पत्रकी नीति सर्वदा गुण ग्राहकता भरी रही। इसके सम्पादकीय टिप्पणियों द्वारा जहां अपनी बातें कहीं, वहीं अन्य पत्रकारोंके सद्गुणों और सद्-वृत्तियोंका निष्पक्ष होकर अपनाया ही नहीं बल्कि खुल कर समर्थन भी किया।

(८) समय २ पर संस्थाओंके प्रचारकोंके भ्रमण विवरण भी दिये। सम्पादक एवं अन्य सहयोगी भी इस दिशामें अछूते नहीं रहे।

(९) 'जैनमित्र' की कीर्ति इस लिये भी काफी फैली कि उसने जहां श्रीमानोंको शास्त्रदानी बनाया, वहां विद्वानोंको प्राचीन धर्म-दर्शन और साहित्यके ग्रन्थोंको आधुनिक रूप देनेके लिये भी प्रेरित किया।

(१०) जैनमित्र' जहां समयानुसार लगा, वहां मिलनसारिता भी लिये रहा और इतने पर भी अपने अस्तित्वको सुस्पष्ट तथा पृथक बनाये रखा।

(११) अनेक अच्छे पत्रों एवं पत्रकारोंमें एक दुर्बलता पाई जाती कि वे आवश्यकता पड़ने पर समाजके प्रति कठोर दृष्टि नहीं अपनाते पर 'जैनमित्र' इस विषयमें भी पीछे नहीं रहा।

संक्षेपमें जैनमित्रने जागरूकताका शंखनाद करते हुये समाजसे बड़ा सम्मान पानेका जैसा सरल उपाय पैसा है वैसा पत्र-प्रकाशन भी। सदुपयोगमें यश और कीर्ति है. पर दुरुपयोगमें महान निन्दा और घृणा है।

'जैनमित्र' रूपी जैमित्र योगी शतायु हो, यही कामना है। आज इतना ही मुझे आपसे प्रस्तुत पत्रके प्रसंगमें कहना है।

श्रद्धांजली व संस्मरण

जैनमित्र हमारा सच्चा मित्र है—यह कैसे?

लेखक:—
पं० रूपचन्द जैन गार्गीय,
पानीपत।

१–मित्र वह जीवन साथी है जो सवेरे शाम, सप्ताह दो सप्ताह, महीने दो महीनेमें कभी कभी मिलता रहे।	१–'जैनमित्र' हमें हर बृहस्पतिवारको प्रकाशित होकर शनिवार तक समय पर मिलता रहता है, यह हमारा कई दशाब्दियोंका साथी है।
२–मित्र वह है जो दिल बहलावे।	२–'जैनमित्र' हर सप्ताह तरह२ के सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय व धार्मिक समाचारोंसे हमारा दिल बहलाता है।
३–मित्र वह है जो हितकारी हो।	३–'जैनमित्र' हमको आत्म हित, धर्म हित व समाज हितकी बातें बताता है।
४–मित्र वह है जो दुख दर्दमें काम आवे।	४–'जैनमित्र' हमें समय२ पर अपने दुख दर्दकी कथा कहते रहते हैं तथा इसीके द्वारा इसका इलाज भी होता रहता है।
५–मित्रसे सत्संगकी प्राप्ति होती है।	५–'जैनमित्र' हमारा सत्संगी है जिसके द्वारा कथा, वार्ता धर्म चर्चाका काम होता है।
६–मित्र वह है जो रोग शोकमें सान्त्वना देता है, दवा दारु करता है तथा वैयावृत्ति करता है।	६–'जैनमित्र' भवरोगसे दुखी व सन्तप्त मनुष्योंको आध्यात्मिक लेखों द्वारा इस प्रकार सान्त्वना देता है कि मनुष्य जन्म पाकर आत्महित करनेका अवसर मिला है, यदि सम्यक् बोधको प्राप्त करेगा तो शीघ्र ही इस अनादिके भवरोगसे मुक्त हो जायगा तथा शरीरके रोगोंके लिये समय२ पर स्वास्थ्यके नियमों पर प्रकाश डालता रहता है, रोगोंके प्राकृतिक, वैद्यक व योगिक उपचार तथा उचित आहारपान व पथ्यकी विधि बताता रहता है। उसके आध्यात्मिक लेखों द्वारा मानसिक वैयावृत्ति भी होती है।
७–मित्र कठिन समस्याओंके उपस्थित होने पर उचित सलाह मशवरा देकर पूरा२ सहयोग देता है।	७–'जैनमित्र' किसी भी प्रकारकी कठिन समस्या उपस्थित होनेपर उसके समाधानके लिये विद्वानों व नेताओं द्वारा पक्ष विपक्षमें लिखे गये लेखोंको प्रकाशित करके इन समस्याओंको हल करनेमें सहायक है।

८—मित्र वह है जो शत्रुसे बचाता है।	८—जीवके अनादिकालसे कर्म शत्रु हैं। इनमें राजा मोह है तथा क्रोध, मान, माया, लोभ, अज्ञान आदि सेना है। इनसे बचानेके लिये 'जैनमित्र' त्यागी महात्माओं व अन्य विद्वानोंकी आध्यात्मिक व व आचार, विचार, संयम तप त्यागमें दृढ़ करनेवाली वाणीका प्रकाश करता है जिससे कि सम्यग्ज्ञान प्राप्त करके, भेद विज्ञानके द्वारा दृढ़ संकल्प करके, चारित्ररूपी रथपर चढ़कर क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच आदि अमोघ शस्त्रों द्वारा यह जीव कर्मशत्रुका नाश करता है। इस प्रकार 'जैनमित्र' शत्रुसे बचानेका प्रयत्न करता है।
९—सच्चा मित्र परमेश्वरतुल्य होता है।	९—'जैनमित्र' पाठकोंको संसार-बंधनसे छुड़ाकर मोक्षकी राह बताने तथा परमेश्वरकी वाणीका प्रकाश करनेके नाते परमेश्वर तुल्य है। परमेश्वरसे अपना असली पद प्राप्त करनेकी प्रेरणा मिलती है उसी प्रकार जैनमित्रसे भी मिलती है।
१०—मित्र वह है जो बदलेमें प्रत्युपकार न चाहे।	१०—'जैनमित्र' परोपकारकी दृष्टिसे सम्पादन व प्रकाशन किया जाता है। इसका कार्य व्यापारिक ध्येय नहीं है। इसलिये बदलेमें किसी प्रकार भी प्रत्युपकार नहीं चाहता।
११—मित्र सदा अवसर अपने मित्रको अनेक उपहार भेंटमें देता है।	११—'जैनमित्र' भी हर साल कोई न कोई उपयोगी ग्रन्थ तथा तिथिदर्पण अपने पाठकोंको भेंट स्वरूप देता है।

'जैनमित्र' की मैं 'क्या प्रशंसा करूं' पाठक स्वयं इसका अनुभव करते होंगे। दिगम्बर जैन समाजको इस पत्रसे बड़ा लाभ पहुंचा है। इस पत्रके पाठ पाठके जीवनमें इसको मूर्त रूपसे प्रगट करनेका श्रेय अधिकतर सेठ मूलचन्द किसनदासजीको है, तथा अधिक समय तक सफल सम्पादनका श्रेय स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीको है, तथा जिन पंडितोंने प्रकाशनमें सहयोग दिया वे अच्छे विद्वान बन गये और इसको पत्र सम्पादन व प्रकाशनकी कला आ गई। मैं इन महानुभावोंका समाजकी ओरसे आभार मानता हूं। मुझे याद है कि प्रारम्भमें 'जैनमित्र' को पढ़ कर ही १९२३ में मैंने स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीसे सम्पर्क स्थापित किया था, तथा मुझे सामाजिक कार्यक्रमोंमें भाग लेनेकी रुचि पैदा हुई व प्रेरणा मिली। ब्र० शीतलप्रसादजीने "जैनमित्र"के द्वारा जैन समाजकी जो सेवा की है, वह भुलाई नहीं जा सकती। समयवार सुधी औषधि पाठकोंको घोलकर पिला दी। उत्तरसे दक्षिण व पूर्वसे पश्चिम तक जैन समाजमें एक जागृति पैदा कर दी। बहुतसे अंग्रेजी पढ़े लिखे विद्वानों व नवयुवकोंमें धर्म व समाज सेवाकी लगन पैदा कर दी, वे अपने भ्रमण द्वारा तो इस कार्यको करते ही थे, परंतु 'जैनमित्र' इस कार्यमें बड़ा सहायक रहा है, ब्रह्मचारीजीके १९२४ के पानीपत चतुर्मासमें मैंने देखा है, कि वे किस प्रकार 'जैनमित्र' के लिये उपयोगी सामग्री एकत्रित करके समय पर प्रकाशनके लिये भेजा करते थे, तथा अनुवादके लिये महान ग्रन्थोंकी स्वयं सरल

जैनधर्मकी शिक्षाके विषयमें—आजकी आवश्यकता

(लेखक—पं० हीरालालजी जैन शास्त्री, न्यायतीर्थ—देहली)

शिक्षा-संस्थाओंमें दी जानेवाली धार्मिक या लौकिक शिक्षा की आज जैसी दुर्दशा है, उससे प्रत्येक शिक्षा-शास्त्री असन्तुष्ट है। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद कई बार कह चुके हैं कि वर्तमानकी शिक्षा प्रणालीमें परिवर्तन किया जाना आवश्यक है। श्री श्रीप्रकाश, श्री के० एम० मुन्शी आदिने भी समय-समय पर अपने इसी प्रकारके विचार प्रकट किये हैं। पर यह दुर्भाग्यकी ही बात है कि स्वतंत्र राष्ट्रके राष्ट्रपति और राज्यपालोंके उक्त कथनके बावजूद भारतकी स्वाधीनता प्राप्तिके पूरे बारह वर्ष बीत जाने पर भी शिक्षा-प्रणालीमें कोई समुचित परिवर्तन नहीं किया गया और न निकट भविष्यमें होनेके कोई आसार ही दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

यह तो हुई भारतवर्षके सामूहिक शिक्षा जगतकी बात। अब लीजिये जैन जगत्के शिक्षा-क्षेत्रकी बात। सन् १९३३में मैंने 'शिक्षा समस्या' शीर्षक एक महा निबन्ध लिखा था, जो 'जैनमित्र'के लगभग २१ अंकोंमें क्रमशः प्रकाशित हुआ था। तबसे लेकर आज तक शिक्षाके क्षेत्रमें अनेक महान परिवर्तन हो गये हैं और विज्ञानके सर्वतोमुखी आविष्कारोंने जैन विद्वानोंके सामने अनेक नये-नये सांस्कृतिक एवं भौगोलिक प्रश्न उपस्थित कर दिये हैं। यदि इस समय उन प्रश्नोंके समुचित समाधानका कोई सामूहिक प्रयत्न नहीं किया गया, तो यह निश्चित सा दिखाई दे रहा है कि थोड़े ही समयमें लोगोंकी जैनधर्मके प्रति बची खुची श्रद्धा भी समाप्त हो जायगी।

आजसे २५ वर्ष पूर्व जैन विद्यालयोंमें जैन धर्मकी शिक्षा पानेवालोंकी जितनी संख्या थी, आज वह एक चतुर्थांशसे अधिक नहीं है और यदि अभिरुचिकी अपेक्षा तबसे अबकी संख्या देखी जाय, तो शायद वह शतांश भी नहीं ठहरेगी। आज थोड़े-बहुत जो छात्र जैन विद्यालयोंमें धर्मशिक्षा पा रहे हैं, वह कोई धार्मिक अभिरुचिसे नहीं; अपितु विवश होकर असमर्थता-भावके कारण पा रहे हैं। उनका दृष्टिकोण मात्र इतना ही है कि जिस किसी प्रकार विद्यालयोंकी परीक्षामें उत्तीर्णता प्राप्त कर ली जाय, जिससे कि उनके छात्रावासोंमें रहते हुए अपनी लौकिक शिक्षा प्राप्तिका उद्देश्य सहजमें सधता चला जाय। ऐसी स्थितिमें पाठक स्वयं ही विचार कर सकते हैं, कि इस प्रकारकी मनोवृत्तिके रहते हुए शास्त्री परीक्षा पास करनेवाले व्यक्तियोंको कितना शास्त्रीय ज्ञान होगा और उसके फलस्वरूप वे भावी पीढ़ीको क्या शास्त्रीय ज्ञान प्रदान कर सकेंगे!

वर्तमानमें लोगोंकी धार्मिक श्रद्धा दिन पर दिन लुप्त होती जा रही है, उसे बचाये रखनेके लिये समग्र जैन समाजको एक होकर इस ओर सोचनेकी आवश्यकता है

टांका करते थे। इस प्रकार 'जैनमित्र' के हीरक जयन्ती अवसर पर एक हाकरी मित्रकी मैं हृदयसे प्रशंसा करता हूं। १९२३ से अबतककी 'जैनमित्र' की फाईल जिल्दबद्ध दि० जैन शास्त्र भंडारमें सुरक्षित रक्खी हैं जोकि ऐतिहासिक व सैद्धांतिक ग्रन्थोंका काम देती हैं और समय २ पर काम आती हैं।

कि आजके युगकी मांगोंको कैसे पूरा किया जाय? प्रतिदिन जो नये-नये प्रश्न सामने आ रहे हैं, उनका क्या समाधान किया जाय और कैसे धार्मिक श्रद्धाका स्थिरीकरण किया जाय। जैन समाजके सामने आज जो प्रश्न विचारनेके लिए उपस्थित हैं, वे इस प्रकार हैं—

(१) जैनधर्मका वैज्ञानिक रूप क्या है?

(२) जैनतत्त्वोंका क्या विश्लेषण संभव है? यदि है तो कैसे?

(३) जैन शास्त्रोंमें बतलाई गई भूगोल और खगोल सम्बन्धी बातें क्या सत्य हैं? यदि है तो कैसे?

(४) क्या जैनधर्म विश्व धर्म होनेके योग्य है? यदि है तो कैसे?

(५) आजके युगमें जैनधर्मका प्रचार कैसे किया जाय?

उपर्युक्त प्रश्नोंके समाधान करनेके लिए आवश्यक है कि दि० श्वे० दोनों समाजोंके विद्वान लोग एक गोष्ठीका आयोजन करें, पठन-पाठनके क्रमका नये सिरेसे संशोधन करें, पंचवर्षीय योजना एवं बनायें धर्मायतनोंका द्रव्य एकत्र संचयकर धर्मके प्रचारमें और आजकी वैज्ञानिक प्रणालीसे नवीन पीढ़ीको शिक्षित दीक्षित कर उनके द्वारा उपर्युक्त प्रश्नोंका समुचित समाधान मांगें और उसे संसारके सामने रखें।

शिक्षा संस्थाओंके सुधारके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें तीन वर्गोंमें विभाजित कर दिया जाय—

(१) पाठशाला—जिनमें प्रवेशिका और मैट्रिक तककी पढ़ाईका समुचित प्रबन्ध हो।

(२) विद्यालय—जिनमें विशारद और मध्यमाके साथ इण्टर मीडिएट तककी शिक्षाकी व्यवस्था हो।

(३) महाविद्यालय—जिनमें शास्त्री और आचार्य तककी पढ़ाईकी व्यवस्था हो, तथा जिनमें रहते हुए छात्र M. A. और M. Sc. की परीक्षा बिना किसी बाधाके दे सकें।

आजकी मांगके अनुरूप विद्वानोंको तैयार करनेके लिए यह आवश्यक है कि समाज कुछ विशेष छात्रवृत्तियां देवें, उसके पात्रोंका निर्णय निम्न प्रकारसे किया जावे—

(१) प्रवेशिका और मैट्रिकमें एक साथ ७५ प्रतिशतसे ऊपर अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण होनेवाले ५ छात्रोंको ३५) रु० मासिक भोजनके अतिरिक्त।

(२) शास्त्री और बी० ए० प्रथम श्रेणीसे उत्तीर्ण करने पर ५०) मासिक।

आचार्य और एम० ए० या एम० एस० सी० प्रथम श्रेणीसे उत्तीर्ण करने पर उन छात्रोंको ३ वर्षके लिए २००) मासिककी रिसर्च स्कालरशिप दी जावे, तथा उनको देश और विदेशमें शोध-खोज करनेके लिए अनुसन्धान एवं प्रयोगशालाओंमें भेजा जावे।

जब वे लोग अपनी रिसर्च पूरी कर लें, तब समाजका कर्तव्य है कि वह जैन शिक्षा संस्थाओंमें उच्च पदपर और उच्च वेतनपर उन्हें शिक्षक एवं प्रचारकके रूपमें नियुक्त करें।

इसके लिए एक दशवर्षीय योजना बनाकर समस्त जैन समाजकी शिक्षा संस्थाओंके प्रमुख विद्यार्थियोंको प्रवेशिका और मैट्रिककी कम्पटीशन परीक्षाके लिए आमंत्रित किया जावे और उनमेंसे प्रथम श्रेणीसे उत्तीर्ण होनेवाले ५ छात्रोंको ऊपर बतलाई गई विशेष छात्रवृत्ति देकर आगेकी पढ़ाईके लिए प्रोत्साहित किया जावे। आगेके वर्षोंमें आगे-आगेकी पढ़ाईकी वृत्ति

महत्व स्वीकार किया यह है उनकी एकनिष्ठ साधनाका फल। आप समाजके एक निष्काम साधक हैं। आपने समाजकी अटूट सेवाएं की हैं।

संस्कृतिकी रक्षा तथा विकासका एक साधन शिक्षा है। स्वर्गीय पूज्य ब्रह्मचारीजीने शिक्षाको स्थिर रूप देनेमें बड़ा भाग लिया था। ब्रह्मचारीजी अनन्य कृपाके कारण श्री कापड़ियाजीने भी पूर्ण भाग लिया है। जैनमित्र द्वारा उन्होंने समाजमें कवियों एवं लेखकोंकी जननी होनेका उत्तरदायित्व भी निभाया है।

६० वर्षसे जैनमित्रके द्वारा आपने साहित्य और शिक्षा, इतिहास और धर्म, राजनीति और समाज, सबका ज्ञान जैन समाजके लिये सुलभ कर दिया है।

यदि कोई मुझसे पूंछे कि उन्होंने क्या किया ? तो मैं समय जैनमित्रकी फाइलों आधुनिक लेखकों, कवियों और आधुनिक जैन साहित्य दिखाकर कह सकता हूँ कि यह सब उनकी ही सेवाका फल है।

श्री कापड़ियाजीके भूतपूर्व सहयोगी ब्र० पं० दमोदरजी सागर, श्री. पं. परमेष्ठदासजी न्यायतीर्थ ललितपुर, तथा वर्तमानमें श्री पं० स्वतंत्रजीका परिश्रम प्रशंसनीय है, आप लोगोंने जैनमित्रको उन्नतशील बनानेमें कोई कसर नहीं रक्खी। इसीका फल है कि आज जैनमित्र हजारों भाइयोंके घरोंमें पहुँचता है। और दिन प्रतिदिन उसकी मांग बढ़ती ही जाती है। समाजमें कितने ही पत्र हैं, परन्तु जैनमित्र किसी भी पक्षका पक्षपाती नहीं रहा, और न है। इसी कारण जैनमित्र सबको प्रिय है। जैनमित्रमें ऐसा आकर्षण है, कि इसको सभी बड़े प्रेमसे पढ़ते हैं। और गुरुवारके बाद ही जैनमित्रके आनेकी टकटकी लगाये रहते हैं।

जैनमित्र जैन समाजकी दशा सुधारने और समाजमें जागृति पैदा करनेके लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहा है।

इस बातमें कोई संदेह नहीं, कि बीसवी सदीके जैन साहित्यके इतिहासमें जैनमित्र, तथा कापड़ियाजीकी सेवायें अपना विशेष स्थान रखती हैं। वे निःसंदेह इस युगके आदर्श पुरुष हैं। उन्होंने समस्त जैन समाजकी बड़ी२ सेवाएं की हैं।

अन्तमें मैं भगवान महावीरस्वामीसे प्रार्थना करता हूं। कि जैनमित्र दिन प्रतिदिन तरक्की करता हुआ हजारों वर्ष तक प्रकाशित होता रहे। तथा जैन समाजका कोई भी घर जैनमित्रसे वञ्चित न रहे। तथा श्री कापड़ियाजी नीरोग, और दीर्घजीवी होकर "जैनमित्र" व समाजकी सेवा करते रहें यही मेरी हार्दिक कामना है।

आज इस शुभ अवसर पर श्रद्धाके ये पुष्प उन्हें समर्पित हैं।
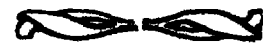
सत् सत् श्रद्धांजलि

"जैनमित्र" जैन समाजका दीप्तिमान प्रगतिशील साप्ताहिक प्रमुख पत्र है। यह ६० वर्षसे सतत् जैन समाजकी सेवा करता आ रहा है। जिसका श्रेय समाजके प्रतिभाशाली प्रकाण्ड निष्पक्ष विद्वान सम्पादक मूलचन्दजी व स्वतन्त्रको है। वे अपनी अटूट सेवाएं जैनमित्रको देकर जैन मित्र बना रहे हैं। भगवानसे प्रार्थना करता हूं, कि निरन्तर बिना विक्षेपके अनवरत मानवको जैन धर्म, संस्कृति, कलाका प्रकाश दिव्य सन्देशों द्वारा विश्वमें आलोकित होता रहेगा। ऐसे प्रभावना युक्त पत्र जैनमित्रको सत सत श्रद्धांजलि अर्पण करता है।

—बाबूलाल "फणीन्द्र" शास्त्री, बालेगांव।

जुग जुग जिओ जैनमित्र

जिस जैनमित्रका जन्म, बचपन, यौवन मैंने देखा अब वह धर्मका सेवक साठ वर्षका हो गया। उसकी हीरक जयन्तीका मधुर प्रसंग आ गया। इससे मेरे मनको बड़ा आनन्द है। पत्रने खूब सेवा की। कभी २ उसकी दृष्टि मेरी निगाहमें उद्देश्यके बाहर भी पहुँच गयी थी। बाद हृदय कापड़ियाजीने इसे प्रेमका सन्देशवाहक बना दिया। पत्र एकांतवादके रोगमें न फँसकर अनेकान्तवाद पर चले तथा लोगोंको चलावे यह मेरी कामना है। मेरा जीवन संध्याके समीप है। शरीर छोड नहीं रहा है, वह शिथिल बन रहा है। इच्छा है कि मैं अपने पुराने साथियों धर्मसेवकों तथा वर सेठ हुकुमचन्दजी सदृश स्वर्गीय मित्रों तथा सहयोगियोंके पास चला जाऊं। यह तो व्यवहारकी बात है, यथार्थ ही मैं अपनी आत्माके अपने घर में पहुँचना चाहता हूं। निरंतर पंचपरमेष्ठीके पुण्य चरणोंका स्मरण करता हूं। थोडे दिनका मेहमान और हूं। मैं जैनमित्रको हृदयसे आशीर्वाद देता हूँ कि यह समाज प्रिय पत्र प्रगतिशील होता रहे और इसकी शत वर्षी मनानेका भी सुदिन समाजके समक्ष आवे।

मैं चाहता हूं कि जैनमित्र प्रशंसाकी लालचमें न फँसकर सच्चे धर्मका तथा वीतराग शासनका समीचीन रूपसे प्रकाश फैलाता रहे, मेरा आशीर्वाद है "जुग जुग जिओ जैनमित्र"।

—सि० कुँवरसेन, सिवनी

[सम्पादकीय—श्रीमान् सिंघई कुंवरसेनजी सिवनीने जैन समाजकी गजबकी सेवा की। वे दिगम्बर जैन समाजके श्रेष्ठ नेताओंमें हैं। सिंघईजी बड़े कुशल कार्यकर्ता, प्रखर वक्ता, लेखक, नेता, तथा मार्गदर्शक रहे हैं। उनने परवार सभाको जन्म दिया, बहुत वर्षों तक मंत्री रहकर सभाको जीवित संस्थाका रूप दिया। वे हमारे घनिष्ठ मित्र और स्नेही हैं। उन जैसे पुराने साथी, सहयोगी, सदर्थ समाज नेताके आशीर्वादको पाकर हमें जो हर्ष हुआ वह वर्णनातीत है। पूज्य सिंघईजी अधिक समय तक समाजको आशीर्वाद देते रहें यह जैनमित्र परिवार कामना करता है।]

शुभ कामना

आज जैनमित्रका हीरक जयंति अंक निकल रहा है। जैनमित्रने जैन समाजको कुरीतियोंसे बचाया है और सदैव नवीन आशाका संचार करता रहा है, जिसने जैन जातिको एकत्रित करके महान कार्य किया है। आशा है इसी प्रकार सदैव हमारी समाजमें सर्वदा जागृति उत्पन्न कर जैन-धर्मको उन्नतिकी चोटी पर पहुँचानेमें सहयोग देता रहेगा, इसके चिरायु होनेकी हृदयसे कामना करता हूँ।

ज्ञानचन्द्र जैन, ग्वालियर (भिलसा)

श्री ब्रह्मचारी सीतलप्रसादजी और जैनमित्र

[लेखक—कविरत्न पं० गुणभद्रजी जैन, अगास]

श्रीमान् स्वर्गीय ब्र० शीतलप्रसादजी और जैनमित्रसे जैन-समाज अच्छी तरहसे परिचित है। वे अन्त तक समाज सेवासे पीछे नहीं हटे थे। समाजके लिये उन्होंने क्या नहीं किया! वे बच्चोंसे लेकर बूढ़ों तकके परिचयमें आते और उन्हें उनके योग्य मधुर शब्दोंमें उपदेश देते। उनको दिनरात समाजोन्नतिकी चिन्ता लगी रहती थी। इसके लिये वे अविराम परिश्रम करते थे। वे मानते थे कि शिक्षा बिना कोई राष्ट्र, धर्म और समाज उन्नत नहीं हो सकता। ज्ञान उन्नतिका मूल है। इसीसे ही ठोस उन्नति नहीं हो सकती है। ज्ञान प्रचारार्थ ब्रह्मचारीजीने अनेक विद्यालय तथा पाठशालाएं स्थापित करायीं। जहां भी आप पहुंचते और देखते कि पाठशालाके अभावसे समाजमें धार्मिक ज्ञान नहीं है तो वे शीघ्र ही पाठशाला अथवा कोई ऐसी ही संस्था जिससे धार्मिक ज्ञान बढ़े, खोलनेका वहांकी समाजसे अनुरोध करते थे।

उनसे मेरा परिचय ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुरके अधिष्ठाता थे तबसे अन्त तक बराबर रहा। अंतिम दिनोंमें कभी२ आप 'श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम' में आकर स्वानुभवकी आध्यात्मिक गंगा बहाया करते थे। आध्यात्मिक चर्चासे सभीको प्रायः आनंदित करते थे।

मुझे आज भी उनके वाक्य याद हैं—जब वे आश्रमके अधिष्ठाता पदपर थे और हम लोगोंको धार्मिक सदा उपदेश दिया करते थे। वे कहते थे कि भाइयो, समाजकी लगाम तुम्हारे हाथमें है, तुम ही इसे उन्नत कर सकते हो, खूब ज्ञान सम्पादन करो। ज्ञानमें आलस्य न करो। भाषण देते समय बड़े जोशमें आकर मेज पर मुष्टिका प्रहार करते थे। पूजनमें आपको बड़ा आनन्द आता था। कवि मनरंगलालजी कृत "भगवान शांतिनाथ पूजा" की जयमाला आप बड़े ही भावपूर्ण स्वरमें गाते थे तथा दूसरोंसे बुलवाते थे। वे जैन धर्मके श्रद्धालु थे। अपने पदकी क्रियाओंमें कभी त्रुटि नहीं आने देते थे। रेलमें भी बैठे बैठे सामायिक कर लेते थे। स्वभावमें नम्रता थी, विरोधीकी भी निंदा करनेमें आप भयंकर पाप समझते थे। वे समाजके सभी दलोंसे मिलते रहते थे। कोई खास पक्षपात न था।

विचार भेद होनेपर भी आपको किसीसे द्वेष नहीं था। अवसर पड़नेपर यदि कुछ कहना पड़े तो अवश्य कहते थे, लेकिन फिर उस बातको भूल जाते थे। लिखने पढ़ने और व्याख्यान देनेका तो आपको एक व्यसन-सा ही पड़ गया था। जहां भी पहुँचते थे वहां अवश्य सभा कराके कुछ न कुछ उपदेश दे डालते थे। लिखनेमें सदैव व्यस्त रहते थे और इसीसे उन्होंने अपने जीवनमें बहुतसे ग्रन्थोंका अनुवाद व स्वतंत्र ग्रंथ लिखे थे। तारण पन्थके ग्रन्थोंका भी आपने यथाशक्ति अनुवाद किया था, जिससे उस समाजमें उनका काफी प्रचार हुआ। अनुवाद पहले तो उनका समझना ही कठिन

था। वर्षोंसे वे गांधी या दयानन्द कहे जाते थे।

ब्रह्मचारीजीका मुख्य अखबार जैनमित्र था, वर्षों तक आप इसके सम्पादक रहे। यह पत्र प्रथम गुरु गोपालदासजी बरैयाके सम्पादकत्वमें बम्बईसे मासिक रूपसे निकलता था। बम्बईसे अन्यत्र जानेके कारण गुरु गोपालदासजीने पत्रकी सम्पादकीसे स्तीफा दे दिया इससे पत्र कुछ दिनों तक बन्द रहा। बादमें बम्बई दिगम्बर जैन प्रांतिक सभाने तारंगाके अधिवेशन पर ब्रह्मचारीजीकी अनुपस्थितिमें उन्हें जैनमित्रका सम्पादक बनानेका प्रस्ताव रखा, जो सर्वानुमतिसे पास हुआ।

ब्रह्मचारीजीने इसे एक पुण्य कार्य समझ स्वीकार कर लिया था। तत्पश्चात् मित्रका प्रकाशन सूरतसे श्रीमान् कापड़ियाजीकी देखरेखमें प्रारंभ हो गया! आजतक नियमित रूपसे चल रहा है। पत्र मासिकसे पाक्षिक हुआ और फिर साप्ताहिक। जैनमित्र नियमित है, समयपर सूरतसे प्रगट होता है, नये नये समाचार व लेखोंसे भरा रहता है। श्रीमान् कापड़ियाजी तथा पं० स्वतन्त्रजी इसको सुन्दर बनानेमें अच्छा परिश्रम करते हैं।

ब्र०जी जैनमित्रको लोकप्रिय बनानेके काफी आतुर थे। उन्होंने मित्रमें विरोधी तथा कलह-प्रिय लेखोंको कभी भी अवकाश नहीं दिया। वे आगमोक्त बातकी ही पुष्टि चाहते थे और ऐसी ही बातोंको जैनमित्रमें स्थान देते थे। ब्रह्मचारीजीकी सदा यही भावना रही कि इस पत्र द्वारा समाजमें सत्य, अहिंसा, न्याय, नीति और धार्मिक भावनाका प्रचार हो। पक्षापक्षमें कोई काम नहीं है, इससे समाजकी दलबन्दी बढ़ती है, जिससे कुरीतियोंका पोषण होता है। जैनमित्रने जिस बातको सत्य समझा उसे प्रगट करनेमें जरा भी नहीं हिचकिचाया। त्रिलोकसार आदि अष्ट ग्रन्थोंका बड़े जोर शोरसे विरोध किया। यों तो जैन समाजमें अनेक पत्रोंका जन्म हुआ, परन्तु एक मित्र ही ऐसा पत्र है जो अनेक संकटोंमें भी जीवित रह सका। आर्थिक घटा भी रहा और बहिष्कारके प्रस्तावसे चलित न हुआ।

आज तो जैनमित्रके बहिष्कारके प्रस्तावकी अनुमोदना करनेवाले इसे सहर्ष और नियमित पढ़ते हुए जाते हैं। ब्रह्मचारीजीने जैनमित्रको आदर्श पत्र बनानेमें खूब ही प्रयत्न किया। मित्र और वे एकमेव हो गये थे मानों जैनमित्र ही उनकी आत्मा था। वे जहां पर इस पार्थिव शरीरसे नहीं पहुंच पाते थे वहां उनका जैनमित्र उनका संदेश सुनाता था। हीरक जयंतिका अवसर जैनमित्र तथा उसके कार्यकर्ताओंके लिये अतिशय गौरवकी बात है। मित्रकी सेवायें अपूर्व और अनुपम हैं। इस छोटेसे लेखमें उनका उल्लेख करना अशक्य है।

शुभ कामना

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि आप जैन-मित्रका हीरक जयन्ती अङ्क निकाल रहे हैं। गत ६० वर्षोंसे जो सेवायें इस पत्र द्वारा हुई हैं उससे देशके कल्याणमें बहुत सहायता मिली है तथा समयपर उचित सुझाव या सुन्दर लेखों द्वारा जो अहिंसा या सत्यका प्रचार हुआ है अकथनीय है। इस पत्रने हमेशा सामाजिक कुरीतियों एवं दलगत भावोंको हटानेमें अतीव सफलता प्राप्त की है।

वास्तवमें मानवको मानव धर्म द्वारा शांति मार्गपर अग्रसर होनेका पथ प्रदर्शन करना ही इसका परम ध्येय रहा है, यही कारण है कि "जैनमित्र" ही नहीं वरन् विश्वमित्र बनकर हमेशा क्षेत्रमें उपस्थित रहा यही इसकी सार्थकता है, जिसका पूर्ण श्रेय हमारे वयोवृद्ध कापड़ियाजीको है साथ ही श्री 'स्वतंत्रजी' के सुन्दर लेख हृदयग्राही एवं आकर्षक होनेसे मित्रकी सार्थकता सिद्ध हो जाती है।

मैं इस शुभ अवसर पर इस विश्व-शांति प्रचारक मित्रको अपनी शुभ कामनायें प्रेषित कर रहा हूँ और यह पत्र उन्नतिके शिखरमें रहकर शतायु हो या विश्व-शांतिके हेतु अपनी सेवायें करनेमें अग्रसर होकर सदैव प्रस्तुत रहे यही हमारी हार्दिक शुभ भावना है।

कपूरचन्द जैन संयोजक जैन समाज
अमरपाटन, (सतना-म० प्र०)

शुभाशीर्वाद

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि जैन-मित्रका हीरक जयंति विशेषांक प्रकाशित हो रहा है। ६० वर्षोंमें जैनमित्र द्वारा की गई समाजकी सेवायें बेजोड़ हैं। अनेक विपत्तियोंका सामना करते हुए सफलता पूर्वक साठ वर्षोंका लम्बा काल व्यतीत करना ही इसकी महान् सफलता है। और इस सफलताका श्रेय इसके सुयोग्य संपादक श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाको है कि जिन्होंने अपना सारा जीवन जैन समाजके अनन्य मित्र इस जैनमित्रको समर्पित कर दिया है। हीरक जयंतिके शुभावसर पर मैं अपने शुभाशीर्वाद प्रेषित करता हूँ।

—भ० यशकीर्ति (प्रतापगढ़)

विश्व शांतिकी समस्याएँ

लेखक—
नवल किशोर जैन
[illegible] M. A. [illegible]
हिम्मतनगर

आजका युग हिंसा युग है। एक राष्ट्र दूसरेको हड़प जानेकी कोशिशमें है। प्रेमका नाम नहीं, अहिंसाका कार्य नहीं। केवल छलछिद्र, असनुचित, अधर्मिक आचरण, पाप प्रवृत्तियोंमें ही लोग अपनेको कृत कृत्य समझकर अपने कर्तव्यकी इतिश्री समझते हैं। एक देश तोपका गोला तैयार करता है, तो दूसरा अणुबम, एक विषैली गैस तैयार कर अपनेको बुद्धिशाली एवं प्रतिभाशाली मानता है, तब दूसरा कोई अनोखा ही भयंकर प्रतीकार करके अपनेको उच्च कोटिमें गिननेकी कोशिश करता है। जहां देखो अशांति, अकुशलताका साम्राज्य है, ऐसी अवस्थामें विश्वमें शांति कहां!

जर्मन इंगलैंडका युद्ध, रूस व अमेरिकाकी भीषण लड़ाई, कोरियाके लिए रूस और अमेरिकाकी नीति देखकर रोंगटे खड़े होते हैं। क्या संसारमें किसीको भी शांति प्रिय नहीं या शांतिकी समस्याको कोई जानता ही नहीं! यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि अमेरिका जैसे बड़े२ राष्ट्र इतने धनी, बुद्धिशाली होते हुए भी क्यों अशांतिके तूफानमें पड़े हुए हैं! कितने बड़े२ शिक्षावेत्ता, नीतिज्ञ, पत्रोंके सम्पादक, लेखक, आलोचक एवं राष्ट्रके कर्णधार होते हुए भी विश्वशांतिकी समस्याको न सुलझा सके।

इसका मुख्य कारण यही है कि वे अभी तक उस विश्वशांतिकी समस्याको हल करनेके लिए न तो सबसे सफल ही हुए हैं और न अभी तक वे उन साधनोंको ही अपना सके कि जिनसे विश्वमें शांति स्थापित कर सकते हैं। शांति साम्राज्यका डंका बजा सकते हैं।

विश्वशांतिके लिए न [illegible]की आवश्यकता है और न फौजकी! न अणुबमकी जरूरत है और न तोपके गोलोंकी। भारतके भाग्य विधाता महात्मा गांधीजीने आजकलके लिए विश्वशांतिके लिए यही मुख्य दो उपाय बताये थे जिन्हें सर्व प्रथम महावीर व गौतमने अपनाया था। वे हैं-सत्य और अहिंसा।

सत्य अहिंसाके बल पर ही रामने रावणको जीता पांडवोंने दुष्ट दुर्योधनको पराजित किया। सत्यसे हरिश्चन्द्र जैसे राजा सम्मानित हुए। सत्यसे दशरथ राजा यशस्वी बने। आज तक जिस जिसने सत्य एवं अहिंसाका पालन किया, उन्हें संसारमें कोई न हरा सका। प्राचीन कालमें भी जब सत्य व अहिंसाका बोलबाला रहा तो अब क्या सत्य, अहिंसामें विश्वशांतिके लिए शक्ति न होगी! महात्माजीने इसी सिद्धांतको अपनाया तो १७५ वर्ष शासित, भारत माताका रक्त चूसनेवाले अंग्रेजोंको भारतसे विदा कर ही दिया। महात्माजी सत्य एवं अहिंसाका अणुबमसे भी अधिक मूल्य आंकते थे। जो कार्य बड़े बड़े सुदर्शन चक्र, गदा, तलवार व तोपके गोलोंसे भी नहीं सम्पन्न हो सकते वे सत्य-अहिंसासे क्षणमात्रमें सिद्ध हो जाते हैं।

यदि सम्पूर्ण राष्ट्र इस सिद्धांतके अनुयायी बन जावें,

राष्ट्रके कर्णधार यदि सबसे अपने मनसे विद्वेष भावको हटाकर मनीषियोंके पास अमृतका सेवन करें तो यही मर्त्य-लोक स्वर्गधाम बन सकता है। केवल देर है मनोंसे मनोमालिन्य हटानेकी, सन्तोष सुधा पीनेकी, शांतिरसका अनुपान अनुसरण करनेकी। जब हम अहिंसाके सिद्धांतसे सबको सबके हक देकर अपने २ हक पर ही सन्तोष करेंगे तो फिर विश्वमें शांति क्यों न होगी! सब अपना अपना राष्ट्र संभाले। दूसरे राष्ट्र पर कुदृष्टि न रक्खें। एक दूसरे राष्ट्रकी मदद करें।

जहां खानपानकी अधिकता है वहांवाले कम अन्न-वाले देशोंको अन्न देवें। प्रेमभावसे रहें। यह सब निर्भर है—राष्ट्रके निस्वार्थ राष्ट्रपतियों पर। जो इनके राष्ट्रपति ही स्वार्थपूर्ण भावनासे प्रवाहित होंगे तो संसारकी कोई भी शक्ति विश्वमें शांति स्थापित न कर सकेगी। जैसे सेनाका संचालन सेनापति, गुरुकुल या कॉलेजका मेंबर कुलपति करता है वैसे ही देश या राष्ट्रकी रक्षा राष्ट्रपति ही कर सकता है।

राष्ट्रपतिके भाव अपने राष्ट्र और दूसरों राष्ट्रोंके प्रति स्नेह पूर्ण होने ही चाहिये। सत्य और अहिंसा उनकी रग रगमें भरा रहना चाहिये। तब फिर संसारमें अशांतिका नाम न रहेगा, वैर भाव कहीं दिखाई न देगा। चोरी, जारी, लूटफाट सब पातालमें चले जायेंगे। सब, आनंद ही आनंद देखनेको मिलेगा। और भी कितने ही कारण विश्व शांतिकी समस्या हल करनेके लिये हो सकते हैं परन्तु वे सब हिंसापूर्ण हैं। वहां शांति अमर नहीं रह सकती।

सत्यं शिवं सुन्दरं जय हे!

[रच०—श्री... कुमार जैन ..., शाहपुरा।]

जैनमित्र युगके निर्माता,
सत्यं शिवं सुन्दरं जय हे;
आगमके सन्देश प्रदाता।
अणुव्रतके उपदेशक जय हे॥१॥

जिनवाणीके सार नमन हे,
आध्यात्मिक जीवन दाता;
जैनोंके पथ दर्शक जय हे।
मुक्ति रमणिके विधाता॥२॥

अन्धकार अज्ञान विनाशक,
तेज पुञ्ज प्रकाश नमन हे;
ज्ञान और विज्ञान प्रदायक।
मानवके नवजीवन जय हे॥३॥

युगकी अमर कीर्तिके गायक,
भवसागरके तारक जय हे;
जैनमित्र युगके निर्माता।
सत्यं शिवं सुन्दरं जय हे॥४॥

जैनमित्र—के दो आंसू

[ले०—सिं० देवचन्द जैन "निडर", केवलारी]

हर लेखों पर दृष्टि डालना तो पाठकका अपना एक अलग दृष्टिकोण होता है, पर उनके लिये यह आवश्यक नहीं होता कि वे हर विषय पर अपना सहमतिसूचक निर्णय दें। जिस तरह लेखक स्वतन्त्र होता है, उससे कहीं ज्यादा पाठक अपनी रुचिके लिये स्वतन्त्र है। जैनमित्र अपने अनमोल रत्नों सहित नियमित प्रगट होनेके लिये जैन व अजैनमें प्रसिद्ध है। हर विषयके लिये जैनमित्रका चुनाव समाजके आगे अग्रणी रहा है, इसका प्रमाण उसका अविरल प्रकाशन ही है।

इस युगमें समाजके चरित्र निर्माणमें जहां तक चरित्र निर्माणका सवाल है, प्रकाशनोंका ही अधिक हाथ है, आज युग करवट ले रहा है, यह भी बहुत बड़े पैमाने पर बल्कि यह कहा जाय कि युगके २० वर्ष पीछे देखनेवाले व्यक्तिके लिये आजका युग पहिचानना ही मुश्किल होगा, इस करवटकी यादगार हमारी सन्तानके लिये आश्चर्य जनक होगी अगर उनके हाथमें वे पन्नोंकी फाइलें पड़ेंगी।

भले ही हमें यह युग अशांत दिख रहा हो भविष्य अपना कुछ अजीब अन्दाज बना रहे हो, भूकम्प हो, बाढ़ आ रही हो, युद्धकी चिनगारियां सुलग रही हों, जनताको कमीसे घबरा कर अधिकारी अनाप सनाप कानून बना रहे हों पर यह कटु सत्य ही है कि युग बदल रहा है, दुःखके बाद सुखका ही आगमन है संसारको फल प्राप्तिमें कांटोंसे उलझना पड़ रहा है संसार अब अपने भोलेपनकी केंचुली उतार चुका है पोंगा पन्थकी इमारतें धराशायी हो रही हैं। इस युगमें धनकी कोई कीमत नहीं है फिर धन मदमें डूबी समाजकी गिनती तो क्या है। ब्रिटिश उदाहरण है।

आजके युगमें यह एक हास्यास्पद विषय है जब कि जैन समाजमें यह प्रश्न विचारणीय है जिसका अभी भी हल नहीं मिल सका है कि हमें एक होना चाहिए। एकताके लिये बड़े बड़े प्रस्ताव रखे जा रहे हैं पर क्या वे प्रस्ताव सफलीभूत हो सके, क्या उनका हल मिल सका, यह भी कटु सत्य है कि जैन धर्मका नहीं बल्कि जैन समाजका दुर्दिन भी निश्चित है। यह हमारी मनोघातनाका ज्वलंत प्रमाण है। हमारी नीच भावनासे ही हिन्दुओंके बीच अपनेको जैन कहनेमें संकोच होता है। क्या कारण हो सकता है इसका? अब तो अपनी एकता भी कोई कीमत नहीं रखती, हमने अपनी इन भावनाओं द्वारा अपना क्या स्थान बनाया है यह इन पिछले उदाहरणोंसे ही स्पष्ट है। इन अत्याचारोंके विरुद्ध उठी नई आवाजकी क्या प्रतिक्रिया हुई आपकी नजरमें! इन १०-१५ लाखकी गिनतीमें इनेगिने ही व्यक्ति हैं जो समाजकी आंखें खोलनेके लिये प्रयत्नशील हैं इनके शांत होते ही समाजका क्या हाल होगा, क्या इसपर कभी विचार किया गया? मुनि विवाद, शास्त्र आलोचना

आजकलके इन जैन पत्रोंको देखकर हृदयमें एक कसमसी पैदा होती है, क्या लिख रहा है इन जैन पत्रोंको ? क्या वे इस दृष्टिकोणसे अपने पत्रके अङ्क बनाते हैं, कि ये प्रतियां अजैनोंके हाथ भी पड़ती होंगी, तो उनके हृदयमें हमारे प्रति क्या भाव उठते होंगे ?

मुझे आश्चर्य होता है कि इन वादविवाद करनेवालोंका जन्म १०० वर्ष पहिले ही होना चाहिये था। इस पाखण्डका भार समाज पर कैसा पड़ रहा है, यह वे क्या समझ सकते हैं जो अपना स्वार्थ साधन हेतु समाजमें उल्टा पाठ पढ़ा रहे हैं। क्या उस वर्ग विशेषको जैन समाज पर उठ रहे कालके बादलका प्रभाव नहीं पड़ रहा है ? क्या वे यह अन्दाज नहीं लगा रहे हैं कि हम सजग हो पाये कैसे, क्या यह वादविवादका युग है ? काश वे पहले समाजके सुधारमें रंगे गये होते, लेकिन अब समय नहीं रहा, जातिवाद तो कट चुका।

आज हम अपने आगे औरंगजेबके युगका प्रत्यक्ष प्रमाण देख रहे हैं, मूर्ति ध्वंस मंदिर विनाश तो शायद विज्ञापन मात्र ही है अभी बहुत कुछ बाकी है, जिसका कुछ२ आभास मिलने लगा है।

आपको जगानेकी आवश्यकता नहीं है, आप स्वयं चौंक कर उठ जायेंगे, ऐसी योजना बन गई है, आप समाजकी ओर ध्यान न देकर अपना रवैया आप स्वयं बना दें, तो फिर क्या आप उनमें अपनेको बैठा सकते हैं, जिन्हें आपने सदैव हेय दृष्टिसे देखा है। क्या आप हरिजनोंसे अछूत कह सकते हैं ! अगर नहीं, तो अच्छा हो कि आप अपनी पौंगापन्थकी आवाज अपने तक तो सीमित रखें। जैन समाजके लिये जो खाई बन गई है, उसे पाटनेके लिये आप दूसरा कुआं खोदें इससे अच्छा यही है कि उसे अपने कर्मठ भाइयोंके दें।

दस्सा बीसा भेद समाजका अंकुर बनना था। जिसके लिये जैनमित्रने भरसक विरोध किया पर हमारे कट्टर जैन भाईयोंने उन लेखोंको हेय दृष्टिसे देखा और वह पूर्ण रूढ़ बन गया अब सोचिये और देखिये क्या होता है। व्यर्थके प्रस्तावसे कोई लाभ नहीं है न कहना किया कहेगा न सोना होगा जैन समाजके दुर्दिन आ गये हैं, हमें सिर्फ रटना ही तो आता है पूर्ण पूजन भजन कंठाग्र हैं भले ही मनन करना न आया हो इससे क्या। अमुक मंदिर नहीं जाता रात्रि भोजन करता है छनापानी नहीं पीता वह अजैनके हाथका पानी पीता है आदि पर बहस करना तो आता है जातिबन्द मंदिरबन्द आदि कलामें तो हम निपुण हैं। भले ही इसकी प्रतिक्रिया अन्य सुननेवालों पर गलत पड़े जिसका भुगतान हमें वर्तमान स्थितिसे ज्यादा करना पड़े पर हमारी जो आशा बना दी गई है वह न जायेगी चाहे जैनमित्र अपने निकालनेके ६० वर्ष पूर्ण करे या १२० इससे क्या होता है ! अभी जैनधर्म कायम है यही गनीमत है।

अतिशय क्षेत्र श्री अन्देश्वर पार्श्वनाथ

आवश्यक अपील।

आपको यह जानकर हर्ष होगा कि बागड़ प्रान्तमें अतिशय क्षेत्र श्री अन्देश्वर पार्श्वनाथजी अत्यंत निर्जन वनमें स्थित हैं जिसका कि बागड़ प्रान्तमें महान गौरव है। यहां एक प्राचीन तथा एक नवीन इस प्रकार दो गगनचुम्बी जिनालय हैं। इस क्षेत्रकी व्यवस्था कुशलता बीसपन्थी समाजके आधीनस्थ है, किन्तु क्षेत्र पर इस समय निर्माण कार्योंकी अत्यंत आवश्यकता है। जैसे बाहिरका जो मन्दिर है उसका अधूरापन, धर्म-शालाका निर्माण नल योजनाएं आदि अनेक कार्य अवशेष हैं इसलिये समाजसे अनुरोध निवेदन है कि इस धर्म स्थानकी ओर ध्यान देकर अपनी चँचला लक्ष्मीको इस क्षेत्रके निर्माणार्थ प्रदान कर अक्षय पुण्य संचय करें।

इस क्षेत्रपर प्रतिवर्ष जैनाजैन हजारोंकी संख्यामें पधार कर धर्म-लाभ प्राप्त करते हैं तथा कार्तिक सुदी १५ का प्रतिवर्ष मेला भी होता है।

इस क्षेत्रके लिये विधि संचयार्थ क्षेत्रकी ओरसे एक प्रचारक श्री कालुचन्दजी चुन्नी-चन्द बांसवाड़ाके नियत किये गये हैं। आशा है कि प्रचारकसे उपदेशादिकका लाभ उठाते हुये आर्थिक सहायता प्रदान कर अनुग्रहित करें।

—: एक दूसरी अपील :—

इसी क्षेत्रके अनुरूप दूसरा अतिशय क्षेत्र श्री बागोल पार्श्वनाथजी है जो कुशल-गढ़से ३ मील दूर एक सरिताके तट पर स्थित है जो अत्यंत प्राचीन एवं सुरम्य है, किन्तु अत्यंत जीर्ण शीर्ण अवस्थामें होता जा रहा है उसके जीर्णोद्धारकी अत्यंत आवश्यकता है इसलिये समाजसे निवेदन है कि दान करते समय इस क्षेत्रको न भूलिये।

सहायता भेजनेका पता—
मथुरालाल कस्तूरचन्दजी दोशी
मु० पो० कुशलगढ़, वाया उदयगढ़ (राज०)

निवेदक—
सकल दि० जैन बीसपन्थी पंचान
कुशलगढ।

जैनमित्र और कापड़ियाजीके मेरे अनुभव

[ले०—लाकरचन्द माणेकचन्द घड़ियाली, गोपीपुरा-सूरत]

बम्बई दिगम्बर जैन प्रांतिक सभाका पास हिक मुख पत्र "जैनमित्र" ६० साल पूरे करके ६१ वीं सालमें अपना प्रवेश कर चुका है, यह जैन कौमके लिये खास ध्यान खींचनेकी घटना है। जब इस पत्रका जन्म हुआ था तब जैन कौममें तीन फिरके श्वेताम्बर, दिगम्बर और स्थानकवासीके बीचमें अब जो मतभेद दिखाया जा रहा है, ऐसा मतभेद न था फिर भी तीनों पक्ष साथमें मिलजुलकर कार्य करते थे।

बम्बईकी श्री जैन एसोसिएशन ऑफ इण्डिया उस समय जैन श्वेताम्बर पक्षकी ओरसे पालीताणामें नामदार महाराजा साहबके सामने हमारा शत्रुंजय डुङ्गरके मंदिरोंकी मालिकीके लिये लड़त चला रही थी, उस समय श्वेताम्बर और दिगम्बर साथमें मिलकर काम करते थे। उस समयके जैन श्वेताम्बर एवं सिरजनके ... के साथ स्व० दिगम्बर जैन दानवीर शेठ श्री माणेकचन्दजी हीराचन्दजी मिलकर काम करते थे। आप एसोसिएशनके सभ्य भी थे। ऐसे ही स्थानकवासी पक्षके अगुए शेठ मोमण दामजी भी जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजकोंको सहायता कर रहे थे, और ऐसी परिस्थिति निर्माण हुई थी, कि जिससे जैनेतर ऐसा ही मानते थे कि श्वेताम्बर दिगम्बर और स्थानकवासी भी बिना मतभेद जैन कौमकी 'उन्नतिके' लिये परिश्रम कर रहे हैं।

इस कालमें मैं बम्बईके दैनिक 'सांज-वर्तमान' में काम कर रहा था और इसमें मैं जैन घटनाएं और दूसरी घटनाएं प्रसिद्ध करनेका कार्य कर रहा था। 'सांज-वर्तमान' में कार्य करनेके साथ ही दूसरे दैनिक अखबार 'जोरे...' में भी खानबहादुर सेठ दाराशाजी ...की सेवामें मैंने शिक्षा प्राप्त की थी, इसीलिये मैं मुख्य लेख लिखता था और जैन कौमके लिये मैं मुख्यतः लिख रहा था।

इसी समयमें बम्बई दिगम्बर जैन प्रांतिक सभाका जन्म हुआ और शेठ माणेकचन्द हीराचन्दजीने दूसरे दिगम्बर गृहस्थोंके साथ मिलकर "जैनमित्र"को अस्तित्व दिया। सेठ मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया इसी समयमें यौवनकी प्राथमिक शालामें डग भर रहे थे और पूज्य पिताश्रीके साथ सूरतमें बड़े मंदिरमें कपड़ेका व्यापार कर रहे थे। आपके उस समयके मित्रोंमें पारसी पत्रकार दीनशा पेस्तनजी घड़ियाली अपने पत्रकारके क्षेत्रका आरम्भ कर रहे थे और घड़ियालीजी भाई कापड़ियाजीको लेख लिखनेकी शिक्षा दे रहे थे, इसी शिक्षाके फलस्वरूप श्री० कापड़ियाजी एक लेखक बने और दि० जैन कौमकी सेवा करनेके लिये उत्साहित बने और सेठ माणेकचन्द हीराचन्दने भाई कापड़ियाजीको एक योग्य तन्त्री और लेखककी बजहसे दिगम्बर जैन कौमकी सेवा करनेका निश्चय किया और 'दिगम्बर जैन' मासिक निकलता था, बाद पाक्षिक 'जैनमित्र' का कार्य भी कापड़ियाजीने प्रेस खोलकर हाथमें लिया व उसे तुरन्त लाकर साप्ताहिक बनाया जो आज ६१ वर्षका हुआ है।

मेरे मित्र कापड़ियाजीकी शुरूकी परिस्थिति समझाय

गृहस्थ जैसी नहीं थी, फिर भी जैनमित्रके लिये आपने प्राण न्योछावर किया था और आज भी निशदिन उसी तरह ही काम कर रहे हैं।

बम्बईके 'मुंबई समाचार' दैनिक में जब मैंने "साँझ वर्तमान" छोडके काम शुरू किया तब भाई कापड़ियाजी 'दिगम्बर' जैन और 'जैनमित्र'के तन्त्री व प्रकाशककी वजहसे कार्य कर रहे थे और दिगम्बर जैनोंकी उन्नतिके लिये निशदिन १८ घंटे मेहनत कर रहे थे उसकी मुझे सम्पूर्ण प्रतीति है। आप सूरतके दि० जैन मूर्तिपूजक पक्षके साथ गाढ़ सम्बन्धमें आये थे और उसके फल स्वरूप आप जो कुछ भी लिखते थे उसमें श्वेतांबर दिगम्बरोंके बीचमें किसी प्रकारकी कटुता ज्यादा न होने पावें और दोनों सम्प्रदायोंके बीच मीठा सम्बंध रहे ऐसे विचार आप प्रकट करते थे।

'जैनमित्र'के लिये आपका उत्साह इतना था कि देश-परदेश पत्र-व्यवहार रखके समाचार सम्पादन करके जैनमित्रमें प्रकट करते रहे, और इसी तरह आप जैनोंके हरएक पक्षके साथ क्लेशको स्थान न हो जिसके लिये हरएक प्रयत्न कर रहे थे।

इसी वजहसे मैं एक श्वेताम्बर मूर्तिपूजक हूं फिर भी और श्वेताम्बर मूर्तिपूजक कौमके प्रश्नोंकी चर्चा 'मुम्बई समाचार'में 'जैन चर्चा' शीर्षकसे चर्चा कर रहा था। फिर भी मित्र कापड़ियाके साथ मेरी मित्रता चालू रही, और समय-समय पर दिगम्बर मूर्तिपूजकोंके प्रश्नकी चर्चा करनेके लिये मुझे 'दिगम्बर जैन' व 'जैनमित्र' और श्री कापड़िया उपयोगी हो रहे थे।

जबजब मैं बम्बईसे सूरत जाता तब मैं कापड़ियाजीसे अवश्य ही मिलता और आप भी जब बम्बई आते तब हमें अवश्य मिलते और वहां मिलने पर हम समस्त जैन कौमकी चर्चा करते थे। जब मैं सूरत जाता तब मैं आपको सुबह मिलनेके लिये जाता था, तब आप ४-५ बजेसे उठकर जैनमित्रके लिये सम्पादन कार्य करते थे, और लेख लिखते दिखायी देते थे। किसी समय रात्रिको भी अपने प्रेसमें आकर काम करते और जैनमित्रके विकासके लिये कार्य करते थे 'हरिजन मंदिर प्रवेश बिल' बम्बई सरकार पास कर रही थी, उसी समय जैन मंदिरोंकी पवित्रताके लिये आपने समस्त जैन कौमके विद्वान गृहस्थकी विद्वत्ताका लाभ उठानेका निश्चय किया था और जैन कौम हिन्दू धर्मसे, धर्मके प्रश्न पर अलग होनेकी वजहसे आपने मुझको 'मुम्बई समाचार' में भी लेख लिखनेकी प्रेरणा दी थी। इसीलिये आपने बम्बईके सेठ रतनचन्द हीराचन्दजीकी ओरसे समस्त जैन कौमकी बुलाई गई सभामें मुझको भी आमंत्रण दिया गया था और हम उस सभामें साथमें गये थे, उस सभामें मुख्य कार्यवाहक शेठ कस्तूरभाई लालभाई थे और उस सभामें ऐसा निश्चय किया गया था कि धर्मके प्रश्न पर जैन कौम अलग है और कौमकी वजहसे जैन हिन्दू हैं। इसके बाद स्व० पूज्य आचार्य श्री शांतिसागरजीकी मुलाकात मैंने कापड़ियाजीके साथ नीरामें ली जिससे मैंने कुछ और ज्यादा ज्ञान प्राप्त किया था। इसके बाद मित्र कापड़ियाजीकी प्रेरणा पाकर मुंबई समाचारमें हरिजनोंकी मंदिर प्रवेशकी बाबत लम्बी चर्चा मैंने की थी। जैन मंदिर जैनोंके लिये ही है और हिन्दूके लिये नहीं है यह बात मैंने 'जैन चर्चा' में दिखायी थी। उसी समय श्री जवाहरलाल नेहरूने भी यह जाहिर किया था कि जैनधर्म एक अलग ही धर्म है और हिन्दू धर्मसे अलग है, इस सब हकीकतके बाद भी बम्बई राज्यमें कितने मंदिरोंमें हरिजनोंने प्रवेश करनेके लिये कई प्रयत्न किये थे और इसी कारण यह घटना इतनी भयंकर बनी थी, कि हाईकोर्टमें अपील कीगई थी और उसमें भी जैन

आदर्श महापुरुष

ले०—डॉक्टर महावीरप्रसाद जैन
सुखदा फार्मेसी, सदर मेरठ।

श्री० ब्रह्मचारीजी शीतलप्रसादजी और "जैनमित्र"
स्मरण चिर स्मरण रहे, रहे जैन समाजका प्राण।

मानवी जीवन और मानवी समाजके कठिन मार्गको सरल सुगम बनानेके लिए नेताके रूपमें उद्धारक आदर्श माना जाता है। यह आदर्श समय, परिस्थितिके साथ परिवर्तित होते रहते हैं।

जितने भी आदर्श इतिहासों, पुराणों, नाटिकोंमें उपलब्ध होते हैं, उन सबमें एक खास बात यह नजर आती है कि आदर्श महापुरुषोंके जीवनमें स्व-पर विवेक हेयाहेयका पद पद पर विचार कर ही विचरता रहा है। आत्मोन्नतिके लिए व्यवहारिक जीवन सफलताके लिए अनिवार्य है।

पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीको भी ब्रह्मचारीपनके लिए गेरुआ वस्त्र नियमानुसार धारण करने पड़े थे। ब्रह्मचारीका अर्थ ब्रह्म आचरतीति ब्रह्मचारी " ब्रह्म आत्माके आत्मीय गुणोंमें जो लीन हो वह ब्रह्मचारी कहा जाता है। सांसारिक समस्त विषयोंसे अनुराग (राग द्वेष) छोड़कर ब्रह्म (आत्मा) जो ज्ञायक स्वभाव आत्मीयतामें प्रवृत्त करे सो ब्रह्मचारी है।

यह ब्रह्मचर्य स्वस्त्री-परस्त्री तथा अखण्ड ब्रह्मचर्य रूपमें नियमानुसार पाला जाता है।

शरीर और मन दोनोंको वशमें रखना निःसंदेह बहुत ही कठिन है। बिना मन और शरीरको वशवर्ती

धर्म और मंदिर हिन्दुसे अलग है ऐसा जजमेन्ट दिया गया था। इस हरएक घटनाके समय जैनमित्रमें श्री कापड़ियाजीने व स्व० लेखमाला प्रगट करके जैन दृष्टिबिंदु जाहिर किया था। आप जब भी जैनमित्रका काम करते थे, तब रात और दिनका ध्यान नहीं रखते थे, और पूरे उत्साहसे कार्य परिपूर्ण करते थे।

आज भी ६०-६० सालकी सेवाके बाद भी हमारे परम मित्र ७८ सालके श्री मूलचन्द किसनदास कापड़ियाजी युवान लग्नीकी तरह सेवा दे रहे हैं। और भविष्यमें भी जैनमित्रकी १०० वीं जयन्तीका भी उत्सव आप करें ऐसी हमारी व समस्त जैन कौमकी अभिलाषा है। (जवरचन्द घड़ियाली आयु ८२)

तरह या बिजलीकी तरह तड़क भड़क उछाल कूदको रोके बिना पूर्णता कदापि संभव नहीं हो सकती।

ब्रह्मचर्यके सम्बन्धमें यह बात हृदयंगम करना परमावश्यक है कि अपनी आत्मोन्नतिके लिए मनमें स्त्री और पुरुषकी भाव-भावनाकी सत्ता न रह जाय। स्त्री पुरुषकी प्रथक् सत्ता ही सृष्टिका मूल कारण है।

प्राचीनकालमें मानवी आत्मीय धर्मार्थ ब्रह्मचर्याश्रमका आयोजन था। आज भी जन कल्याणार्थ अत्यंत लाभप्रद और उपयोगी है। अतः आधुनिक युगमें भी स्त्री पुरुषोंको प्राचीन भारतीय महर्षियोंके सुखद सिद्धान्तका मनन कर आयु, जीवन, सांसारिक, पारमार्थिक व नैतिक समस्या सुधारना चाहिए।

हमारे आदर्श महापुरुषका जन्म उस समय हुआ था, जब जैन समाजमें मानव समाजमें बाल विवाह, वृद्ध विवाहकी भरमार थी। संसारमें स्त्री समाजकी बड़ी दुर्दशा थी। आपने अपने शुद्धाचरण, आदर्श जीवन द्वारा समाजमें नवचेतना नवीन शक्तिका संचार किया था। अपने पवित्र जीवनसे अज्ञानांधकारमें पड़ी समाजको 'जैनमित्र' द्वारा, परिषद् द्वारा, अनेक पाठशालायें, कन्याशालायें, शास्त्रमालायें, सभा सोसाइटी द्वारा परिभ्रमण कर वह अकथनीय सुधार किया था। जो कथन और लेखनीसे अगोचर है। आप संस्कृत, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी, बंगाली आदि अनेक भाषाओंके प्रकाण्ड विद्वान व गजबके उपदेष्टा थे।

आपका उपदेश सार्वजनिक होता था। व्याख्यान शैली इतनी मनोज्ञ होती थी कि हजारोंकी भीड़की रुचि आपके शब्द सुननेकी बड़ी तीव्र उत्कंठा रहती थी। आप समाजकी भावनासे प्रेरित होकर जगत कल्याण कारक कार्य सम्पादनमें सदा रत रहते थे।

"विद्या मन्त्रश्च सिद्ध्यन्ति, किंकरा लिमिरामपि।
क्रूराः शाम्यन्तिनाम्नाऽपि निर्मल-ब्रह्मचारिणाम्॥"

विद्या, मंत्र, सिद्ध, दुष्ट पुरुष नामसे शांत, देव नोकर, अर्थात् निर्मल ब्रह्मचारीके सब कार्योंकी सिद्धि होती है। ऐसे ब्रह्मचर्य और शुद्धाचारणकी शिक्षा प्राचीन धार्मिक शास्त्रोंमें धार्मिक शिक्षालयोंमें दी जाती थी। व्यवहारिक शिक्षाके साथ अनुशासन मानवीय जीवन क्षेत्रमें आवश्यक है। जिधर देखें उधर ही शांति चैनका जीवन व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक राष्ट्रीय जीवनसूत्रका सुचारुरूपेण अनुशासनके रूपमें ही सम्भावित है। हर कार्यमें नियन्त्रण रहकर नियम बद्ध संचालनताका ही नाम अनुशासन है।

जैनोंके दश धर्मोंमें ब्रह्मचर्य १० वां धर्म है। भारत वसुन्धरा पर धर्मके अस्तित्वको न माननेवालोंकी संख्या नगण्य है। जो श्री ब्रह्मचारीजीने धार्मिक शिक्षण संस्थायें, रात्रि पाठशालायें खोली थीं आज उनकी पूंजीको देखने जाननेवाला कोई नहीं दिखाई देता। प्राचीनकालमें प्रथम धार्मिक शिक्षाका ही बलबाला था।

—: हीरक जयन्ती :—

जैन एक सब बनें 'मित्र' को पढ़के।
जन भिन्न नहीं हैं "सम", सभी जन जनके॥
सब हरिके हीरा बनों, स्वार्थको तजके।
सब भागी जगके, एक जन क्यों भटके॥
इसको ही समझो, हीर जयन्ती अपनी।
क्या 'जैनमित्र' 'सन्देश', प्रथक जन कथनी॥
यह 'श्वेत', 'दिगम्बर' पंथ, अलग नहिं भाई।
जग मान बड़ाई छाँडि, एक सब भाई॥
तब अन्य अनेकों भेद, भरम भरमाए।
तज एक बनो सब नेक, सभी सुख पाए॥
सब जीव परस्पर द्वेष, छोड़ अपनावें।
है लख भारतके "काल", प्रथक ना आवें॥

—पन्नालाल, रीवां।

जैनमित्रमें जैन समाजका नेतृत्व करनेकी अपूर्व क्षमता

लेखक : श्री गुलाबचन्दजी पांड्या, भोपाल।

किसी भी पत्रकी उन्नतिके मुख्य दो कारण होते हैं, १–प्रथम आर्थिक, २–द्वितीय अनुभवी सम्पादक। जहां अनुभवी संपादक होते हैं वहां आर्थिक समस्याका हल भी होता रहता है। जैनमित्रके जन्मकालसे ही यह परम सौभाग्य प्राप्त होता रहा कि इसके सम्पादन कार्यके लिये गुरुवर्य पं० गोपालदास बरैया, ब्र० शीतलप्रसादजी, श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़िया, पं० परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ पं० ज्ञानचन्दजी स्वतन्त्र जैसे पत्रकारित्व कलामें निपुण भारत विख्यात अनुभवी विद्वानोंकी विद्वत्ताका लाभ जैनमित्रके माध्यमसे जैन समाजको प्राप्त होता रहा।

जैनमित्रने अपने जीवनके साठ वर्ष निर्विघ्नतापूर्वक समाप्त कर लिये यह सौभाग्य हर पत्रको प्राप्त नहीं होता। जिन किन्हीं पत्रोंको होता है उन्हीं सौभाग्यशाली पत्रोंकी श्रेणीमें मित्र भी है; साठ वर्षकी आयुमें मनुष्य वृद्ध हो जाता है, परन्तु मित्र हमेशा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके अनुसार अपनी नीति पर चलनेके कारण किसी भी युवक पत्रसे कम उत्साह अपने अन्दर नहीं रखता। आज भी मित्रको श्री कापड़ियाजी जैसे वयोवृद्ध अनुभवी तथा स्वतन्त्रजी जैसे निर्भीक युवक स० सम्पादकका सहयोग है।

यदि हम मित्रके पूर्व जीवन पर दृष्टि डालें तो हमें सहज ही पता चलेगा कि मित्रका जीवन संघर्षका जीवन, सुधारका जीवन, क्रांतिका जीवन रहा है।

दस्सा पूजाधिकार, बालविवाह, वृद्धविवाह, अनमेल विवाह, मृत्युभोज, कुरीति निवारण, आतिशबाजी, बालविहार, अशिक्षा निवारण, अन्तर्जातीय विवाह, अन्ध श्रद्धा, गजरथ विरोध, आदि एक नहीं अनेक आवश्यक सामाजिक सुधारके कार्योंमें संघर्ष रत रहकर मित्रने सफलता प्राप्त की। जैनमित्रका प्रशंसनीय सबसे बड़ा गुण जो अपने जन्मकालके प्रारंभसे ही रहा वह कैसी भी आपत्तिकालमें अपनी नियमितताको नहीं छोड़ता रहा है। यही कारण है कि आज मित्रकी इतनी उन्नति हुई।

गुरुवर्य पं० गोपालदासजी बरैयाके सुधारकीय लेख, ब्र० शीतलप्रसादजीके आध्यात्मिक लेख, मार्डन रिव्यू आदि पत्रोंके सार, श्री कापड़ियाजीका विद्वत्तापूर्ण सम्पादकीय लेख, पं० परमेष्ठीदासजी, पं० ज्ञानचन्दजी स्वतंत्रके सुधारकीय लेखोंसे समाजमें एक अपूर्व जागृति, क्रांति और सुधार हुए, इसमें कोई शङ्का नहीं। दान देनेकी भावना, संयमसे रहना, सामाजिक कार्योंमें हाथ बटानेकी प्रेरणा अनेकोंको 'मित्र' प्राप्त हुई है।

मित्रकी विशेषता

ग्राहकोंको मित्रके साथ उपहार ग्रंथ भी देना आमके आम और गुठलीके दाम वाली कहावत सिद्ध होती है। ग्राहक हर प्रकार लाभमें ही रहता है।

मित्रके कारण समाजमें अनेक लेखक, दानी, सामाजिक कार्यकर्ता, कवि, पाठक, सुधारक आदि हुए

जैनमित्रकी चन्द्रमुखी सेवायें

: लेखक :
पं० [illegible]कुमार जैन सेठी,
इंदौर।

जैनमित्र अपने जीवनके ६० वर्ष पूर्णकरके हीरक जयंतिके विशेषांकके रूपमें ६१ वें वर्षमें बहुत ही गौरव और अदम्य उत्साहके साथ पदार्पण कर रहा है। यह जैनमित्रके लिए ही नहीं दि० भारतीय समस्त जैन समाजके लिए गौरवकी चीज है। क्योंकि दि० जैन समाजके जितने भी साप्ताहिक पत्र हैं उन सबमें जैनमित्रकी सेवायें जैन समाजके लिये वास्तवमें अनुकरणीय है। जैनमित्रने अपनी नीति हमेशा उदार और विशाल रक्खी। इसी कारणसे जैनमित्र हर व्यक्तिके लिये श्रद्धा और सम्मानका पात्र बना।

आज देशमें पत्रोंके प्रति लोगोंका बहुत बड़ा आकर्षण है। क्योंकि आजके युगमें पत्र ही देश और राष्ट्रके विकासके लिए अधिकसे अधिक योग दे सकते हैं। एक पत्रकारकी कलममें इतनी बड़ी शक्ति है कि वह उसके बल पर देशको गिरा भी सकता है और उठा भी सकता है। सच्ची पत्रकार वह है जो राष्ट्र और समाजको सही२ मार्ग बतलाता है। ऐसे पत्रकारोंमें जैनमित्रका स्थान गणनीय कहा जा सकता है। क्योंकि जैनमित्रने जैन समाजका मार्गदर्शन करनेके लिए हमेशा सही कदम उठाया और ठीक२ उसका नेतृत्व किया। जैनमित्रमें संचालक व संपादकोंने कभी भी दब्बू प्रकृतिसे काम नहीं लिया। एक पत्रकारका कर्तव्य क्या होता है उसका पूर्ण ध्यान रखा।

जैन समाज एक अल्पसंख्यक समाज है। फिर भी इसमें कई भेद और प्रभेद चलते रहे हैं। जिससे समाजमें हमेशा कुछ न कुछ ऐसे आंदोलन चलते रहे जिनसे घबड़ाकर कई पत्रोंने अपनी नीति बदली। लेकिन जैनमित्र निर्भीकतापूर्वक आर्षमार्गके अनुसार उन आंदोलनोंका समर्थन व विरोध करनेमें कभी भी पीछे नहीं रहा। बल्कि निर्भीकताके साथ आगे बढ़ा और समाजके अन्दर नवीन क्रांतियोंको जन्म दिया।

जैन समाजमें चलनेवाले ऐसे आंदोलनोंमें दो आंदोलन मुख्य रहे—एक दस्साओंका धार्मिक अधिकार और दूसरा विजातीय विवाहका समर्थन। इन दोनो आंदोलनोंको लेकर समाजमें काफी हलचल रही। समाजका एक बहुत बड़ा भाग जो पूंजीपतियोंका हमेशा समर्थक रहा है उस भागने दस्साओंके धार्मिक अधिकारमें बाधा डालनेके लिए व विजातीय विवाहके विरोधमें आवाज उठानेके लिए काफी प्रयत्न किया और जब वे सफल नहीं हुए तब उन्होंने डटकर जैनमित्रका विरोध ही नहीं किया लेकिन इसका बहिष्कार है। वास्तवमें जैनमित्र जैन समाजका नेतृत्व करनेकी अपूर्व क्षमता रखता है।

मित्रके इतिहासमें श्री कापड़ियाजीकी सेवायें स्वर्णाक्षरोंमें लिखी जाने योग्य हैं, जिन्होंने अपने अमूल्य जीवनका बहु भाग मित्रकी सेवामें दिया है। मैं मित्रका हीरक जयंती विशेषांक निकालनेके उपलक्षमें आपको हार्दिक बधाई देता हूं तथा आपकी दीर्घायुकी शुभ कामना करता हुआ श्री जिनेन्द्रदेवसे प्रार्थना करता हूं कि भविष्यमें भी आपको और २ जयंति मनाने और विशेषांक प्रगट करनेका परम सौभाग्य प्राप्त होता रहे।

करवाने तकका भी प्रयत्न किया। लेकिन जैनमित्रका मार्ग एक सही मार्ग था अतः वह इन आंदोलनोंमें सफल ही नहीं हुआ किन्तु इसने एक जीवन जागृति पैदा करके ऐसे लोगोंसे समाजको भी सजग कर डाला।

इसी तरह जैनमित्रने समाजमें प्रचलित अनेकों कुरीतियोंका विरोध किया जैसे-गजरथ, मृत्युभोज, बाल विवाह, वृद्ध विवाह आदि२।

जैनमित्रने सामाजिक कुरीतियोंके खिलाफ जिस तरह आंदोलन किया इसी तरह जैन धर्ममें शैथिल्य लानेके लिए कुछ लोगों द्वारा प्रयास किया गया उसका भी डटकर विरोध किया। जैसे चर्चासागर, त्रिवर्णाचार आदि ग्रन्थोंका विरोध। चर्चासागरके विरोधके लिए जैनमित्रने जो त्याग किया वह भुलाया नहीं जा सकता। यही इसी पत्रकी शक्ति है जिसने इन ग्रन्थोंकी समीक्षायें प्रकट करवाकर समाजको बहुत बड़े गर्तसे बचाया।

जैनमित्रने इतनी बड़ी प्रगति की इसके लिए स्वर्गीय पूज्य ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी व बैरिष्टर चम्पतरायजीका नाम नहीं भुलाया जा सकता। पूज्य ब्रह्मचारीजीके हाथोंमें आनेके बाद तो यह पत्र काफी चमका। जब तक ब्रह्मचारीजी इसके सम्पादक रहे तब तक निश्चय धर्मका बराबर इसमें स्तम्भ रहा। जिससे बुद्धजीवी लोगोंके दिमागके लिए बहुत बड़ी खुराक मिलती रही। उस समय मोर्डन रिव्यूका सार भी बराबर प्रकाशित होता रहा।

ब्रह्मचारीजी महाराजके स्वर्गवासके बाद भी यह पत्र अच्छे उदार विद्वानोंके हाथमें रहा। जिससे इसकी नीति एकसी बनी रही। श्रीमान् पं० परमेष्ठीदासजी व पं. स्वतन्त्रजीका नाम यहाँ भुलाया नहीं जा सकता। परमेष्ठीदासजीकी लेखनी समयानुकूल थी और समाज युगके अनुसार उसको पसन्द करती थी।

स्वतन्त्रजीके लेख भी हमेशा पठनीय रहे हैं है। इन कार्यकर्ताओंके होनेसे जैनमित्र एक प्रभाव-शाली पत्र कहा जा सकता है।

सामाजिक संस्थाओं व कार्यकर्ताओंकी सेवाके लिए भी जैनमित्र हमेशा आगे रहा। जैनमित्र द्वारा सामाजिक संस्थाओंकी सेवा भी कम नहीं हुई है। यह एक जबर्दस्त प्रचारक पत्र रहा है। देशका ऐसा कोई भाग नहीं जहां समय पर यह नहीं पहुंचता हो।

जैनमित्र द्वारा जैन मिशन जैसी प्रचारक संस्थाकी सेवा भी उल्लेखनीय है। सच कहा जाय तो जैन मिशनकी प्रगतिमें जैनमित्रका प्रमुख हाथ है। आज भी मिशनकी पूर्ण रिपोर्ट हर अंकमें पढ़नेको मिलती है। अतः कहा जा सकता है कि जैनमित्र जैन समाजका एक ऐसा पत्र है जिसकी जैन समाजके लिए चहुंमुखी सेवायें हैं।

हम तो परमपूज्य भगवान् महावीरसे प्रार्थना करते हैं कि जैनमित्र और उसके संचालक आदर-णीय कापड़ियाजी युगर तक जीते रहें और इसी तरह समाज व धर्मकी सेवा करते रहें। जैन समाजका कर्त्तव्य है कि वह ऐसे पत्रका आदर ही नहीं करें किन्तु उसका हृदयसे अभिनन्दन करके अपने कर्त्तव्यका पालन करें।

मैं भी इस महान् सेवकके चरणोंमें श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ यह कामना करता हूं कि यह पत्र अपनी उदार नीतिके साथ हमेशाह इस समाजका मार्गदर्शन करता रहे।

समाज अने जैनमित्र

लेखक:-
मूलचंद कस्तुरचंद तलाटी-मुंबाई

श्रीयुत तंत्री श्री कापडीयाजीनो "जैन-मित्र"नी हिरकजयंति प्रसंगे पत्र मलता अत्यंत आनंद थयो. पत्रमां इच्छवा मुजब मारे पण आ जयंति प्रसंगे कांईक लखवू तेवी ईच्छा थई. परंतु लखवुं शु? हुं कांई लेखक, कवि या पंडित नथी, परंतु हृदय भावोनी तीव्रताने कारणे मारी ईच्छा आ सुवर्ण-अवसर पर कांईक लखवा प्रेराई छे.

मित्रनी परिभाषा शास्त्रोमां अने विद्वान पंडितोए अनेक प्रकारे वर्णवी छे. परंतु साचो मित्र कोण? तेनुं समाधान तो सरलभावथी जे व्यक्तिने "जैनमित्र"नुं नियमित वांचन होय ते स्वयं अनुभवी शके छे.

आ संसारमां व्यक्ति मात्रने मित्र होय ते स्वाभाविक छे. परंतु मित्रनी फरज बजावे तेज साचो मित्र कहेवाय. शास्त्रोक्ति पण समर्थन करे छे के:—

सत्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं।
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्॥
माध्यस्थभावं विपरीत वृत्तौ।
सदा ममात्मा विदधातु देव॥

आजे केटलाय वरसोथी समस्त दि० जैन समाजनी एकधारी धार्मिक, सामाजिक, तथा अनेकविध निःस्वार्थ सेवा बजावनार जो आपणा समाजमां तटस्थ रीते साचा मित्रनी सेवा बजावतुं होय तो ते मात्र मासिक "दि० जैन तेमज जैनमित्र" साप्ताहिक छे. आ पत्रो निःस्वार्थ, कटुतारहित तेमज समाजनी उन्नतिनी दृष्टिथी कार्य बजावे छे, अने ते वरसोथी अने हजु पण मारा जाणवा मुजब नुकसान अथवा आर्थिक भोग आपी कार्य करे छे, अने पत्रने निभावे छे, आथी फलित थाय छे के आ पत्रोनो उद्देश मात्र समाजनी निःस्वार्थ सेवाज छे. मने तो जो "जैन-मित्र"नो अंक कदाच मोडो आव्यो होय तो एम लगे छे के कोई चीज मळी नथी, अने तेथी तंत्रीश्रीने ते बाबत पत्र लखवा पण प्रेराऊं छुं.

जड अने चैतन्य! "जैनमित्र" स्वयं अचेतन अने जड पदार्थ छे, छतां अमारा वयोवृद्ध तंत्रीश्रीना अथाग परिश्रम तथा निःस्वार्थ सेवाभावने कारणे "जैनमित्र" निर्जीव पत्रमां चेतन भर्युं छे. सात्विकताथी सभर तेना लखाणो प्राणवंत भासे छे. अने तेथीज जडमां चैतन्य संबोधवानी में छूट लीधी छे, कारण के आथी जड व्यवहार दृष्टिए चेतननी फरज बजावे छे. समस्त दि० जैन समाजमां ते द्वारा साचा मित्रनी सेवा बजावी "जैनमित्र" नवचेतन प्रगटावे छे.

आ शुभ प्रसंगे वयोवृद्ध कापडीयाजी तथा सहायकश्री 'स्वतंत्र'जीनुं खास ध्यान दोरुं तो अस्थाने नहि गणाय.

"जैनमित्र"मां लग्न, सगपण आदि सांसारिक बाबतोना प्रकाशनने गौण स्थान अपाय अने नियमित "आत्मधर्म अने निश्चयनय पर समाजना उत्कृष्ट आचार्यो, अने संतो, प्रखर विद्वान अने निष्पक्ष पंडितो तथा माध्यस्थभावी ज्ञानी सज्जनो द्वारा लेखो अने चर्चा प्रगट थाय, अने साचा निश्चयधर्मनुं प्रतिपादन थाय तो तेथी समाजना अनेक अज्ञानी मुमुक्षो जीवोनुं तेमज अन्य धर्मी-बंधुओनुं आपणा दिगम्बरोना अमूल्य आगम प्रत्ये श्रद्धा भावयुक्त विशेष आकर्षण अने प्रेरणा थशे. परिणामे "जैनमित्र"नी मांग वृद्धि पामतां अमूल्य किंमत अंकाशे. अने दिगम्बर निग्रंथ अने सनातन जैनधर्मनी प्रतीति थतां आत्मा अने निश्चयनुं सत्य स्वरूप समजी आ संसारमां अनादि काळथी भटकता जीवनुं आत्मकल्याण थशे; अने अंतिम ध्येय जे परम मोक्ष तेने प्राप्त थशे.

अंतिम मारी आंतरिक अभिलाषा छे के "जैन-मित्र" दिन-प्रतिदिन भविष्यमां अधिक सेवा बजावे अने आपणा कर्तव्यनिष्ठ तंत्रीश्री जेओ हीरकजयंति उजवता ७८ वर्षनी उमरे आनन्दमां छे ते वयोवृद्ध तंत्रीश्री कापडियाजी आ पत्र मिशनी सेवा बजावता बहु आयुष्यवान थाय, अने तेमना पछी कोण? एवा स्वाभाविक प्रश्न जे श्री महेन्द्रजी माटे पण उद्भवे छे, तो तेने स्वयं तंत्रीश्री शांतिथी समाजना भावि माटे उकेले एवी प्रभु प्रत्ये प्रार्थना.

शुभ कामना

जैनमित्रकी प्रशंसाके सम्बन्धमें कुछ भी लिखना इसलिये अच्छा नहीं लगता कि जैन-मित्रकी अनेक आन्दोलनोंके रूपमें अनेक सेवायें जग जाहिर हैं। जैनमित्रका जिनकी छत्रछायामें लालन पालन पोषण संरक्षण एवं संवर्द्धन हुआ वे समाजके मार्गदर्शक युग पुरुष थे जिनमें स्व० पं० गोपालदासजी बरैया एवं स्व० ब्र० शीतलप्रसादजीके नाम सर्व प्रथम उल्लेखनीय हैं।

जबसे जैनमित्र समाजसेवक श्री कापडिया-जीके सम्पादकत्व एवं प्रकाशकत्वमें प्रकाशित हुआ तभीसे यह उत्तरोत्तर वृद्धि पर है। यह जानकर मुझे ही नहीं अपितु सभीको हर्ष है। आज कापडियाजी ७८ वर्षके वृद्ध हैं फिर उनकी कार्यतत्परता, उत्साह, श्रमशीलता नव-युवकोंसे कम नहीं है। हीरक जयंतिके मांगलिक शुभ प्रसंग पर मैं जैनमित्र, और जैनमित्र परिवारकी हार्दिक मंगल कामना करता हुआ उन्नतिका इच्छुक हूं।

—ईश्वरचन्द्र ओक, सनावद,
फर्म रूपचन्दसा प्यारचन्दसा ओक।
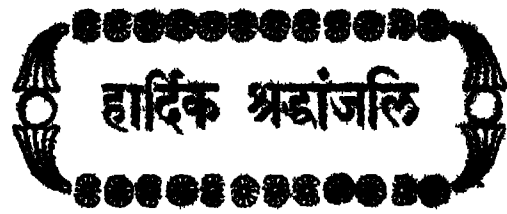
हार्दिक श्रद्धांजलि

श्रीमान मान्यवर वडील श्री० मूलचन्दभाई कापडीआ
तथा पंडित स्वतन्त्रजी,

आपे 'जैनमित्र'नी जे अथाग महेनत ६० वर्षथी तन मन धनथी करी समाजनी तेमज दि० जैन धर्मनी आ पत्र द्वारा जे अद्वितीय सेवा बजावी छे ते खरेखर अति धन्यवादने पात्र छे.

आपनी भावना दि० जैन समाज तथा दि० जैन धर्म प्रगति करी केम आगळ वधी शके, अने सौना मोखरे रही बीजाओने दोरवणी आपी जगतमां फरीथी दि० जैन धर्मनो डंको बजावी शके, ते माटे आपश्रीए जाते घणी वखत देशना गामे ते भागमां सुखदुःख वेठी मुसाफरी करी घटतुं करवामां पाछीपानी करी नथी ते बदल मारा "हार्दिक अभिनंदन" छे.

विशेषमां तीर्थो ऊपर के धर्म ऊपर समाज ऊपर ज्यारे ज्यारे कोईपण ज्यारे आफत जेवुं ऊभुं थयुं छे त्यारे आपे जरापण पाछुं जोया वगर ते आफत हटाववा माटे जे परिश्रम लई कामो कर्यां छे, ते खरेखर अणमोल छे अने ते माटे आपनो हुं आभार मानुं तेटलो थोडो छे. आपश्री अनेक धन्यवादने पात्र छे.

आ शुभ अवसर उपर आपश्रीए आ पत्रद्वारे समाजनी धर्मनी जे सेवाओ बजावी ते बदल "हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पुं छुं."

साथे साथे आ पत्रनुं तन मनथी संचालन करवामां श्रीयुत "पंडितजी स्वतन्त्रजी"ए जे सेवाओ बजावी छे ते पण विसरवार करवी [illegible] तेम नथी.

—शीतलदास एल० कुम्बार जैन, अमदावाद।

परम स्नेही धर्मप्रचारक
भाई श्री मूळचन्दभाई

आपश्रीए ६० वर्ष सुधी "जैनमित्र" साप्ताहिक तथा "दिगम्बर जैन" मासिकथी जैन अने जैनेतरोनी घणीज सेवा करेली छे, ते सुप्रसिद्ध छे. आपश्रीनुं आखुं जीवन एक आदर्श रूप छे. जैन धर्मना सिद्धांतोनो ऊंडो अभ्यास करी आपे सद्‌गृहु पेपर मारफत ते सिद्धांतो सरल रीते अने दरेक माणसने समजाय तेवी रीते बहार पाड्या छे. अने तेथी प्रजा ऊपर महान उपकार करेल छे. आ पेपरोथी आपे उत्तम धर्म भावना फेलावी छे, तेनी प्रभावना करी छे, अने भारतना खुणेखुणामां धर्मनो घणोज प्रचार करेल छे. तेने माटे अंतःकरणथी धन्यवाद आपुं छुं. अने आपने दीर्घायुष इच्छुं छुं.

नानपणथीज धर्मना संस्कार पुर्वजन्मना पुण्यथी मेळवीने आपना ज्ञाननो प्रभाव आपे जैनना आगेवानो, श्रीमंतो, अने शेठीआओ ऊपर पाडीने, अने तेमना परिचयमां आवीने मुंबई, सूरत अने घणे ठेकाणे जैन बोर्डिंगो, जैन आश्रमो, महिलाश्रमो अने तीर्थस्थानोमां अनेक धर्मशालाओ तथा मंदिरो बंधाव्या छे. अने तेनो सदुपयोग थई रह्यो छे.

गृहस्थ जीवनमां पण आपे त्यागी जीवन गाळीने ६० वर्ष सुधी एकधारी सेवा संघनी, समाजनी अने देशनी करी छे. अने तेनी साथे पवित्र जीवन गाळीने आपना आत्मानुं कल्याण कर्युं छे. तेने माटे जेटलां अभिनंदन आपुं तेटला ओछा छे. आटली वये पण आप आपना जीवननी दरेक क्षण धर्म अने समाजनी सेवामांज आपी रह्या छो ते हुं जाणुं छुं. अने आपना पेपरो मारफत जे प्रचार कर्यो छे तेथी प्रजा समुदायना जीवन ऊंपर ऊंडी असर थई छे. तेवुं महान कार्य कर्युं छे. एक माणस पण धारे तो केटली सेवा करी शके छे ते आपना जीवन उपरथी दरेक माणस जोई शके छे.

श्री महावीरस्वामी आपने तंदुरस्ती आपे अने सुख शांतिथी दीर्घायुष करे तेवी मारी अंतःकरणनी प्रार्थना छे.

स्नेहाधीन,

मणीलाल हाकेमचंद उदाणी,

एम० ए० एल० एल० बी०, राजकोट.

(स्था० जैनमित्र, आयु ८०)

सुज्ञ भाई श्री मूळचंदभाई—

जैन समाजमां एकधारुं साठ वर्ष साप्ताहिक पत्र चलववुं ते केटलुं बधुं कपरू काम छे ते तो अनुभवी जाणी समजी शके. साठ वर्षमां अनेक पत्रो शरू थया अने विलीन पण थई गयां. ए वात आ काम केटलुं कपरुं छे ते बतावी आपे छे.

"जैनमित्र" पत्रने आपे आवी कपरी मुश्केलीओमां पण एकधारुं चलाव्युं छे, जैन समाजने मार्ग दर्शन आप्युं छे अने जैन समाजमां धर्म ज्ञाननो फेलावो कर्यो छे. एवा आपना यशस्वी कार्य माटे आपने धन्यवाद छे.

"जैनमित्र" पत्र द्वारा आप हजु पण जैन समाजनी विशेष सेवा करवा शक्तिमान थाओ अने पत्र विशेष फाल्युं फुल्युं रहे एवी मारी हार्दिक प्रार्थना छे. एज.

ली. शेठ नगीनदास गिरधरलाल,

तंत्री "जैन सिद्धांत" मुंबई।

परिवर्तनकाळमां जैनमित्र

अमृतलाल जे० शाह,
गृहपति प्रांतिज बोर्डिंग।

ओगणीसमी सदीनो समय काळ ए अखिल विश्वने माटे महान संक्रांतिकाळ पुरवार थयो छे. महान् राष्ट्रोए पोताना जड, व्हेमी अने अप्रगतिक.रक विचार-वमळो त्यजी दई नतन विचारसरणीओने आ कालमांज अपनावी हती.

आवा मूल्यगत पलटाता वहेणने अनुरूप जैन समाज पण प्रगति साधे तेवो विचार उद्भवतांज मुंबाई दि० जैन प्रांतिक सभाए सद्‌विचार अने आचारना एक मात्र साधन समान "जैनमित्र" चालु कर्युं. ते समये छापुं के मासिक ए नवीनता हती. अने प्रजा तेने अपनावतां पण अचकाती हती. कारण अज्ञानता हती एटले जैनमित्रने चलाववा माटे घणीज मुश्केलीओ होवा छतां तेना स्थापकोए आज सुधी अविरत प्रयत्नो करी चलाव्युं छे तेज तेमने अंजली समान छे.

जैन समाजमां खास करीने धार्मिक ज्ञानमां जे जडता अने शिथिलता आचार अने विचारमां अंध श्रद्धाथी प्रवेशी चुकी हती तेने "समूळी क्रांति द्वारा छेल्ला अडधा सैकामां जो कोई एक मात्र संस्थाए के पत्रे परिवर्तन कर्युं होय तो ते "जैनमित्र"ज छे." तेना द्वारा घणा धार्मिक अने तात्विक प्रश्नो चर्चाया छे. हजारो लाखो पुस्तको फरतां थयां छे. जेनुं जैन समाजे धराई धराईने पान कर्युं छे.

आ बधा प्रयासोनुं मुख्य केन्द्र होय तो ते श्री० मूळचन्द्दास क० कापडीयाज छे, ते कोनाथी अजाण्युं छे? जैन समाज विषे जेने कंई पण जाणवुं होय तेने कापडीया विषे जाणवुंज रह्युं. एवी तेमनी प्रतिभा छे. वयोवृद्ध होवा छतां जे अप्रतिम भावना अने दृढ मनोबळथी आजे पण कार्य करे जाय छे ते आजनी पेढीना तमाम युवानो अने कार्यकरोने दाखलरूप छे. जैन समाजना स्तंभ समान श्री० कापडिया अने "जैनमित्र" अविचल तपो!

लेख

मारो अभिप्राय—

जैनमित्रना हीरक जयन्ती अंक माटे कहेवानुं के दि० जैन प्रांतिक सभा मुंबाईनुं जैनमित्र तथा माणिकचन्द दि० जैन परीक्षालय घणी उत्तम रीते ५० वर्षोथी चाले छे तेमज दि० जैन पाठशाला पण गुलालवाडी मंदिरमां चाले छे. जे जुनी प्रणालिका मुजब वहीवट चालया करे छे, पण जे मुख्य ध्येय धार्मिक रीते समाजने ऊँचो लाववानो हतो ने छे ते माटे गामेगाम ने शहेरे शहेर प्रचारको राखवानुं हाल बंध छे ते चालु थवानी जरूर छे.

—वस्तुपाल शंकरलाल चोकसी, मुंबाई.

परमपूज्य श्री १००८ तेरहवें तीर्थंकर देवाधिदेव विमलनाथजीके गर्भ, जन्म, तप एवं केवलज्ञानसे पवित्र अतिशययुक्त महान तीर्थराज कम्पिलके दर्शन कीजिए व जीर्णोद्धारमें द्रव्य लगाकर दान-धर्मका पुण्य संचय कीजिये।

(१) श्री कम्पिल तीर्थक्षेत्रमें १३ वें तीर्थङ्कर भ० विमलनाथके उपरोक्त चार कल्याणक हुए थे। चक्रवर्ती हरिषेण हुए, सती द्रोपदीका स्वयंवर हुआ था। भ० महावीरका समवशरण यहाँ आया, जिससे भव्य जीवोंको तीर्थंकर भ० महावीरके उपदेशामृतका पान करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।

(२) श्री कम्पिलजी ऐतिहासिक पुण्यभूमि है, यहांके १७०० वर्ष प्राचीन दि० जैन मन्दिरमें तीर्थंकर भगवान विमलनाथकी अतिशय मनोज्ञ चतुर्थ कालीन भव्य मूर्ति विराजमान है जो कि गंगा नदीसे प्राप्त हुई थी।

(३) श्री कम्पिल तीर्थक्षेत्रको हमारे बहुतसे भाई नहीं जानते हैं कि यह तीर्थ है और किस दिशामें स्थित है। इसी श्री कम्पिल तीर्थक्षेत्रमें प्राचीनकालसे भूगर्भसे मोती हुये भग्नावशेष अब भी यत्रतत्र निकल रहे है। सन् १९५० में खण्डित पाषाणकी खड्गासन चार प्रतिमायें ७-७॥ फीटकी लगभग ९-१० मनकी एक प्रतिमा है जो भूगर्भसे निकली तीन चौमुखी प्रतिमायें पहले १९१० में निकल चुकी हैं जो करीब २००० साल प्राचीन है जो मन्दिरके खण्डितालयमें विराजमान हैं। लोकको यह तीर्थक्षेत्र जैनत्वके पुरातत्वका परिचय दे रहा है जो कि आह्वान करता है कि अपने जैन पुरातत्व तीर्थक्षेत्रकी रक्षा करिए। जीर्णोद्धारमें तन, मन धनसे सहायता करनेमें अपना कदम बढ़ाईये, धनसे सहायता देकर तीर्थका पुनरुद्धार कीजिए।

(४) परम पावन तीर्थ वन्दनाके लिए प्रान्तीय दि० जैन समाजको साथ लेकर अन्य तीर्थोंकी तरह वन्दना कीजिये। श्री कम्पिल तीर्थकी वन्दनाके समय भूलना नहीं, दान देकर जीर्णोद्धारमें सहायता कीजिये। क्षेत्रके प्रचारकके आनेपर धनसे सहायता दीजिये।

श्री मन्दिरजीके दालान व परकोटा इतने जीर्ण शीर्ण हो चुके है कि वर्षाऋतुमें समस्त दालानोंकी छतें पानीसे चूती रहती हैं, एक दालानकी मरम्मत की गई है।

दानवीर दानाओंसे निवेदन है कि पर्यूषण पर्व, अष्टाह्निका पर्व तथा विवाह शादीके समय या शुभ कार्योंके समय जिस तरह अन्य जैन तीर्थोंके लिये धन दानमें निकाला करते हैं उसी तरह अपने परम पूज्य तीर्थ श्री कम्पिलजीके लिये भी निकालते रहें। इस तीर्थमें बहुत कम यात्री आते हैं, इस कारण आमदनी भी कुछ नहीं होती है। जैसे तैसे दो कर्मचारियोंको वेतन दिया जाता है।

इस क्षेत्रमें २ धर्मशालायें हैं वे भी जीर्ण हो रही हैं। इस समय तो थोड़ासा कार्य जीर्णोद्धारका मन्दिरजीमें करवाया गया है। अभी बहुतसा कार्य मंदिरजीका शेष है। चार वेदियां बनवाना, संगमरमरका फर्श, समस्त परकोटा तथा दालानका पलस्तर करवाना यानी सम्पूर्ण मन्दिरजीका कार्य शेष है।

नोट—(१) कुंवार वदी दोज तीजको मेला, भगवानकी धारें, विधान, वार्षिक उत्सव आदि होता है, कभी चौथको भी होता है-परन्तु धारें तीजको ही होती है।

(२) चैत्र कृष्णा अमावस्यासे चैत्र सुदी तीजतक मैनपुरी समाजका वार्षिक रथोत्सव होता हैं। रथयात्रायें कायमगंज, फर्रुखाबादकी होती है।

कम्पिलके लिये कानपुर अछनेरा N. E. R. लाईन पर स्टेशन कायमगंज उतरना चाहिये, ५ मील पक्की सड़क है, लारी इक्के मिलते है।

निवेदक—

श्री भारतवर्षीय दि० जैन तीर्थक्षेत्र कम्पिलजी कमेटी (जिला फर्रुखाबाद, उ० प्र०)

‘जैनमित्र’—एक साचो मित्र

[लेखक—महामंत्री फतेचन्दभाई ताराचन्द, विजयनगर.]

“जैनमित्र” साप्ताहिक पोतानां ६० वर्ष पूरां करवुं होवाथी तेनी हीरकजयंतीनो महोत्सव उजवाय छे ते समस्त दि० जैन समाज माटे एक आनंद अने गौरवनो प्रसंग छे. “जैनमित्र”ने बाहोश संपादक मुरब्बी मूळचंदभाई कापडियाए समस्त मानवजातनी अने खास करीने समस्त दि० जैन समाजनी अनेकविध सेवाओ करी छे. आ सेवाओ एटली बधी अमूल्य छे के तेनो बदलो कोईपण रीते वाळी शकाय तेम नथी, छतां “जैनमित्र”नो आ हीरकजयंती महोत्सव आ ऋणमांथी थोडे घणे अंशे मुक्त थवानो समस्त दि० जैन समाज माटे एक अमूल्य अवसर छे.

मुरब्बी मूळचंदभाईए जैनमित्र तथा दिगम्बर जैन द्वारा दि० जैन समाजनी सौथी मोटी सेवा तो ए करी छे के जेमनी मातृभाषा गुजराती भाषावाळाने हिन्दी भाषा अने हिन्दी भाषावाळाने गुजराती भाषा वगेरे शिक्षके शीखवी दीधी छे.

“जैनमित्र”नी बीजी विशिष्टता ए छे के ते देश परदेशना समाचार नियमित रूपे आपे छे, दि० जैन त्यागीओनी विहार अने चातुर्मास संबंधी नियमित रीते माहिती आपीने पोताना पत्रना वांचकगणने आ साधुसंतोनी सेवा अने भक्ति करवानो सुअवसर प्राप्त करी आपे छे. वळी कोई संस्था अथवा व्यक्तिनी मुश्केलीओ दूर करवामां आ पत्र भारे फाळो आपे छे.

वळी आ पत्र धार्मिक निबन्धो अने काव्योनो रसथाळ वांचकगण आगळ रजू करे छे तथा ज्यारे ज्यारे मोटा तहेवारो अने उत्सवो आवे छे त्यारे तेमना विषे लखी ते तहेवारोनुं महत्त्व समजाववामां आवे छे के जेथी करीने जैन समाज ते तहेवारो घणा उत्साहथी उजवी शके छे. आ रीते आ पत्र जैन धर्मनी साची प्रभावना करवामां घणो अगत्यनो फाळो आपी रह्युं छे.

तदुपरांत आ पत्रना ग्राहकोने दरेक वर्षे उपहार तरीके कोईक ग्रन्थ विना मूल्ये आपवामां आवे छे. जैन धर्मनो इतिहास, महापुरुषोनां जीवनचरित्रो, जैन धर्मना तत्त्वोनी चर्चा जेवा विषयो उपर आ उपहारग्रन्थो लखायेलां होवाथी आ पत्रना ग्राहकोने आ उपहारग्रन्थो द्वारा उच्च प्रकारनुं ज्ञान अने माहिती मळे छे. तेमज आप दरेक वर्षे ‘जैन तिथि दर्पण’ तैयार करी प्रगट करी भेट आपे छे. जेथी पर्व तिथिओ, उत्सवो वगेरे उजववामां जैन समाजने घणी अनुकूळता रहे छे. तथा दिगम्बर जैन समाजनी तन, मन, धनथी सेवा करनारा श्रावकोना तथा मुनिजनोना फोटाओ जैन तिथि दर्पणमां तथा साप्ताहिकमां आपी आवा महापुरुषोनां सत्कार्यो तरफ जैन समाजनुं ध्यान दोरवामां आवे छे के जेथी करीने जैन समाज आवा महापुरुषोनी योग्य रीते कदर करी शके अने तेमना मार्गे पोते पण चालवानी प्रेरणा मेळवी शके. राज्य तरफथी अथवा बीजी कोई दिशामांथी ज्यारे ज्यारे दि० जैन धर्म उपर अथवा तेना कोई तीर्थस्थळ उपर आफत आवी पडे छे त्यारे आ पत्र ते बाबतनो बहोळो प्रचार करीने दि० जैन समाजने जागृत करे छे अने आवी पडेली आफतना निवारणार्थे शो उपाय लेवो तेनुं योग्य मार्गदर्शन पण आपे छे.

आ रीते “जैनमित्र” साप्ताहिक अनेकविध सेवाओ आपी रह्युं छे. आवी अमूल्य सेवा बजावनार पत्रने प्रोत्साहन आपवुं ते दि० जैन समाजनी दरेक व्यक्तिनी फरज छे. अंतमां आ साप्ताहिकनी उत्तरोत्तर प्रगति, विकास अने उन्नति थाओ तेमज तेना संपादक मुरब्बी मूळचंदभाई कापडिया सुखसंपन्न दीर्घायु थई दि० जैन समाजने हजु घणा लांबा समय सुधी सेवाओ आपता रहो एम इच्छुं छुं.

मुरब्बी मूळचन्दभाईने श्रद्धांजलि

लेखक—शेठी चंपकलाल अमरचंद (विजयनगर) एम. ए. एल, एल. बी. मोडासा

मुरब्बी श्री मूलचंदभाई किसनदास कापडीआने कोण नहि ओळखतुं होय ? मानव जातिनी अने खास करीने दिगम्बर जैन समाजनी अनेक प्रकारे सेवाओ करी रह्या होवाथी एक प्रभावशाळी अने गौरववंतु स्थान तेओ आजे समाजमां भोगवी रह्यां छे. एक नीडर पत्रकार तरीके, एक साचा समाज सुधारक तरीके, एक स्वदेशप्रेमी तरीके, दिगंबर जैन धर्मानुरागी श्रावक तरीके अने दानी तरीके एम जीवनना अनेक विधिक्षेत्रमां तेओ अमूल्य सेवाओ आपी रह्यां छे.

(१) एक साचा पत्रकार—

तेओ 'जैनमित्र' साप्ताहिक अने 'दिगंबर जैन' मासिकना संपादक तरीके ६० वर्षोथी सफळतापूर्वक काम करी एक पत्रकार तरीके समाजने साची सेवाओ आपी रह्या छे. आ पत्रोमां हिन्दी अने गुजराती भाषाओमां लेखो अने काव्यो छपाता होवाथी आ बंने भाषाओने तेओ प्रोत्साहन आपी रह्या छे. जेमनी मातृभाषा हिन्दी छे तेमने तेओ गुजराती भाषानुं ज्ञान पोताना पत्रो द्वारा आपी रह्या छे अने जेमनी मातृभाषा गुजराती छे तेमने हिन्दी भाषानुं ज्ञान पोताना पत्रो द्वारा तेओ आपी रह्या छे. एक निडर पत्रकार तरीके तेमणे पोताना मन्तव्यो स्वतंत्र रीते पोताना पत्रोमां प्रगट करी समाजने साचा मार्गे दोरवणी आपी छे.

(२) एक साचा समाज सुधारक—

मुरब्बी मूळचंदभाईनो जन्म थयो त्यारे समाजमां बालविवाह, वृद्धविवाह, कन्याविक्रय, वरविक्रय, कजोडां, वेश्यानृत्य, मरण भोजन, जुगार अने धूम्रपान जेवी अनेक कुरूढिओ अने दुर्व्यसनो समाजमां प्रचलित हतां, परंतु तेओए तेनी विरुद्ध सख्त झुंबेश उपाडी, तेमना विरुद्ध जोरदार भाषणो कर्यां अने कटाक्षमय लेखो लख्यां. परिणामे आ बधी कुरुढिओ अने दुर्व्यसनो आजे समाजमां नष्टप्राय: थयां छे.

(३) एक साचा स्वदेशप्रेमी—

ज्यारे आपणो देश ब्रिटीशशासन नीचे गुलामीनी जंजीरोथी जकडायेलो हतो, त्यारे देशनी स्वतंत्रता माटे पूज्य महात्मा गांधीए अने बीजा देशनेताओए सत्याग्रहादि जे जे चळवळो उपाडी तेमां पण मु. श्री मूलचंदभाईए सक्रिय भाग लीधो. अने ४० वर्षथी आपे खादी धारण करेली छे.

(४) दिगंबर जैन धर्मानुरागी श्रावक—

मु. मूळचंदभाईनां मातापिता संस्कारी अने दिगंबर जैन धर्मनुं चुस्तपणे पालन करनारा होवाथी तेमणे धर्मना साचा संस्कार बाळपणथी ज मेळव्या हता. परिणामे तेओ धर्मपरायण अने संस्कारयुक्त अने नीतिमय जीवन जीवी रह्या छे. तेओ दानवीर स्व. शेठ माणेकचंदजीना सहवासथी जैन धर्मनुं ऊंडु ज्ञान धरावे छे, जैनशासन ऊपर अखूट श्रद्धा धरावे छे, अने दिगंबर जैनधर्मनी परिपाटी मुजबना साचा श्रावकनुं चारित्र आचरी रह्या छे. तदुपरांत जैन-

शासननी प्रभावना अने जागृति करवा माटे अनेक प्रकारनां प्रकारनो करी रह्यां छे. ज्यां ज्यां प्रतिष्ठाओ तथा बीजा मोटा धार्मिक उत्सवो उजवाय छे त्यां त्यां तेओ जाते जई तेमां सक्रिय भाग ले छे अने तेनो हेवाल पोताना पत्रोमां छापी प्रसिद्ध करे छे.

(५) एक साचा दानवीर—

तेमणे पोताना जीवनमां धन प्राप्ति करवानो कदि लोभ राख्यो नथी. नीतिना मार्गे काम करतां पूर्व-संचित पुण्यकर्मानुसार जे कंई धन मळे छे तेनो मोटाभागे दान देवामां तेओ उपयोग करी रह्या छे. सुरतमां श्री बी. एम. एण्ड आई. के. दि. जैन बोर्डिंग चाले छे ते तेमना स्व. पुत्र बाबूभाईनी यादमांज स्थापित छे.

(६) त्याग अने संयमनी मूर्ति—

तेमनुं कौटुम्बिक जीवन जोतां तेओ एक त्याग अने संयमनी मूर्ति समा मालम पडे छे. तेओ ज्यारे जुवानीमां हता, त्यारे तेमनां धर्मपत्नी एक पुत्र अने एक पुत्री मूकीने देवलोक पाम्यां, त्यारे एमजे पोताना एक पुत्र अने एक पुत्रीनुं लालनपालन करवामां संतोष मान्यो, परंतु कर्मनी गति अचळ छे. जे पुत्रनुं लालनपालन करवामां संतोष मानता ते पुत्रनुं पण १६ वर्षनी उमरनो थतां स्वर्गवास थयो आ वखते श्री मूळचंदभाई उपर वज्रपात जेवो आघात आवी पड्यो परंतु तेमणे खूब सहनशीलता अने धैर्य राखी आ आघात सहन कर्यो. अत्यारे तेमनां संतानमां मात्र एक पुत्री छे. अने ईडर नि. डाह्याभाईने १३ वर्षथी दत्तक लीधा छे ते घणाज योग्य छे.

श्री मूळचंदभाई तंदुरस्त, यशस्वी अने परोपकारी दीर्घ आयुष्य भोगवो! स्वपरहितनां उज्जवल कार्यो करवानी परमात्मा तेमने शक्ति बक्षो! तेमनो जीवनपंथ तेजस्वी, सुखमय अने कल्याणकारी बनी रहो, तेमनुं आदर्शजीवन जैनसमाज माटे दीवादांडी समुं बनी रहो! एवी हृदयनी साची शुभेच्छाओ पाठवी विरमुं छुं.

आओ मिलकर कह दें रहे चिरायुः जैनमित्र

[रच०-जयकुमार जैन, किसलवास (झांसी)]

आ-डम्बरका काम नहीं है।
ओ-छा मनका नाम नहीं है॥
मि-लनेका उपदेश दिया है।
ल-डनेको भी दूर किया है॥
क-र्तव्य सदा करके बतलाता।
र-स्ता भूलोंको दिखलाता॥
क-विता उपदेशोंको देकर।
ह-जारों नरनारीको समझाता॥
दें-मिलकर सहयोग इसे सब।
र-खकर इसका अङ्क नया अब॥
हे-जैनमित्र तुम जीते रहना।
चि-रायुः हो धर्म बताते रहना॥
रा-ज्य पथ पर चलकर तुम।
यु-गोंको सहारा देते रहना॥
जै-न जगतकी कुरीतियोंको।
न-र नारीके अज्ञानी मनको॥
मि-लकर ज्ञान जगाते रहना।
त्र-स स्थावर जीव सभीको॥

जैनमित्रके प्रति

[पं० शुकदेवप्रसाद तिवारी 'निर्मल', सुहागपुर, जि० होशंगाबाद म० प्र०]

जब मैं पूर्व खानदेशके बोदवड़ नामक स्थानसे प्रकाशित होनेवाले श्वेतांबरी जैन समाजके मासिक पत्रका सन् १९१९में कारबार चलाता था, उस पत्रका नाम "मुनि" था; तबसे मेरा सम्बन्ध "जैन-मित्र"से स्थापित हुआ है। यद्यपि मैं जैनधर्मके अनेक सिद्धान्तोंको आचरणमें लाता हूं और श्री पं.जुगलकिशोरजी मुख्तार द्वारा रचित 'मेरीभावना'का ३०-४० वर्षसे पाठ नित्य सन्ध्या समय होता है तथापि मैं किसी सम्प्रदाय विशेषके बन्धनमें नहीं हूं।

परन्तु इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि जैन समाजकी जो धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक सेवाएं "जैनमित्र"ने की है वह प्रशंसासे परे है। जिस समय हैदराबादमें मुगलाई थी, उस समय दिगम्बर जैन मुनिके विहार पर (सम्भवित सन् १९३२की बात है) पर्याप्त मात्रासे विरोध हुआ हुआ था उस समय 'जैनमित्र'ने जो सेवाएं की और जैन समाजमें ऐक्य और स्फूर्तिका मन्त्र फूंका वह समयके बिलकुल अनुकूल था 'जैनमित्र' द्वारा साहित्यिक प्रचारके अतिरिक्त शिक्षा प्रचार, मुनिमार्ग प्रचार, दस्सा पूजाधिकार, कुरीति निवारण, बाल, अनमेल और वृद्ध विवाहोंका निषेध, अंतर्जातीय विवाहोंका समर्थन, धर्म विरुद्ध ग्रन्थोंकी समीक्षाएं, पतितोद्धार, विश्व जैन मिशनका जैनधर्म प्रचार तथा ऐसे ही अनेक श्रेष्ठ काम समयर होते रहते हैं।

महात्मा गांधीजी द्वारा प्रसारित 'अहिंसा' और सत्याग्रहका समर्थन करना एक साम्प्रदायिक पत्रके लिये विशेष प्रशंसाकी बात है। इस पत्रने जैन समाजमें अनेक देशभक्त पैदा किये हैं।

ये सब कार्य श्री मूलचन्द किसनदासजी कापड़ियाकी स्वयंस्फुर्ति और लगनका परिणाम है। 'दिगम्बर जैन' मासिक, 'जैनमहिलादर्श' मासिक और 'जैन-मित्र' साप्ताहिकका नियमित प्रकाशन और संपादन श्री कापड़ियाजीकी ही शक्ति और सामर्थ्यका काम है। आपकी पत्नीका देहावसान हुआ, तो दो छोटे२ बच्चोंका पालन किया। एकमात्र पुत्र श्री बाबूभाईका युवा-वस्थामें प्रवेश करते ही मृत्यु; राजगिरि पर्वत परसे गिरने पर भयंकर चोट और इन सबसे पहिले मस्तिष्ककी खराबी जैसी विकट परिस्थितिओंमें भी आप अपने मार्गसे नहीं कभी भी नहीं हटे।

न जाने अब कितने युवकोंको कार्यक्षेत्रमें लाये और अनेक छुपे हुए जैन साहित्यको प्रकाशमें लाये।

एक दोनों मासिक और 'जैनमित्र' साप्ताहिक तथा श्रीमान् कापड़ियाजी तद्रूप हैं। इनमें कोई भिन्नता नहीं। आपके दत्तक पुत्र डाह्याभाई बड़े योग्य हैं।

वयोवृद्ध मित्र कापड़ियाजी दीर्घायु हों, इनसे भी अधिक सेवा दिगम्बर जैन समाजकी कर सकें ऐसी मैं परमात्मासे प्रार्थना करता हूं।

आदर्श साप्ताहिक 'जैनमित्र'

(लेखक—लालचन्द एम. शाह, पाचोरा-खानदेश)

यह हर्ष और अभिमानकी बात है कि वीर सं० २४८६ में ६० वर्ष पूर्ण होकर ६१ वें वर्षमें पदार्पणार्थ जैनमित्रका हीरक जयंती अंक निकाला जा रहा है।

अपने समाजमें जो भी कुछ इनेगिने साप्ताहिक हैं, उनमें 'जैनमित्र'का निःसन्देह अपना एक विशेष स्थान है। बहुतसे पत्र अल्प समयमें ही बन्द पड जाते हैं, परंतु जैनमित्रकी दीर्घायु देखते यह बात झूठसी प्रतीत होती है। किसी भी पत्रकी कालमर्यादा उसकी लोकप्रियता पर ही निर्भर है। लोकप्रियता संपादन करना कुछ आसान काम नहीं। उसके लिये सुबोध, ज्ञानवर्धक सुंदर साहित्य, प्रकाशनकी नियमितता तथा उचित मूल्यादि प्रमुख तत्वोंकी निहायत जरूरी है। विशेष बात यह है कि इन तीनों सूत्रोंका एकीकरण जैनमित्रमें पूर्ण रूपमें पाया जाता है। जैनमित्र इतना नियमित समय पर आता है कि जिस दिन जैनमित्र आता है उसको शनिवार समझना यानी जैनमित्र शनिवार ऐसा इक्वेशन हो गया है। दूसरी विशेषता यह है कि जैनमित्र राष्ट्रभाषा हिंदीमें प्रकाशित होता है, जिससे उसका प्रचार भारत-भरमें है।

अपने समाजके साप्ताहिकोंमें मेरे ख्यालसे जैनमित्रके ग्राहक तथा वाचक दूसरे पत्रोंकी अपेक्षा निश्चित अधिक होंगे। इसलिये जैन समाजके सब स्थानोंके समाचार इसमें पढने मिलते हैं। मूल्यकी दृष्टिसे भी जैनमित्र बहुत सस्ता है। हरसाल दो तीन रुपये कीमतमें उसी मूल्यमें तो उपहार ग्रंथ भेंट मिलते हैं। आजतक अनेक उत्तमोत्तम प्रकाशित अप्रकाशित ग्रन्थ ग्राहकोंको भेंट किये हैं। जैनमित्रका प्रत्येक अंक साहित्यकी दृष्टिसे संग्राह्य रहता है। हमेशा उसमें विविध विषयके सुंदर२ लेख तथा कविता आती हैं। जैनमित्रकी साहित्य सेवामें माननीय पं० स्वतंत्रजीका विशेष सहयोग है। प्रायः हरअंकमें आपके सामाजिक तथा धार्मिक विषयके पठनीय लेख रहते हैं जो वाचकोंका एक आकर्षण बन गया है।

धर्म और समाजोन्नतिमें जैनमित्र सदा सहायक ठहरा है। अनमेल विवाह, दहेजप्रथा, शिक्षा प्रचार और अन्तर जातीय विवाह जैसे सामाजिक प्रश्नोंको हल करनेमें जैनमित्रने यश पाया है। अपनी जिंदगीमें उसने सर्वदृष्टिसे सामाजकी सेवा की है। इस पत्रकी इतनी योग्यता और लोकप्रियताका श्रेय श्रीमान कापडियाजीको है, जो उसके ऑनररी संपादक हैं। आप जो तनमनधनसे कार्य करते हैं उसीके परिणाम स्वरूप यह हीरकजयंती अंक प्रकाशित हो रहा है।

आखिर इस शुभावसरमें मैं ऐसी आशा और सदिच्छा प्रकट करता हूं कि जैनमित्रकी प्रगति जैनोंका मित्र तक ही सीमित न रहते जनमित्र बनने तक हो तथा अर्धसाप्ताहिक, दैनिक बननेकी कोशिश करें ताकि धर्मपथ प्रदर्शनका महाकार्य अधिक हो और जैनमित्रका भविष्य चिरकाल उज्वल रहे।

जागृतिका अमर-दीप

ले०—पूनमचन्द पाटोदी
B. Com. LL. B अजमेर

आवश्यकता ही आविष्कारोंकी जननी है, (Necessity is the mother of inventions) के अनुसार प्रत्येक वस्तुका प्रादुर्भाव उसकी आवश्यका पूर्तिके हेतु एवं समयकी मांग (Demand of time) के मुताबिक ही होता है। ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि (Historical Back Ground) इस तथ्यकी साक्षी है कि एक समय था जबकि एक स्थानसे दूसरे स्थान तक जाना ही दुर्लभ नहीं वरन् एक स्थान पर घटित होनेवाली घटनाओंकी जानकारी दूसरे स्थान पर होना भी नामुमकिन था। किन्तु वैज्ञानिक साधन, इन कठिनाइयोंको आज, मात्र एक स्वप्न दृष्टका प्रलाप ही सिद्ध करते हैं। निःसन्देह रेडियो और टेलीविजन आदिसे आज घटनाओंकी जानकारी एक स्थानसे दूसरे स्थान पर क्षण भरमें ही हो जाती है। परन्तु ये साधन इतने अधिक मूल्यवान हैं कि जन साधारणके लिये इनका प्रयोग दुर्लभ है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि जनसाधारणके लिये ऐसे कोई साधन ही नहीं हो कि वे उसका प्रयोग सरलतासे कर सकें। 'समाचार पत्र' एक ऐसा सस्ता (Cheap) एवं सुलभ साधन है, जिसका लाभ हर कोई सुगमतासे ले सकता है। समाचार पत्र केवल घटनाओंकी संक्षिप्त जानकारी ही नहीं वरन् उनके विस्तृत विवरणके साथ मानस मस्तिष्कको पुष्ट एवं सबल बनानेके लिये ज्ञानवर्धन एवं मनोरंजन आदिकी बहुमूल्य सामग्री भी प्रस्तुत करता है। जैनमित्रके लिये भी अगर उपर्युक्त कथनका आश्रय लिया जाय तो संभव है, कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जैन संसारमें घटित होनेवाली घटनाओंकी जानकारी जितनी शीघ्र, विस्तृत एवं प्रमाणिकताके साथ समाजको आज जैनमित्र देता है, उससे अधिक शायद ही कोई दूसरा पत्र प्रस्तुत कर सकता होगा।

सन् १९४४ ई०से, जबकि अजमेरमें श्री महावीर जैन पुस्तकालयकी स्थापना हुई थी, मुझे जैनमित्रके अध्ययनका अवसर किसी न किसी प्रकार बराबर मिलता रहा है। चौदह पन्द्रह वर्षके इस सम्पर्कसे इस निष्कर्ष पर पहुंचनेमें मुझे कोई कठिनाई प्रतीत नहीं होती कि 'जैनमित्र' केवल घटनाओंका आदान प्रदान ही नहीं वरन् समाजके मस्तिष्कको स्वस्थ एवं सबल बनानेके हेतु ठोस एवं अलभ्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी प्रस्तुत करता है। वीर वाणीका प्रचार एवं जैन धर्मके अमूल्य सिद्धांतोंका प्रसार जैनमित्र अपने स्वयंके द्वारा एवं प्रति वर्ष विभिन्न उपहार आदि ग्रंथोंके द्वारा जिस दृढ़ता एवं साहसके साथ कर रहा है, वह आजके इस भीषण मंहगाई युगमें निःसन्देह प्रशंसनीय है।

भाव, भाषा एवं नीतिमें जैनमित्र जिसरीति पर चल रहा है, उसका एक विशिष्ट स्थान है। समाजके अन्य पत्र जहाँ सैद्धांतिक वाद विवाद एवं तेरह बीस आदि की विद्वेष पूर्ण चर्चाओंमें न केवल अपने अमूल्य साधनोंका दुरुपयोग कर रहे हैं, वरन् समाजमें कलह एवं फूटके बीज भी बो रहे हैं, वहाँ जैनमित्र इन सब विषमताओंसे ऊपर उठकर समाजमें सामञ्जस्य, एकता एवं भ्रातृत्व भावनाका प्रसार करनेमें अपने जीवनको समर्पण कर-जिस उच्च कोटिके निस्वार्थ सेवा-मार्ग पर चल रहा है, वह वास्तवमें स्वर्ण अक्षरोंसे अलंकृत किये जाने योग्य है।

जैनमित्रके सफलतापूर्ण संचालनका श्रेय "कापड़ियाजीके उदार संरक्षण, विलक्षण सूझबूझ एवं अदम्य उत्साहको ही है। आज उनकी शानदार सेवाओंकी जितनी प्रशंसा की जाय-तुच्छ है। जैन समाज ऐसे प्रदीपमान सपूतको पाकर आज निःसन्देह फूली नहीं समाती है।

कापड़ियाजीके साथ २, स्वतन्त्रजीकी सुबोध, सुलझी हुई एवं सुरुचिपूर्ण लेखनीने जैनमित्रकी शोभा बढ़ानेमें सोनेमें सुगन्धका कार्य ही नहीं किया है, वरन् उसकी ख्यातिमें चार चाँद ही लगा दिये हैं। तात्पर्य यह है कि इस युगल जोडीकी अधिक प्रशंसा करना सूर्यको दीपक ही दिखाना है! अस्तु—

हीरक जयन्तिके इस महान पर्वके अवसर पर और प्रभुसे प्रार्थना है, कि वह जैनमित्रके संचालकोंके अदम्य उत्साहको दिनदूना और रात चौगुना बढ़ाते हुए जैनमित्रको युग युगान्तर तक जीवन रखें, ताकि जैन समाजका यह "अमर दीप" सदाकी भांति भविष्यमें भी समाजका इसी प्रकार पथ-प्रदर्शन करते हुए जिनवाणी माताकी सेवामें लगा रहे! इति !!

मत कर रे अनुराग

रवि-रश्मि सिमटती हैं भूतलसे।
सुमन यद्यपि मुकुलित हैं रवि देखे छलसे॥
रे मधुप! बली न जीते छल बलसे।
पुष्पांकमें छिपेगा कर पुण्य-पराग-राग॥
मत कर रे अनुराग॥

रे विहंग! तू भू-वासी शशि अम्बर-वासी।
सुधाकरसे सुधा-याची तेरी मति नाशी॥
तू प्रेम-पाठ-पाठी, पर न प्रेम चिर वासी।
है इसीलिये मम सम्बोधन, कल्पित है ये राग॥
मत कर रे अनुराग॥

रे पतंगे! तू है विस्मृत, भ्रान्त महातम।
क्षण होता जान जीवन लघु-तम॥
दीप-शिखा कर देगी, इस तनको तम।
अतः स्वाकारमें न हो ध्वंस हो सराग॥मत०॥

औरे मानव! तू भी भूला है, सत्-पथसे।
कर जीवनको ज्योतिर्मय, विरक्त भुतिसे॥
हो ध्यानस्थ हर भवोत्पीड़न आत्मबलसे।
भव-भोग विनाशी, तू अविनाशी वीतराग॥मत०॥

—प्रेमचंद जैन, शिवपुरी।

मेरे दृष्टिकोणसे!

जैनमित्रका विशेषाङ्क प्रकट हो रहा है, यह वस्तुतः प्रसन्नताका प्रसंग है। विशेषाङ्क उसके स्तरके सर्वथा अनुकूल ही प्रकट होगा, ऐसा निश्चय है। जैनमित्रके द्वारा समाजमें मैत्री, समता और समयके स्वरूप था। समयानुसार गत अनेक दशाब्दियोंसे प्रसार एवं प्रचार हो रहा है। इस सुन्दर संस्थानके लिए भाई श्री कापड़ियाजी और उनके मित्रगण वस्तुतः बधाईके पात्र हैं। जो स्थान हिन्दी आलोचनाक्षेत्रमें साहित्य संदेशका है वही श्रमण संस्कृतिके प्रसार एवं प्रचारमें जैनमित्रका स्थान सुरक्षित है। मित्रके द्वारा समाजके अनेक लेखक, कवि और शोधकोंकी उत्पत्ति हुई है। समाजके पत्रकारिताकी भावनाको मित्र परिवारसे यथेष्ठ प्रोत्साहन मिलता रहा है।

आजके बौद्धिक युगमें वाणीके प्रसारकी महत्ती आवश्यक्ता है। पत्रकारिता और पत्रोंका व्यक्तित्व इस दृष्टिसे महत्वपूर्ण आयोजन है। समाजकी गत-विगत अनेक शुभाशुभ संदेशोंका जनसाधारण तक पहुंचानेका श्रेय मित्रको रहा है। समाजकी गति विधिका सम्यक प्रकाशन अबाधगतिसे भारतिय पत्रों द्वारा प्रायः बहुत कम हुआ है। जिन कतिपय पत्रों द्वारा यह कठिन कार्य सम्पन्न हुआ भी है उनकी श्रेणीमें 'जैनमित्र'का स्थान सुरक्षित है।

सांसारिक अनेक अन्तरायोंका सामना करता हुआ जैनमित्र गृहीत और अगृहीत कर्मबन्धोंका क्षय करता रहा है। श्री कापड़ियाजीने मेरे स्मरणसे पूर्व इसकी दशाको अपनी संरक्षतामें संभाला है और प्रदत्त धरोहरका अत्यन्त सुचारुके साथ वर्द्धित और समवर्द्धित रूप देते हुए उसे सुदीर्घ जीवी बनाया है। श्री कापड़ियाजी शतायु हों शताब्दिक 'मित्र'की सेवा इसी प्रकार करते रहे ऐसी शुभकामना और भावनाके साथ इस शुभ निश्चयके लिए मेरा अभिनन्दन स्वीकारीएगा। म० सा० प्रचंडिया, एम० ए०,
महामंत्री—श्रमण सांस्कृतिक संघ, आगरा।

जैनमित्रके सफल आन्दोलन

लेखक:-
पं० छोटेलाल बरैया, उज्जैन

यह बात दि० जैन समाजसे छिपी नहीं है कि जैनमित्र साप्ताहिक होनेपर 'सूरतसे प्रकाशित होता चला आरहा है, और वह समाजका एक बहुत पुराना पत्र है, जिसका जीवन इस समय ६० वर्ष पूर्ण होकर ६१ वे वर्षमें पदार्पण कर रहा है। प्रारम्भमें यह पत्र पाक्षिक रूपसे महामना स्वनाम धन्य स्वर्गीय पूज्य पं० गोपालदासजी बरैयाके सम्पादकत्वमें प्रकाशित होता था किन्तु उनके स्वर्गस्थ होनेके पश्चात् इसका सम्पादन जैन समाजके कर्मठ कार्यकर्ता स्वर्गीय श्री ब्र० शीतलप्रसादजीने जबसे संभाला था उस समय यह पत्र पाक्षिक रूपमें प्रकाशित होता था, अत: मेरा सम्बन्ध इस पत्रसे चला आरहा है।

श्री ब्र० सीतलप्रसादजीके सम्पादकत्वमें जबसे यह पत्र आया था, तबसे यह पत्र और भी अधिक लोकप्रिय बन गया था। वास्तवमें इस पत्रकी सेवा ब्र० ब्रह्मचारीजीने बड़ी ही लगनसे की थी, बभीर थे, और कुछ-कुछ सम्पादकीय लेख तो इतने महत्वपूर्ण निकले थे जो आज भी वे अपना आदर्श ज्यों-की त्यों कायम लिये हुए हैं।

अस्तु इस उपर्युक्त ६० वर्षकी अवधिमें समाजमें अनेक चढ़ाव तथा उतार आये, कितने ही पक्ष एवं विपक्षोंके लेकर अनेक आन्दोलनोंका अवसर आया, अतः कितने ही आन्दोलनोंमें तो जैनमित्र असफल रहा, किन्तु कितने ही आन्दोलनोंमें कमर कसके जब आगे आया उससे समाजमें नवचेतना और आशातीत जाग्रति हुई और जैनमित्र अपने आंदोलनोंमें सफल सिद्ध हुआ।

उदाहरणार्थ-एक समय वह था जब जैन समाज की बेटियाँ जो छोटेछोटे ग्रामोंकी निवासनी थीं, वे जब पानी भरनेके लिये कुओं पर पानी छाननेके पश्चात् उस बिलछानीको कुएमें डालने पर जैनेतरोंकी दृष्टिमें अपराधिनी गिनी जाती थीं, अतः जब जैन पत्रोंने इस सैद्धांतिक प्रश्न पर आवाज उठाई उसमें जैनमित्र सबसे आगे था, और अपने सिंहनाद द्वारा वह बल प्रदान किया कि आज उस विवादका सदैवके लिये अन्त हो गया है, और जैन समाजकी बहिन-बेटियाँ बेरोक-टोक बिलछानीको यथा-स्थान पहुंचानेमें किंचित् भी संकोच नहीं करती हैं।

इसी तरह स्टेटोंके जमानेमें और स्वतंत्रता प्राप्तिके पूर्व हमारे सनातन बन्धुओंके विरोधके कारण जैन समाज अपनी आराध्य जिन प्रतिबिम्बको बिमान (जलेब) में विराजमान करके शहरमें नहीं निकालने देता था, इस प्रश्न पर "कोलारस" 'बयाना' तथा "करैरा" आदि अनेकों स्थानों पर बड़ी-बड़ी दुर्घटनाएं घटीं, किन्तु जैन समाजके यह एक मात्र अधिकारकी प्राप्तिके लिये आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब जैनमित्रने अपनी आवाज बुलन्द कर जो आन्दोलन प्रारम्भ किया और जैन समाजको जो साहस पूर्ण मार्गदर्शन दिया उसका सुखद परिणाम यह निकला कि जगहर जहां इन बिमानों पर जो एक प्रकारका प्रतिबन्धसा था, वह स्टेटोंकी सरकारोंने दूर कर जैनोंके इस अधिकारकी सुरक्षा की, यह एक जैनमित्र पत्रके आंदोलनकी विशेषता ही थी।

इतना ही नहीं जिस समय भारतमें मुनि विहार हुआ और कितनी ही स्टेटोंमें (हैदराबादादि) में दि० मुनि विहारपर रोक (पाबन्दी) लगाई गई उस कालमें दि० जैन समाजके अन्य पत्रोंके साथ ही इस पत्रने भी केवल इस पाबन्दीको दूर करानेके लिये भाग ही नहीं लिया था, अपितु दिन रात एक करके स्टेटोंके अधिकारियोंको जो सैद्धांतिक मार्ग-

दर्शन किया उसका परिणाम यह हुआ कि आज यह समस्या सदैवके लिये हल हो चुकी है, यह सब श्रेय अन्य पत्रोंके साथ ही साथ जैनमित्रको अधिक मिला है।

इसके अतरिक्त और भी अनेक आन्दोलन जैसे गजरथ समस्या, मरण भोज आदिके आन्दोलनोंमें यह पत्र अग्रसर रहता चला आया है और उन आंदोलनों पर जो उसे सफलता मिली है यदि उन सबपर प्रकाश डाला जाय तो एक ग्रंथ बन सकता है, परन्तु यह तो एक मात्र विहंगम दृष्टि द्वारा समाजको यही बताना अभीष्ट समझा है, कि वास्तवमें जैनमित्र भी दि० जैन समाजका एक बहुत पुराना और निर्भीक तथा सफल आन्दोलनीय पत्र है, जो निश्चत रूपमें पुरातन कालमे माननीय श्री सेठ कापडियाजीके प्रेससे पकाशित होकर अपने ६० वर्ष पूर्णकर आज इस अभ्युदयीके रूपमें समाजके सामने है।

बहुतसे पत्रकार पत्रों द्वारा व्यापार कर धन संग्रहका लक्ष्य रख लोभमें उतर कर वे पत्रके स्तरको निम्न स्तर बनालेते हैं, किन्तु जैनमित्र इस अपवादसे भी सदैव दूर रहा है, बल्कि, इस पत्रने जैन समाजके अन्य पत्रोंकी अपेक्षा प्रतिवर्ष बड़े ही उपयोगी ग्रंथ उपहारमें देकर जिनवाणीका जो प्रसार किया है, वह इस पत्रकी विशेषता है। वर्तमान समयमें जहां कागजकी इतनी भारी मँहगाई होते हुए भी मित्र प्रतिवर्ष कोई न कोई ग्रंथ, जो मित्रके वार्षिक मूल्यसे आधी कीमतसे भी अधिक मूल्यवान उपहार ग्रन्थ आज भी भेट स्वरूप प्रदान कर रहा है, यह वर्तमान सम्पादककी निर्लोभताका एक महत्त्व पूर्ण आदर्श है। वास्तवमें ऐसे ही आदर्श सम्पादकोंके हाथमें जो पत्र होते हैं वे ही लोकप्रिय बन सच्ची समाज सेवा कर सकते है और वे ही पत्र अपने आन्दोलनोंमें सफलता प्राप्त कर सकते हैं। किमधिकम्। विशेषु किमऽधिकम्।

जैनमित्रके प्रति

जैनमित्र कल्याणी।

[र०-कैलाशचन्द शास्त्री "पंचरत्न", लखनऊ।]

लो "जैनमित्र" कल्याणी, जो जैनमित्रका ज्ञानी।
हीरक जयंति सुख दानी ॥ १ ॥ लो० ॥

सूरत-सूरपुर-विख्याता, जो जैन तीर्थ दर्शाता।
हुये अमर मुनि विज्ञानी ॥ २ ॥ लो० ॥

बम्बई नगर जो आया, सूरत भी कम न पाया।
यहां शांति प्रेम रसवाणी ॥ ३ ॥ लो० ॥

पूज्य सीतलप्रसाद ब्रह्मचारी, जो जैन जातिमें भारी।
संथापक थे अग्रणी ॥ ४ ॥ लो० ॥

चम्पतराय बैरिष्टर, महाविज्ञ अरु विद्ववर।
महिमा भी उनकी जानी ॥ ५ ॥ लो० ॥

है वर्ष ६१ वां आया, हीरक जयन्ति अङ्क लाया।
स्वतन्त्रजीकी कृपा निशानी ॥ ६ ॥ लो० ॥

कापड़ियाजीकी महिमा, सम्पादकीय गुरु गरिमा।
अब तक है अमर कहानी ॥ ७ ॥ लो० ॥

था शोक महा सबहीको, प्रिय पुत्र विजयके गमको।
संसार चक्र यह जानी ॥ ८ ॥ लो० ॥

सब मोह शोक भ्रमाया, जैनमित्रमें ध्यान लगाया।
है यही विजय कल्याणी ॥ ९ ॥ लो० ॥

नहीं अल्टापल्टी कीनी, एक रूप ही उसपर कीनी।
नहीं बंद कीनी यह वाणी ॥१०॥ लो० ॥

जो जैनमित्र तल्लीना, निश्चय आतम रस पीना।
हुये परमातम पदके ज्ञानी ॥११॥ लो० ॥

जनरको पत्र सुहाया, मानव बन करके आया।
हो लोक प्रिय यह वाणी ॥१२॥ लो० ॥

जो शत्रु बनकर आया, चरणोंमें शीश झुकाया।
"कैलाश" मान भयो पानी ॥१३॥ लो० ॥

—: श्रद्धांजली :—

हे जैनमित्र तुम हो महान ....
नव युवकोंमें हो युवक बड़े,
वृद्धोंमें स्फूर्ति लाये।
घर घर समाजके बच्चोंमें,
जागृतिका बीज उगा लाये॥
महिलाओंमें भी श्रुत वर्द्धन,
करते रहते हो सदा दान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥१॥
कवि लेखक पंडित बने आज,
जिनने मानों जीवन पाया।
त्यागी वृतियोंके दृढ़ विवेक,
तेरे सिंचन बिन मुरझाया॥
उनका निजधर्म बतानेको—
सूरतसे ऊगा यही भान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥२॥
तुम सभी वर्ग अपनाते हो,
अध्यात्म राष्ट्र या हो समाज।
हिंसाकी वृत्ति मिटानेको,
जैसे ईंधनको मिले आग॥
मिथ्यापनसे जो बहरे हैं,
उनको समझाते हिलाकान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥३॥
तुम नहीं पक्षमें पड़ते हो,
चाहे पंडित हों व्रती धनी।
अन्याय जिन्होंका छल पाया।
उनसे तेरी न कभी बनी॥

उनको शर्मा देते क्षणमें—
जिनवाणीका देकर प्रमाण।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥४॥

तुम मासिक पाक्षिक साप्ताहिक,
बनकर समाजको समझाया।
भूले भटकोंको राह दिखा,
सन्देश नया लेकर आया॥
वे ज्ञानवान बनकर अकड़े,
जो कलके दिन थे शठ अजान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥५॥

तुम आज सूर्य बनकर चमको,
चन्द्र बनकर नभ मण्डलपर।
या हफ्तामें दो बार चलो,
दैनिक होकर भू मण्डलपर॥
हो साठ वर्षके नौ निहाल,
सदियां पाकर होके जवान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥६॥

तेरी यह हीरक जयन्ती है,
सम्पादक चिर जीवन पाये।
पढ़कर समाज तेरी गाथा,
घर बैठे बैठे हरषाये॥
श्रद्धांजलि अर्पण कर "निर्मल"
गाता है तेरा यशोगान।
हे जैनमित्र तुम हो महान॥७॥

—माणिकलाल जैन 'निर्मल' बांसा।

जीवन शुद्धिका राजमार्गः

स्वदोष स्वीकृति, पश्चाताप एवं सुधारक प्रयत्न

[लेखक:-पं० अमरचन्द नाहटा, बीकानेर]

कोन ऐसा मनुष्य है, जो जीवनमें अपराध व भूलें नहीं करता ? मानवकी इस कमजोरीको हीलक्ष्य कर कहा गया है, 'मानव मात्र ही भूलका पात्र है', भूल व अपराध अनेक कारणोंसे होते हैं, जिसमें असावधानी, स्मृति-दोष, एवं स्वार्थादि प्रधान कारण हैं।

सबसे पहले तो हमारा कर्तव्य है, कि त्रुटियों व पापोंके होनेके कारणों पर गम्भीरतासे विचार कर यथा सम्भव उन कारणोंसे बचते रहें। फिर भी जो संस्कार वश असावधानी आदिसे त्रुटियां हो जायें या जीवन धारणके लिए जिन हिंसादि पापोंका करना अनिवार्यसा हो उनको अपनी कमजोरी स्वीकार करते रहें तो उनमें कमी होती रहेगी, उनमें संशोधन व शुद्धि होनेका अवकाश रहेगा।

यदि गलती करके उसे गलतीके रूपमें स्वीकार नहीं किया जाता है तो उसका संशोधन करनेका प्रसंग ही नहीं आयेगा। गलतियों पर गलतियां करते चले जाय तो अन्तमें उनसे ऐसे अभ्यस्त हो जायेंगे कि फिर चाहने पर भी छूट नहीं सकेंगे।

इस लिये जीवन शुद्धिका राजमार्ग यही है कि दोष होनेके कारणोंसे यथा सम्भव बचें। जिन दोषोंसे न बच सकें, उनके लिए मनमें खेद व पश्चाताप हो। अपनी कमजोरी समझ कर उनकी शुद्धिके लिए विचार व प्रयत्न हो।

दोष करते रहना उनसे छुटकारा नहीं पा सकना जिस प्रकार मनुष्यकी एक कमजोरी है, उसी प्रकार दोष करके उसे स्वीकार करनेमें संकोच करना भी मानवकी एक दूसरी कमजोरी है। कोई काम हमारे हाथसे बिगड़ जाता है, और उसे हम अपना दोष जान भी लेते हैं, फिर भी स्वीकार करनेको तैयार नहीं होते।

कभी२ तो मनुष्य अपना दोष दूसरोंके गले मढ़नेका प्रयत्न करता है। "मैं क्या करूं ? अमुकने ऐसा कर दिया था उसके कारण ऐसा हो गया" यावत् "यह गलती मेरे द्वारा नहीं हुई, अमुकके द्वारा हुई है", कहा जाता है अर्थात् उसे छिपानेके लिये बड़े प्रयत्न किए जाते हैं।

पहले तो दूसरोंको अपनी गलती व अपराध प्रतीत न हों, ऐसा प्रयत्न होता है; फिर जब पकड़ा जाता है, या दूसरोंसे उसका दोष कहा जाता है तो टालमटोल किया जाता है, दोष स्वीकार नहीं किया जाता। इस बचावके प्रयत्नसे वह दूषित वृत्ति बढ़ती ही रहती है, व उसके संशोधन व कम होनेकी आशा नहीं रह जाती।

आजतक जितने भी मनुष्योंने उन्नति की है, अपना दोष समझ उसे स्वीकार करते हुए शुद्धि करके ही की है। किसी कारणवश यदि हम पापोंसे बच नहीं सकते, पर यह ठीक तो नहीं है। पाप है; गलती तो मेरेसे हो गई है; यह तो स्वीकार अवश्य ही करना चाहिये, तभी उनसे बचना हो सकेगा।

सरकारी कानूनोंमें देखते हैं कि गलती स्वीकार

करनेवालेके बड़ेर अपराधोंकी सजा भी कम हो जाती है। यह भी हम देखते हैं। बहुत बार अपराध करने पर सजा छूट भी जाती है; नहीं तो हल्कासा दण्ड ही मिलके रह जाता है। आपसी व्यवहारमें तो स्वीकार करने पर दोष क्षमा कर ही दिया जाता है, क्योंकि जो कुछ अनुचित हो गया वह आवेश व असावधानीसे हुआ अतः उसका परिताप होगा ही और स्वीकार करने मात्रसे उसे मानसिक दण्ड तो मिल ही गया, क्योंकि भविष्यमें वैसा न हो, यह लक्ष्य रखेगा, हमेशा उसके लिए उसे खेद रहेगा; इधिक पश्चाताप होगा तो धार्मिक नियमोंके अनुसार भी पश्चाताप व प्रायश्चित्तसे पाप तत्काल व सहजमें धुल जाते हैं।

अपनी भूलें स्वीकार न करना मनुष्यके मनकी ही कमजोरी है, अन्यथा बहुत साधारणसे दोषोंको स्वीकार करनेसे उसे कुछ नुकसान भी नहीं होता, उल्टा उसकी सचाईका अच्छा प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ एक व्यक्तिके हाथसे घरकी कोई चीज कांच व मिट्टी आदि की उठाते, रखते, चलते या कोई काम करते असावधानीवश छूट, फूट गई हो तो यदि वह स्वयं दूसरेके देखने कहनेके पहले ही यह कह देता है कि ओह! क्या करूं वह चीज मेरे हाथसे अमुक कार्य करते समय फूट गई। मुझे अपनी असावधानीके लिए बड़ा ही खेद है, दूसरे हाथसे भी फूट जाती है या फूट सकती थी कोई बात नहीं। इस स्पष्टोक्तिसे उसके प्रति मालिकका आदर बढ़ेगा। किन्तु ऐसे गलती हो गई, पर उसने अपने आप भूल स्वीकार करली, इसका उसे खेद है तो भविष्यमें ध्यान रखेगा।

ऐसे आदमी थोड़े ही मिलते हैं कि अपना अपराध झटसे आप प्रकाशित कर दें। अधिकसे कुपित मालिक यहि कहेगा कि ध्यान रखना चाहिए था।

देखिये वह मेरे बड़ी कामकी थी, इसके बिना मुझे बड़ी असुविधा होगी। भविष्यमें ध्यान रखना। इससे भी अधिक कोई दण्ड देगा तो उसके पैसे ही तो भरा देगा या दो कड़ी बातें कह नीचा दिखा पर इससे भावी जीवनमें लाभ कितना अधिक होगा, इस पर विचार करने पर इस भूल स्वीकार करनेकी महत्ताका भली भांति पता चल जायगा। वह दण्ड जीवन भर उसको खलता रहेगा, जिसके द्वारा ऐसी गल्तियां होती रुक जायेंगी। अनेक अनर्थ, जो स्वीकार नहीं करनेमें होने सम्भव थे, उन सबसे आप बच जायेंगे तो यह भी कितनी बडी बात है। जीवनके लिए यह बड़े महत्वका सबक होगा।

अब इतना बड़ा लाभ होनेपर भी मनुष्य दोष स्वीकार करनेको तैयार क्यों नहीं होता, सकुचाता क्यों है? इस पर भी थोड़ा विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है, जिससे मानवकी इस कमजोरीका पता लग जाये। स्वीकार न करनेका पहला कारण तो यह है कि वह जानता है कि इससे मेरा अपमान होगा।

नीचा देखना पड़ेगा, अपशब्द सुनने पड़ेंगे, नुकसान होगा, दंड मिलेगा अर्थात् इससे उसके अहंको ठेस लगती है। दूसरोंकी दृष्टिमें वह हीन नहीं बनना चाहता। समाजकी बदनामीसे भय खाता है। उसे अपनी प्रतिष्ठा महत्वके घटनेका भय रहता है। कभीर वह अपने दोषोंको छिपाकर बहादुरीका काम किया ऐसा भी अनुभव करता है। टूटीफूटी चीजको ही लीजिए, वह ऐसे ढंगसे जोड़के रख देगा कि सहजमें दोष पकड़ा ही न जा सके। दूसरा उसे छुये तो गिर पड़े, अतः दोषी अन्य बन जाय।

इस करतूतमें वह अपनी होशियारी मानता है, मन ही मन प्रसन्न होता है, फूला नहीं समाता, पर वास्तवमें तो यह चोरी और उल्टी सीना जोरी हुई। इससे दोषवृत्तिको बढ़ावा मिलता है। यह प्रवृत्ति बहुत हीन है। भावी जीवन पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। अतः परित्याज्य है।

भयको दूर और कम करनेका एक चमत्कारी मन्त्र है कि उसके बड़ेसे बड़े होनेवाले दुष्परिणामोंसे वह घबरा नहीं जायगा। उन्हें साधारण समझ जायगा। मान लीजिए कि एक व्यक्तिने किसीको गाली दी। उसका परिणाम साधारणतया सामनेवालेका भी गाली देनेका होता है। उसके लिए तो तैयारी पहलेसे ही होती है, अतः गाली देनेका भय नहीं होता।

इससे बढ़कर यदि सामनेवालेने मारपीट कर दी तो वह उसे सहज व सम्भव समझ कर उद्विग्न नहीं होगा, यावत् सामनेवाला उसका समाज व सरकारसे (सुविचार मांगकर उसे) सामाजिक व राजकीय दंड दिलवा सकते हैं। बात बढ़ गई तो उनके धन व शरीरको भी नुकशान पहुंचा सकता है। यहां तक कि यदि पहिलेसे ही मनमें वह तैयारी कर लेगा तो फिर सामाजिक व राजकीय दंडोंका भी उसे भय नहीं रहेगा।

अपराध स्वीकार करनेमें जो भय रहता है, उससे अपराध नहीं स्वीकार करनेके दुष्परिणाम पर गहराईसे सोच लिया जाय तो भय नहीं रहेगा। स्वीकार करनेसे जो अपरिमित लाभ होनेवाला है, उस ओर गम्भीरतासे लक्ष्य किया जाय तो दोनोंके लाभालाभकी तुलना करने पर जब स्वीकार करनेवालेके लाभका पलड़ा भारी प्रतीत होगा तो मन स्वयं उसके लिए तैयार हो जायगा।

अपराध साधारण व बड़े दोनों प्रकारके होते हैं। और कई साधारण व्यक्तिसे लगाकर बड़ेसे बड़े पुरुष भी करते हैं। कभी कभी तो जिस व्यक्तिसे किसी ऐसे भयंकर अपराध होनेकी सम्भावना ही नहीं होती वे उससे किसी कारण वश हो जाते हैं, पर कदाचित् दोष हो जानेवालेके पश्चाताप बहुत अधिक होता है। जितना ही वह उच्चस्तरका व्यक्ति होगा व अपराध उससे जितना ही नीचे स्तरका होगा उसे मानसिक कष्ट व भय उतना ही अधिक होगा।

व्यक्तिकी स्थिति दोष करनेके कारण आदि पर विचार करके ही दंड दिया जाता है। अतः अपराधोंकी शुद्धिके भी अनेक प्रकार होते हैं। जैसे एक व्यक्तिसे साधारण गलती हो जाती है तो यदि वह स्वगत हुई तो अपने मनमें दोष स्वीकार करनेसे ही उसका परिमार्जन हो जायगा। यदि वह दूसरेको भी नुकसान पहुंचानेवाली है तो उससे उस दोषोंके लिए क्षमा मांग लेना आवश्यक हो जाता है। केवल मनमें ही स्वीकार करनेसे वह दोष शुद्ध नहीं होगा। इसी प्रकार कई दोषोंकी शुद्धि मनके पश्चातापसे ही कईयोंकी वचन द्वारा प्रकाशित करने पर व प्रायश्चित् लेकर और कईयोंकी उसके प्रायश्चित् रूपमें कठिन शारीरिक दंड देना आवश्यक होता है।

इसी प्रकार कई दोष, जिनसे वे संबोधित होते हैं, उन्हींके सामने स्वीकार करनेसे उसका परिष्कार हो जाता है। उससे बड़े दोषके लिए अधिक व्यक्तियों यावत् समाजके समक्ष उपस्थित होकर या बड़े आदमियोंके सम्मुख अपने अपराध स्वीकार करना आवश्यक हो जाता है। धर्म-शास्त्रोंमें भी देव, गुरुजनके समक्ष दोष स्वीकार करनेसे पाप शुद्धि मानी गई है। प्रत्येक मानवका कर्तव्य है कि वह रातके किये हुए पापोंको प्रातकाल उठकर विचारे व दिनमें किये हुए पापोंको प्रातःकाल उठकर विचारे व दिनमें किए हुए पापोंको संध्या समय चिंतन कर उनको वचन द्वारा गुरु व संघके सम्मुख स्वीकार रूप प्रायश्चित् करते हुए उनके लिए खेद प्रकट करे, पश्चाताप करे व बड़े पापोंके लिए प्रायश्चित लेकर आत्म शुद्धि करे। जीवन शुद्धिकी इस क्रियाका जैन धर्ममें बड़ा महत्व दिया जाता है। उस क्रियाकी संज्ञा है प्रतिक्रमण (यानी पापोंसे प्रत्यावर्तन पीछे हटना) यह उभय कालकी आवश्यकीय क्रिया बतलाई गई है।

अपने दोषोंकी शुद्धि, स्वनिन्दा, गर्हा, प्रतिक्रमण व क्षमापना द्वारा करनेका अभ्यास जब भी कभी कोई गलती आपके ध्यानमें आवे उसे तत्काल स्वी-

कार कर पश्चाताप करना चाहिये व भविष्यमें न हो इसके लिए निश्चित प्रतिज्ञा करनी चाहिये। भूलें मनुष्यसे होती हैं तो सुधार भी उनका वही तत्काल कर सकता है। इस सूत्रको याद रखिए।

जब भी जो भूल व दोष विदित हो उसका तत्काल संशोधन करलेना ही विवेक है। इसमें संकोच करना उनको बढ़ावा देना है। ज्यों२ देरी होगी दोषोंसे आत्मा भारी होता चला जायगा। "ज्यों२ भीजे कामरी, त्यों२ भारी होय।" दोषोंको स्वीकार व प्रकाशित कर शुद्धि करनेसे आत्मा हलकी हो जायगी निर्मल हो जायगी। सभी महापुरुषोंने यही विचार किया है कि जब जहां भी उन्हें अपनी भूल मालूम हुई तत्काल उसकी शुद्धि की।

भगवान् बाहुबलिको जब मालूम हुआ कि उसका अहंकार अनुचित है तत्काल उसे छोड़ पूर्व प्रमाणित मुनियोंको वन्दन करनेको उद्यत हुये। फिर केवलज्ञानकी देर ही क्या थी? भरतको जब वस्त्र आभूषणादिकी शोभा व्यर्थ प्रतीत हुई, तत्काल सबको हटा दिया, निर्ग्रन्थ बने। सनत्कुमार चक्रवर्तीको देव द्वारा दैहिक सौन्दर्य विनाशशील ज्ञात हुआ तब तत्काल सचेत हो आत्मिक सौन्दर्यकी उपासनामें लग गए।

इसप्रकार हजारों दृष्टांत हैं। सभीने दोषोंके स्वीकार व शुद्धिसे ही आत्मोत्थान किया, परमपद पाया। हम सभी विशुद्धतासे इसी मार्गको अपनाकर कल्याणपथगामी बनें, यही शुभेच्छा है। महापुरुषोंका यही जीवन सन्देश है।

पर्यूषणी आदि पर्वोंमें प्रतिक्रमण व क्षमावणी द्वारा दोषोंकी स्वीकृति एवं उनकी निन्दा गर्हाकर आत्म विशुद्धि की जाती है। विविध प्रकारसे धर्माचरणों द्वारा गुणोंका विकाश किया जाता है-अतः ऐसे परम-कल्याणकारी पर्वोंके हम सब सच्चे अनुयायी बनें। जैनधर्ममें जो जीवन विशुद्धिके सरल व सच्चे मार्ग प्ररूपित है उनको जनजनमें प्रचारित करें तो विश्व-कल्याणपथ प्रशस्त होगा।

सर्वज्ञदेवकथित छहों द्रव्योंकी स्वतन्त्रतादर्शक

सामान्य गुण।

(१) अस्तित्वगुणः—

कर्त्ता जगतका मानता जो कर्म या भगवानको,
वह भूलता है लोकमें अस्तित्वगुणके ज्ञानको;
उत्पाद-व्यययुत वस्तु है फिर भी सदा ध्रुवता धरे,
अस्तित्वगुणके योगसे कोई नहीं जगमें मरे ॥१॥

(२) वस्तुत्वगुणः—

वस्तुत्वगुणसे हो रही सब द्रव्यमें स्व स्वक्रिया,
स्वाधीन गुण-पर्यायका ही पान द्रव्योंने किया;
सामान्य और विशेषतासे कर रहे निज कामको,
यों मानकर वस्तुत्वको पाओ विमल शिवधामको ॥२॥

(३) द्रव्यत्वगुणः—

द्रव्यत्वगुण इस वस्तुको जगमें पलटता है सदा,
लेकिन कभी भी द्रव्य तो तजता न लक्षण सम्पदा;
स्व-द्रव्यमें मोक्षार्थी हो स्वाधीन सुख लो सर्वदा,
हो नाश जिससे आजतक की दुःखदायी भवकथा ॥३॥

(४) प्रमेयत्वगुणः—

सब द्रव्य-गुण प्रमेयसे बनते विषय हैं ज्ञानके,
रुकता न सम्यग्ज्ञान परसे जानियो यों ध्यानसे;
आत्मा अरूपी ज्ञेय निज यह ज्ञान उसको जानता,
है स्व-पर सत्ता विश्वमें सुदृष्टि उनको जानता ॥४॥

(५) अगुरुलघुत्वगुणः—

यह गुण अगुरुलघु भी सदा रखता महत्ता है महा,
गुण-द्रव्यको पररूप यह होने न देता है अहा!;
निज गुण-पर्यय सर्व ही रहते सतत निजभावमें,
कर्ता न हर्ता अन्य कोई यों लखो स्व-स्वभावमें ॥५॥

(६) प्रदेशत्वगुणः—

प्रदेशत्वगुणकी शक्तिसे आकार द्रव्योंको धरे,
निजक्षेत्रमें व्यापक रहे आकार भी स्वाधीन है;
आकार हैं सबके अलग, हो लीन अपने ज्ञानमें,
जानों इन्हें सामान्य गुण रक्खो सदा श्रद्धानमें ॥६॥

—ब्र० गुलाबचन्द जैन, सोनगढ़।

जैनधर्म और उसकी अहिंसा

(लेखक—पं० हुकमचन्द जैन "शान्त" ललोद)

जैन धर्मकी संसारको सबसे बड़ी देन अहिंसा ही है। यूँ तो प्रायः सभी मत मतान्तरोंने इसे अपनाया है किन्तु जैन धर्मकी देशनामें जिस साङ्गोपाङ्गतासे इसका वर्णन है प्रायः अन्यथा वैसा नहीं मिलता है। अहिंसा ही देश और जाति रक्षाका अनन्य कारण है, इसलिये प्रत्येक मानवको अपने जीवनमें इसकी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि जीवित रहनेके लिये जल, वायु, और अन्नकी।

राष्ट्रपिता पूज्य बापूने अहिंसाको अपने अखिल जीवनमें अपनाया और अहिंसाके बल पर ही भारतकी परतंत्रताको स्वतंत्रताका रूप दिलाया जो कि एक महा कठिन कार्य था। कुछ लोग अहिंसाको कायर वृत्ति भी कहते थे यहां तक कि देशकी गुलामीका कारण भी उक्त अहिंसा ही, किन्तु इन सभी बातोंको महात्मा गांधीने अहिंसा द्वारा ही भारतको स्वतन्त्र कर व्यर्थ सिद्ध कर दिया है।

कुछ लोग हिंसक वृत्ति धारण करने पर भी अपनेको अहिंसक मानते हैं, देवताओंको प्रसन्न करनेके लिये, अथवा यज्ञादिकोंमें जो हिंसा की जाती है वह हिंसा नहीं ऐसा मानते है इसका मुख्य कारण है कि उन्होंने अहिंसा तत्वको समझनेमें बड़ी भारी भूल की है इसीलिये हिंसामें अहिंसाको मान बैठे हैं।

श्रीमत्पूज्याचार्य अमृतचंद्रजीने पुरुषार्थ सिद्धयुपायमें हिंसा और अहिंसाका वर्णन निम्न प्रकार किया है :—

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति,
तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः॥

अर्थात् रागद्वेष क्रोधादि विकारभावोंका उत्पन्न न होना अहिंसा है और इन्हीं रागादि भावोंकी उत्पत्ति होना हिंसा है यही जिनागमका रहस्य है। सारांश यह है कि क्रोधादिभावोंके द्वारा अपने या दूसरोंके प्राणोंका घात करना हिंसा है, एवं अपने भावोंको शुद्ध रखते हुये दूसरोंकी रक्षाका ध्यान रखते हुये यत्नाचार पूर्वक किया गया कार्य अहिंसा है। यत्नाचार पूर्वक किये गये कार्यमें भले ही किसी जीवका वध हो जाय फिर भी वहां हिंसाका पाप नहीं लगता जैसे एक योग्य तपस्वी जो पांच समिति तीन गुप्ति और महाव्रतोंके धारी हैं, ईर्यापथ शुद्धिसे गमन कर रहे हैं फिर भी कोई सूक्ष्म जीव साधुके पैरके नीचे आकर मर जाता है तो वहां साधुको हिंसाका बन्ध नहीं होता क्योंकि साधुकी भावना जीवघात करनेकी नहीं थी। इसी प्रकार एक किसान सुबहसे लेकर शाम तक खेतमें हल चलाता है वहां हजारों जीवोंका वध होता है, और एक धीवर सुबहसे शाम तक मछली पकड़नेके अभिप्रायसे नदी या तालाबमें जाल डालता है, भाग्यसे एक भी मछली जालमें नहीं आती फिर भी वह धीवर महान हिंसाके पापसे लद जाता है और वह किसान हिंसा होने पर भी हिंसाके दोषसे बच जाता है। क्योंकि जैनधर्मकी अहिंसाकी नींव मनुष्यके सक्रिय प्रयत्न पर नहीं बल्कि भावोंकी शुद्धता और अशुद्धता पर निर्भर है।

स्वयंभूरमण समुद्रमें रहनेवाला महामत्स्य जो १००० योजन लम्बा होता है, उसका मुंह छह महीने तक खुला रहता है जिससे उसके मुंहमें अनेक जीव आतेजाते रहते हैं, उन जीवोंका इस प्रकार आना

जन्य देखकर (तन्दुलमच्छ) जो महामच्छके कानमें रहता है और जिसका शरीर चावल प्रमाण है। कानके मैलको खाकर ही जीवित रहता है, विचार करता है अहो यह महामच्छ कितना मूर्ख है, जो जीवोंको जिन्दा छोड़ देता है, यदि इसके स्थान पर मैं होता तो एकको भी जिन्दा न छोड़ता, सबको खा जाता, यह तन्दुल मच्छकर कुछ भी नहीं पाता किन्तु मात्र भावोंसे ही महान् हिंसाका बन्ध कर लेता है और मरकर सातवें नरकमें जाता है। जैन धर्मकी देशना भावोंपर ही तो है। भावोंके द्वारा ही स्वर्ग और नरककी प्राप्ति होती है।

सागारधर्मामृतमें आशाधरजीने कहा है—

भावो हि पुण्याय मतः शुभः पापाय चाशुभः।
तं दुष्यन्तमतो रक्षेद् धीरः समय भक्तितः॥

अर्थात्-शुभ परिणाम पुण्यबन्धके कारण और अशुभ परिणाम पापबन्धके कारण होते हैं।

यदि मनुष्य हिंसाके दोषोंसे बचना है तो उसका कर्तव्य है कि वह किसी भी प्राणीको किसी तरहसे कष्ट पहुंचानेका विचार नहीं करे, अपने समान ही संसारके अन्य प्राणियोंको माने "आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्"वाली नीतिको हृदयंगम कर लेनी चाहिए। इसी अभिप्रायको लेकर महापुरुषोंने "जिओ और जीने दो" "उठो और उठने दो" अर्थात् तुम बढ़ो किन्तु इस प्रकार बढ़ो कि दूसरोंको बाधा न होवे भी बढ़ सकें, किसीको बढ़नेसे रोको मत। आदि बातोंको मनुष्यके कर्तव्यके अन्दर बताया है, वस्तुतः मनुष्यकी मनुष्यता और नैतिकता यही है।

रागादि भाव हिंसाका मूल कारण परिग्रहवाद है, जिससे देखा, विश्वका कोई व्यक्ति अछूता नहीं बचा, प्रत्येककी नसरमें वह घुल चुका है, आपसी वैमनस्य संघर्ष और हिंसाका कारण परिग्रहवाद या उससे उत्पन्न रागादि भाव ही हैं। जैसा कि अमेरिकाके राष्ट्रपति श्री आइजनहोवरने अपने भाषणमें कहा और स्वीकार किया। उन्होंने स्पष्ट रूपसे कहा कि हिंसाके कारण बाह्य पदार्थ (शस्त्र) नहीं किन्तु मनुष्यके रागादिभाव हैं, यदि हम हिंसाके भाव न करें तो शस्त्रोंसे स्वयमेव हिंसा हो नहीं सकती, हम युद्धके भाव करते हैं तभी युद्ध होता है।

उपरोक्त कथनसे स्पष्ट है कि हिंसा और अहिंसा मनुष्यके सक्रिय प्रयत्न पर अवलम्बित नहीं बल्कि दुर्भावों और दुर्भावनापूर्ण कार्योंमें हिंसा एवं उनके अभाव अहिंसा निहित है।

॥ अहिंसा धर्मकी जय ॥

जैनमित्रके प्रति—

तुम विश्वके प्रांगणमें
उतरते ले नूतन सन्देश।
जगतके पीड़ित मानवको,
पिलाते तुम अमृत कर्णेश॥

तुमींसे यह तेरा उत्साह,
बनाता आया युग अनुकूल।
सुनाकर जीवनका सन्देश,
रहे किस भव-सागरमें डूब॥

दिया मानवको नव सन्देश,
रहे किस भव सागरमें डूब।
नहीं यह जीवनका कर्तव्य,
सुनाया है तुमने कर्णेश॥

बताया मुक्ति रमणिका सार,
दिया युगका नूतन सन्देश।
पढ़ाया मानवताका पाठ,
ग्रहण कर सन्मतिके सन्देश॥

—शीतलचन्द्र जैन "शरद" शाहपुरा।

नाम नूतन
कीर्ति सनातन
न्यू हडसन
हिन्दुस्तान वेहिकल्स लिमिटेड
पटना
बर्मिंहम स्मॉल आर्म्स कं० लिमिटेड,
यू० के० से टेक्निकल सहायता प्राप्त